श्रीवीतरागाय नमः

यति-क्रिया-मंजरी

अर्थात् महाव्रती और अणुव्रतीयों के दैनिक

नैमित्तिक समाचार क्रियाओंका

मूलाचार अनगारधर्मामृत चारित्रसार आचारसार

आदि पुरातन ऋषियों के ग्रंथानुसार

ब्र० सूरजमल जैन शास्त्री

द्वारा संग्रहीत

— :❀○—○❀: —

जिसको

श्री शांतिसागर जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी संस्था के

महामन्त्री

गृहविरत ब्रह्मचारी श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ ने

मुद्रक-सेठ हीरालालजी पाटणी निवाईवासी के संत्रित्व में

संस्था के पवित्र प्रेस में छपाकर प्रकाशित किया।

श्रावण वीर निर्वाण संवत् २४८८ अगस्त १९६२

प्रस्तावना

क्रिया-कलाप नामकी पुस्तक प० पन्नालालजी सोनी सिद्धांत शास्त्री ब्यावर वासी ने प्रकाशित कराई थी। उसमे संस्कृत व प्राकृत की सभी भक्तियां संस्कृत टीका सहित हैं। तथा नित्य नैमित्तिक क्रियाओं मे भक्तियों के करने की विधि अंत मे बतलाई है। श्री १०५ आर्यिका ज्ञानमती जी माताजी ने क्रियाओं की विधि के साथ ही साथ भक्ति पाठ का प्रयोग कर दिया है। इसलिये प्रयोग विधि हर एक साधु के लिये करने मे सरल हो जाती है। अतएव मैने इसका संग्रह कर प्रकाशित कराना उत्तम समझ कर इसमे प्रथम ही स्तोत्र संग्रह मिला कर प्रकाशित किया है। सहस्रनाम आदि विशेष २ स्तोत्रों के अनंतर उत्तर भाग में अनगार धर्मामृत के नवम अध्याय के आधार से साधुओं की नित्य नैमित्तिक क्रियाओंका वर्णन है। इसमे प्रथम ही पिछली रात्रि म सोकर उठने के बाद वैरात्रीक स्वाध्याय करे पुनः रात्री प्रतिक्रमण करके रात्रियोग निष्ठापन पूर्वक रात्र्यनुष्ठानकी समाप्ति करे। पुन जिन मन्दिर म जाकर विधिवत् चैत्य पंचगुरु भक्ति पूर्वक देव वंदना अर्थात् सामायिक पुनः गुरुवंदना पुनः पौर्वाह्निक स्वाध्याय मध्याह्न करके देव गुरु वंदना के नंतर आहार ग्रहण, प्रत्याख्यानग्रहण आदि करके अपराह्ण स्वाध्याय करे पुनः दैवसिक प्रतिक्रमण द्वारा दिवस संबंधी दोषों को दूर कर रात्रियोग ग्रहण पूर्वक दिवस संबंधी अनुष्ठान की समाप्ति करे। पुनः अपराह्निक देव वन्दना के बाद पूर्व रात्रिक स्वाध्याय करके अल्प निद्रा लेवे इसमे प्रातः सामायिक का काल अनगार धर्मामृत के आधार से सूर्योदय होने से दो घड़ी तक माना है पश्चात् सामायिक के बाद गुरु वंदना होती है तथैव मध्याह्न मे भी सामायिक के अनंतर विधिवत्त कृतिकम भक्ति गुरु एवं वंदना होती है तथा साय को प्रतिक्रमण के अनंतर

गुरु वंदना होती है ऐसे त्रिकाल देववंदना व गुरु वंदना तथा दैवसिक व रात्रिक प्रतिक्रमण तथा दिनमे दो बार तथा रात्रि में दो बार ऐसे चार बार स्वाध्याय करना व रात्रियोग ग्रहण तथा त्याग यह नित्य क्रियाये तथा अष्टम चतुर्दश आदि सम्बंधी नैमित्तिक क्रियाये है व दीक्षा विधि आदि है। प्रत्येक क्रियाओं में भक्ति पाठ आया है तो हर एक भक्ति एक २ बार ही आवे इसलिये दूसरी बार नहीं दी गई है तथा ईर्यापथ शुद्धि का दर्शन पाठ भी इसमे न आने से क्रियाओं के अन्त मे उसे दे दिया है व चारित्र भक्तिकी आलोचना (अंचलिका) भी क्रियाओं मे नहीं आई है अतः पृथक दे दी है तथैव बृहद् समाधि भक्ति व त्याग्रालोचना प्रायश्चित पाठ भी अन्त मे है व प्राकृत भक्ति स्वामी कुन्दकुन्दाचार्यकृत अलग अन्त में है। व देवबन्दना पुरानी जो हर एक हस्त लिखित क्रिया कलापो में पाई जाती है वह जिसकी प्रभाचन्द्राचार्य कृत संस्कृत टीका भी मिलती है वह मूल ज्यों की त्यो देदी है पं० पन्नालालजी ने जो पाठ कुछ अधिक २ समझ कर ईर्यापथ शुद्धि चैत्य पंचगुरुभक्ति मात्र निकाल कर पाठ करके क्रिया कलाप में प्रकाशित कराया है। वह भी ज्यों की त्यों प्रथम रख दी है। दोनों ही देव वंदना विधि का पाठ इस मे रख दिया गया है। व देव वंदना तथा सामायिक एक ही है इस प्रकरण मे आगम के प्रमाण भी दिये है व सिद्धात सूत्र के पढने के लिये दिक् शुद्धि आदि विधि भी बतलाई है। इसलिये मुख्यतया यह पुस्तक साधुओं के लिये अर्थात् मुनि, आर्यिका क्षुल्लक, ऐलक, क्षुल्लिकाओं के लिये ही उपयोगी है। साधु संयमी वर्गों को इसके द्वारा आगम कथित काल मे आगम विहीत विधि के अनुसार क्रिया करनेमें कुशल होना चाहिये। पाक्षिक प्रतिक्रमण गणधर वलय के करने का विधान है सो गणधर वलय "णमो जिनानं णमो औहि जिणाणं" आदि ही है परन्तु पं० पन्नालाल जी ने उसको पहले नहीं समझा अतः पूजाशास्त्र से लेकर गणधर

स्तुति "जिनान् जितो रात्रो गणान् गरिष्ठान्" और मिला दिया था सो यह पाठ अधिक होनेसे इसमें से निकाल दिया है।

निवेदक

ब्र० सूरजमल जैन

दिगम्बर जैनाचार्य शिवसागरजी संघस्थ

द्रव्य सहायकों के नाम

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में नीचे लिखे महानुभावों ने सहायता की है अतः धन्यवाद के पात्र हैं—

६०१) श्री अंगूरी बाई सुपुत्री सेठ जीवन लाल जी जैसवाल अजमेरने आर्यिका की दीक्षा लेते समय दिया।
२००) ब्रह्मचारिणी धूली बाई डेह (राजस्थान)
१०१) रतनी बाई फतेपुर ने क्षुल्लिका की दीक्षा लेते समय दिये
१५०) गुप्त दान
१०१) सेठ सुमेरमल जी चौधरी की धर्मपत्नी अजमेर (राज०)
१००) सेठ गुलाबचंद जी चांदमलजी पांड्या सुजानगढ
१०१) श्रीमती जी-जैन अगरवाल पो० टिकैतनगर
१०१) सुगुनी बाई, धर्मपत्नी-गुलाबचंद जी पहाड्या सुजानगढ
१००) श्री मैनाबाई सुपुत्री सेठ भंवरलालजी काला सुजानगढ
१२५) ब्रह्मचारिणी पार्वती बाई सुजानगढ
५३) सेठ महावीर प्रसाद जी मोहन लाल जैन बाराबंकी
२१) सेठ नत्थीलाल जी जैन जैसवाल अजमेर
१५) माता आदिमति जी के आहार की खुशी में दान

निवेदक

ब्र० श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ

महामंत्री—श्री शांतिसागरजैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था

शांतिवीर नगर, श्रीमहावीरजी (राजस्थान)

यतिक्रियामंजरी पूर्व भागकी पाठ सूची

क्रम पाठ पृष्ठ संख्या

यति-क्रिया-मंजरी उत्तरार्ध की

विषय सूची

क्रम	पाठ	पृष्ठ संख्या

❀ श्रीवीतरागाय नमः ❀

यति-क्रिया-मंजरी

पूर्व भाग

नमस्कार मन्त्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

मन्त्रं संसारसारं त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रं,
संसारोच्छेदमन्त्रं विषमविषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रम् ।
मन्त्रं सिद्धिप्रदानं शिवसुखजननं केवलज्ञानमन्त्रं ।
मन्त्रं श्रीजैनमन्त्रं जप जप जपितं जन्मनिर्वाणमन्त्रं । २ ।
आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यता-
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ।

स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनं,
पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ ३ ॥
अनन्तानन्तसंसार—सन्ततिच्छेदकारणम् ।
जिनराजपदाम्भोज—स्मरणं शरणं मम ॥ ४ ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥ ५ ॥
न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेस्तु भवे भवे ॥ ७ ॥

भूतकालतीर्थंकराः

१ श्रीनिर्वाण २ सागर ३ महासाधु ४ विमलप्रभ ५ श्रीधर ६ सुदत्त ७ अमलप्रभ ८ उद्धर ९ अंगिर १० सन्मति ११ सिंधु १२ कुसुमांजलि १३ शिवगण १४ उत्साह १५ ज्ञानेश्वर १६ परमेश्वर १७ विमलेश्वर १८ यशोधर १९ कृष्णमति २० ज्ञानमति २१ शुद्धमति २२ श्रीभद्र २३ अतिक्रांत २४ शांताश्चेति भूतकाल-सम्बन्धिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ॥

वर्तमानकालतीर्थंकराः

१ ऋषभ २ अजित ३ शम्भव ४ अभिनन्दन ५ सुमति

६ पद्मप्रभ ७ सुपार्श्व ८ चंद्रप्रभ ६ पुष्पदंत १० शीतल ११ श्रेयान् १२ वासुपूज्य १३ विमल १४ अनंत १५ धर्म १६ शांति १७ कुन्थु १८ अर १६ मल्लि २० मुनिसुव्रत २१ नमि २२ नेमि २३ पार्श्व २४ वर्द्धमानाश्चेति वर्तमानकालसम्बन्धिचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमो नमः

भविष्यत्कालतीर्थकराः ।

१ श्रीमहापद्म २ सुरदेव ३ सुपार्श्व ४ स्वयंप्रभ ५ सर्वात्मभूत ६ देवपुत्र ७ कुलपुत्र ८ उदंक ६ प्रोष्ठिल १० जयकीर्ति ११ मुनिसुव्रत १२ अर (अमम) १३ निष्पाप १४ निष्कषाय १५ विमल १६ निर्मल १७ चित्रगुप्त १८ समाधिगुप्त १६ स्वयंभू २० अनिवृत्तिक २१ जय २२ विमल २३ देवपाल २४ अनन्तवीर्यश्चेति भविष्यत्काल सम्बन्धिचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमो नमः ॥

विदेहक्षेत्रस्थविंशतितीर्थकराः

१ सीमंधर २ युग्मधर ३ बाहु ४ सुबाहु ५ सुजात ६ स्वयम्प्रभु ७ वृषभानन ८ अनन्तवीर्य ६ सूरप्रभ १० विशालकीर्ति ११ वज्रधर १२ चंद्रानन १३ भद्रबाहु १४ भुजंगम १५ ईश्वर १६ नेमप्रभ (नमि) १७ वीरषेण १८ महाभद्र १६ देवयश २० अजितवीर्यश्चेति विदेहक्षेत्रस्थ विंशतितीर्थकरेभ्यो नमो नमः ॥

बृहत्स्वयंभूस्तोत्र

स्वयम्भुवा भूतहितेन भूतले समञ्जसज्ञानविभूतिचक्षुषा विराजितं येन विधुन्वता तमः क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ।१। प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषूः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः । प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः २ विहाय यः सागरवारिवाससं वधूमिवेमां वसुधावधूं सतीम् । मुमुक्षुरिक्ष्वाकुकुलादिरात्मवान् प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः ॥३॥ स्वदोषमूलं स्वसमाधितेजसा निनाय यो निर्दयभस्मसात्क्रियाम् । जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ॥४॥ स विश्वचक्षुर्वृषभोऽर्चितः सतां समग्रविद्यात्मवपुर्निरंजनः । पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो जिनो जितक्षुल्लकवादिशासनः ५

इत्यादिजिनस्तोत्रम् ॥१॥

यस्य प्रभावात्त्रिदिवच्युतस्य क्रीडास्वपि क्षीबमुखारविन्दः अजेयशक्तिर्भुवि बन्धुवर्गश्चकार नामाजित इत्यवन्ध्यम् ६ अद्यापि यस्याजितशासनस्य सतां प्रणेतुः प्रतिमङ्गलार्थम् । प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं स्वसिद्धिकामेन जनेन लोके ।७। यः प्रादुरासीत्प्रभुशक्तिभूम्ना भव्याशयालीनकलङ्कशान्त्यै महामुनिर्मुक्तघनोपदेहो यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ८ येन प्रणीतं पृथुधर्मतीर्थं ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम्

गाङ्गं ह्रदं चन्दनपङ्कशीतं गजप्रवेका इव घर्मतप्ताः ॥ ९ ॥
स ब्रह्मनिष्ठः सममित्रशत्रुर्विद्याविनिर्वान्तकषायदोषः ।
लब्धात्मलक्ष्मीरजितोऽजितात्मा जिनः श्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ॥ १० ॥

इत्यजितजिनस्तोत्रम् ॥२॥

त्वं शम्भवः संभवतर्षरोगैः संतप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो वैद्यो यथा नाथ रुजां प्रशान्त्यै
अनित्यमत्राणमहंक्रियाभिः प्रसक्तमिथ्याध्यवसायदोषम् ।
इदं जगज्जन्मजरान्तकार्तं निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम्
शतह्रदोन्मेषचलं हि सौख्यं तृष्णामयाप्यायनमात्रहेतुः ।
तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं तापस्तदायासयतीत्यवादीः १३
बंधश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतुर्बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं नैकान्तदृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ॥१४॥ शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्त्तेः स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः । तथापि भक्त्या स्तुतपादपद्मो ममार्य देयाः शिवतातिमुच्चैः ॥१५॥

इति शंभवजिनस्तोत्रम् ॥३॥

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान् दयावधूं क्षान्तिसखीम-शिश्रियत् । समाधितन्त्रस्तदुपोपपत्तये द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायुजत् ॥ १६ ॥ अचेतने तत्कृतबन्धजेऽपि ममेदमित्या-

मिनिवेशकग्रहात् । प्रभङ्गुरे स्थावरनिश्चयेन च क्षतं जगत्त-
त्त्वमजिग्रहद्भवान् ॥१७॥ क्षुदादिदुःखप्रतिकारतः स्थितिर्न
चेन्द्रियार्थप्रभवाल्पसौख्यतः । ततो गुणो नास्ति च देह-
देहिनोरितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ॥ १८ ॥ जनोऽ-
तिलोलोऽप्यनुबन्धदोषतो भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।
इहाप्यमुत्राप्यनुबन्धदोषवित्कथं सुखे संसजतीति चाब्रवीत्
॥ १९ ॥ स चानुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्तृषोऽभिवृद्धिः
सुखतो न च स्थितिः । इति प्रभो ! लोकहितं यतो मतं ततो
भवानेव गतिः सतां मतः ॥ २० ॥

इत्यभिनन्दनजिनस्तोत्रम् ॥ ४ ॥

अन्वर्थसंज्ञः सुमतिर्मुनिस्त्वं स्वयं मतं येन सुयुक्तिनीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति सर्वक्रियाकारकतत्त्वसिद्धिः २१
अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं भेदान्वयज्ञानमिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे तच्छेषलोपोऽपि ततोऽनुपाख्यं ॥
सतः कथंचित्तदसत्त्वशक्तिः खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम्
सर्वस्वभावच्युतमप्रमाणं स्ववाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ॥
न सर्वथानित्यमुदेत्यपैति न च क्रियाकारकमत्र युक्तम् ।
नैवासतो जन्म सतो न नाशो दीपस्तमःपुद्गलभावतोऽस्ति
विधिर्निषेधश्च कथंचिदिष्टौ विवक्षया मुख्यगुणव्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं मतिप्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ।२५।

इति सुमतिजिनस्तोत्रम् ॥ ५ ॥

पद्मप्रभः पद्मपलाशलेश्यः पद्मालयालिङ्गितचारुमूर्तिः ।
बभौ भवान् भव्यपयोरुहाणां पद्माकराणामिव पद्मबन्धुः ।।
बभार पद्मां च सरस्वतीं च भवान्पुरस्तात्प्रतिमुक्तिलक्ष्म्याः
सरस्वतीमेव समग्रशोभां सर्वज्ञलक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ।।
शरीररश्मिप्रसरः प्रभोस्ते बालार्करश्मिच्छविरालिलेप ।
नरामराकीर्णसभां प्रभावच्छैलस्य पद्माभमणेः स्वसानुम् ।।
नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं सहस्रपत्राम्बुजगर्भचारैः ।
पादाम्बुजैः पातितमोहदर्पो भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै ।।
गुणाम्बुधेर्विप्रुषमप्यजस्रं नाखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः ।
प्रागेव मादृक्किमुतातिभक्तिर्मां बालमालापयतीदमित्थम् ।।

इति पद्मप्रभस्तोत्रम् ।।६।।

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पुंसां स्वार्थो न भोगः परिभंगुरात्मा । तृषोऽनुषङ्गान्न च तापशांतिरितीदमाख्यद्भगवान् सुपार्श्वः ।। २१ ।। अजङ्गमं जङ्गमनेययन्त्रं यथा तथा जीवधृतं शरीरम् । बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः ।२२। अलंघ्यशक्तिर्भवितव्यतेयं हेतुद्वयाविष्कृतकार्यलिङ्गा अनीश्वरो जन्तुरहंक्रियार्त्तः संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ।२३। बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो नित्यं शिवं वांछति नास्य लाभः । तथापि बालो भयकामवश्यो वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ।।२४।। सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता मातेव बालस्य हितानु–

शास्ता । गुणावलोकस्य जनस्य नेता मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ॥३५॥

इति सुपार्श्वजिनस्तोत्रम् ॥७॥

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं जिनं जितस्वान्तकषायबन्धम्
यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेषभिन्नं तमस्तमोरेरिव रश्मिभिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च ध्यानप्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥
स्वपक्षसौस्थित्यमदावलिप्ता वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डा गजा यथा केशरिणो निनादैः
यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाद्भुतकर्मतेजाः ।
अनन्तधामाक्षरविश्वचक्षुः समस्तदुःखक्षयशासनश्च । ३९ ।
स चन्द्रमा भव्यकुमुद्वतीनां विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेपः ।
व्याकोशवाङ् न्यायमयूखमालः पूयात् पवित्रो भगवान्मनो मे

इति चन्द्रप्रभजिनस्तोत्रम् ॥८॥

एकान्तदृष्टिप्रतिषेधि तत्त्वं प्रमाणसिद्धं तदतत्स्वभावम् ।
त्वया प्रणीतं सुविधे ! स्वधाम्ना नैतत्समालीढपदं त्वदन्यैः
तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्तथा प्रतीतेस्तव तत्कथंचित्
नात्यन्तमन्यत्वमनन्यता च विधेर्निषेधस्य च शून्यदोषात् ॥
नित्यं तदेवेदमिति प्रतीतेन नित्यमन्यत्प्रतिपत्तिसिद्धेः ।
न तद्विरुद्धं बहिरन्तरङ्गनिमित्तनैमित्तिकयोगतस्ते ॥४३॥
अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं वृक्षा इति प्रत्ययवत्प्रकृत्या

आकांक्षिणः स्यादिति वै निपातो गुणानपेक्षे नियमेऽपवादः
गुणप्रधानार्थमिदं हि वाक्यं जिनस्य ते तद्द्विषतामपथ्यम्
ततोऽभिवन्द्यं जगदीश्वराणां ममापि साधोस्तव पादपद्मम्

इति सुविधिजिनस्तोत्रम् । ९ ।

न शीतलाश्चन्दनचन्द्ररश्मयो न गाङ्गमम्भो न च हारय-
ष्टयः । यथा मुनेस्तेऽनघवाक्यरश्मयःशमाम्बुगर्भाःशिशि-
रा विपश्चितां ॥ सुखाभिलाषानलदाहमूर्च्छितं मनो निजं
ज्ञानमयामृताम्बुभिः । विदिध्यपस्त्वं विषदाहमोहितं यथा
भिषग्मन्त्रगुणैःस्वविग्रहं ॥ स्वजीविते कामसुखे च तृष्णया
दिवा श्रमार्त्ता निशि शेरते प्रजाः । त्वमार्य्य नक्तंदिव-
मप्रमत्तवानजागरेवात्मविशुद्धवर्त्मनि ॥ ८ ॥ अपत्यवित्तोत्त-
रलोकतृष्णया तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते । भवान्पुनर्ज-
न्मजराजिहासया त्रयीं प्रवृत्तिं शमधीरवारुणत् ॥ ४९ ॥
त्वमुत्तमज्योतिरजः क निर्वृतः क ते परे बुद्धिलवोद्धवक्षताः
ततः स्वनिश्रेयसभावनापरैर्बुधप्रवेकैर्जिनशीतलेड्यसे ५०

इति शीतलजिनस्तोत्रम् । १० ।

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः श्रेयःप्रजाःशासदजेयवाक्यं
भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्नेको यथा वीतघनो विव-
स्वान् ५१ विधिर्विषक्तप्रतिषेधरूपः प्रमाणमत्रान्यतरत्प्र-
धानम् । गुणो परो मुख्यनियामहेतुर्नयः सदृष्टांतसमर्थनस्ते

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो गुणो विवक्षो न निरात्मकस्ते। तथारिमित्रानुभयादिशक्तिर्द्वयावधिः कार्य्यकरं हि वस्तु ॥ दृष्टांतसिद्धावुभयोर्विवादे साध्यं प्रसिद्ध्येन्न तु तादृगस्ति। यत्सर्वथैकान्तनियामदृष्टं त्वदीयदृष्टिर्विभवत्यशेषे॥ ५४ ॥ एकान्तदृष्टिप्रतिषेधसिद्धिर्न्यायेषुभिर्मोहरिपुं निरस्य । असि स्म कैवल्यविभूतिसम्राट् ततस्त्वमर्हन्नसि मे स्तवार्हः ॥५५ ॥

इति श्रेयोजिनस्तोत्रम ॥ ११ ॥

शिवासु पूज्योऽभ्युदयक्रियासु त्वं वासुपूज्यस्त्रिदशेन्द्रपूज्यः मयापि पूज्योऽल्पधिया मुनीन्द्र दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्य न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवान्तवैरे । तथापि ते पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनातु चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः ॥ पूज्यं जिनं त्वार्चयतो जनस्य सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ । दोषाय नालं कणिका विषस्य न दूषिका शीतशिवाम्बुराशौ यद्वस्तु बाह्यं गुणदोषसूतेर्निमित्तमभ्यन्तरमूलहेतोः । अध्यात्मवृत्तस्य तदङ्गभूतमभ्यन्तरं केवलमप्यलं ते ॥ ५६॥ बाह्येतरोपाधिसमग्रतेयं कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः । नैवान्यथामोक्षविधिश्च पुंसां तेनाभिवन्द्यस्त्वमृषिर्बुधानाम्

इति वासुपूज्यजिनस्तोत्रम् ॥ १२ ॥

य एव नित्यक्षणिकादयोनयामिथोऽनपेक्षाः स्वपरप्रणाशिनः त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः परस्परेक्षाः स्वपरोपकारिणः ।

यथैकशः कारकमर्थसिद्धये समीक्ष्य शेषं स्वसहायकारकम् तथैव सामान्यविशेषमातृका नयास्तवेष्टा गुणमुख्यकल्पतः परस्परेक्षान्वयभेदलिङ्गतः प्रसिद्ध सामान्यविशेषयोस्तव । समग्रतास्ति स्वपरावभासकं यथा प्रमाणं भुवि बुद्धिलक्षणम् विशेषवाच्यस्य विशेषणं वचो यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत् । तयोश्च सामान्यमतिप्रसज्यते विवक्षितात्स्या-दिति तेऽन्यवर्जनम् ॥ ६४ ॥ नयास्तव स्यात्पदसत्यलांछिता रसोपविद्धा इव लोहधातवः । भवन्त्यभिप्रेतगुणा यतस्ततो भवन्तमार्याः प्रणता हितैषिणः ॥ ६५ ॥

इति विमलजिनस्तोत्रम ॥ १३ ॥

अनन्तदोषाशयविग्रहो ग्रहो विषङ्गवान्मोहमयश्चिरं हृदि । यतो जितस्तत्त्वरुचौ प्रसीदता त्वया ततोभूर्भगवाननन्तजित् ६६ कषायनाम्नां द्विषतां प्रमाथिनामशेषयन् नाम भवानशेषवित् । विशोषणं मन्मथदुर्मदामयं समाधिभैष-ज्यगुणैर्व्यलीनयत् ॥ परिश्रमाम्बुर्भयवीचिमालिनी त्वया स्वतृष्णासरिदार्य शोषिता । असंगघर्मार्कगभस्तितेजसा परं ततो निर्वृतिधाम तावकम् ॥ सुहृत्त्वयि श्री सुभगत्व-मश्नुते द्विषंस्त्वयि प्रत्ययवत्प्रलीयते भवानुदासीनत-मस्तयोरपि प्रभो परं चित्रमिदं तवेहितम् ६९ ॥ त्वमीदृश-स्तादृश इत्ययं मम प्रलापलेशोऽल्पमतेर्महामुने । अशेष-माहात्म्यमनीरयन्नपि शिवाय संस्पर्श इवामृताम्बुधेः ॥

इत्यनन्तजिनस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

धर्मतीर्थमनघं प्रवर्त्तयन् धर्म इत्यनुमतः सतां भवान् ।
कर्मकक्षमदहत्तपोऽग्निभिः शर्म शाश्वतमवाप शङ्करः ॥७१॥
देवमानवनिकायसत्तमै रेजिषे परिवृतो वृतो बुधैः ।
तारकापरिवृतोऽतिपुष्कलो व्योमनीव शशलांछनोऽमलः ॥
प्रातिहार्यविभवैः परिष्कृतो देहतोऽपि विरतो भवानभूत् ।
मोक्षमार्गमशिषन्नरामरान्नपि शासनफलैषणातुरः ॥७३ ॥
कायवाक्यमनसां प्रवृत्तयो नाऽभवंस्तव मुनेश्चिकीर्षया ।
नासमीक्ष्य भवतः प्रवृत्तयो धीर तावकमचिन्त्यमीहितम् ॥
मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान् देवतास्वपि च देवता यतः
तेन नाथ परमासि देवता श्रेयसे जिनवृष प्रसीद नः ॥७५ ॥

इति धर्मजिनस्तोत्रम् ॥ १५ ॥

विधाय रक्षां परतः प्रजानां राजा चिरं यो ऽप्रतिमप्रतापः । व्यधात्पुरस्तात्स्वत एव शान्तिर्मुनिर्दयामूर्त्तिरिवाघशान्तिम् ॥ चक्रेण यः शत्रुभयंकरेण जित्वा नृपः सर्वनरेन्द्रचक्रम् । समाधिचक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोहचक्रम् ॥ ७७ ॥ राजश्रिया राजसु राजसिंहो रराज यो राजसु भोगतन्त्रः । आर्हन्त्यलक्ष्म्या पुनरात्मतन्त्रो देवासुरोदारसभे रराज ॥ ७८ ॥ यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौ दयादीधितिधर्मचक्रम् । पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देवचक्रं,

ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्तचक्रम् ।। स्वदोषशान्त्या विहि - तात्मशान्तिः शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम् । भूयाद्भव- क्लेशभयोपशान्त्यै शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः ८०

इति शान्तिजिनस्तोत्रम् ॥ १६ ॥

कुन्थुप्रभृत्यखिलसत्त्वदयैकतानः,

कुन्थुर्जिनो ज्वरजरामरणोपशान्त्यै ।

त्वं धर्मचक्रमिह वर्त्तयसि स्म भूत्यै,

भूत्वा पुरा क्षितिपतीश्वरचक्रपाणिः ॥ ८१ ॥

तृष्णार्चिषः परिदहन्ति न शान्तिरासा-

मिष्टेन्द्रियार्थविभवैः परिवृद्धिरेव ।

स्थित्यैव कायपरितापहरं निमित्त-

मित्यात्मवान्विषयसौख्यपराङ्मुखोऽभूत् ॥ ८२ ॥

बाह्यं तपः परमदुश्चरमाचरंस्त्व-

माध्यात्मिकस्य तपसः परिबृंहणार्थम् ।

ध्यानं निरस्य कलुषद्वयमुत्तरेऽस्मिन्

ध्यानद्वये ववृतिषेऽतिशयोपपन्ने ॥ ८३॥

हुत्वा स्वकर्मकटुकप्रकृतीश्चतस्रो

रत्नत्रयातिशयतेजसि जातवीर्य्यः ।

विभ्राजिषे सकलवेदविधेर्विनेता

व्यभ्रे यथा वियति दीप्तरुचिर्विवस्वान् ॥ ८४ ॥

यस्मान्मुनीन्द्र तव लोकपितामहाद्या
विद्याविभूतिकणिकामपि नाप्नुवन्ति ।
तस्माद्भवन्तमजमप्रतिमेयमार्याः
स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः स्वहितैकतानाः ॥ ८५ ॥

इति कुन्थुजिनस्तोत्रम् ॥ १७ ॥

गुणस्तोकं सदुल्लंघ्य तद्बहुत्वकथा स्तुतिः ।
आनन्त्यात्ते गुणा वक्तुमशक्यास्त्वयि सा कथम् ॥ ८६ ॥
तथापि ते मुनीन्द्रस्य यतो नामापि कीर्तितम् ।
पुनाति पुण्यकीर्तेर्नस्ततो ब्रूयाम किंचन ॥ ८७ ॥
लक्ष्मीविभवसर्वस्वं मुमुक्षोश्चक्रलांछनम् ।
साम्राज्यं सार्वभौमं ते जरत्तृणमिवाभवत् ॥ ८८ ॥
तव रूपस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा तृप्तिमनापिवान् ।
द्व्यक्षः शक्रः सहस्राक्षो बभूव बहुविस्मयः ॥ ८९ ॥
मोहरूपो रिपुः पापः कषायभटसाधनः ।
दृष्टिसम्पदुपेक्षास्त्रैस्त्वया धीर पराजितः ॥ ९० ॥
कन्दर्पस्योद्धरो दर्पस्त्रैलोक्यविजयार्जितः ।
ह्रेपयामास तं धीरे त्वयि प्रतिहतोदयः ॥ ९१ ॥
आयत्यां च तदात्वे च दुःखयोनिर्निरुत्तरा ।
तृष्णानदी त्वयोत्तीर्णा विद्यानावा विविक्तया ॥ ९२ ॥
अन्तकः क्रन्दको नृणां जन्मज्वरसखा सदा ।

त्वामन्तिकान्तकं प्राप्य व्यावृत्ताः कामकारतः ॥ ९३ ॥
भूषावेषायुधत्यागि विद्यादमदयापरम् ।
रूपमेव तवाचष्टे धीर दोषविनिग्रहम् ॥ ९४ ॥
समन्ततोऽङ्गभासां ते परिवेषेण भूयसा ।
तमो बाह्यमपाकीर्णमध्यात्मध्यानतेजसा ॥ ९५ ॥
सर्वज्ञज्योतिषोद्भूतस्तावको महिमोदयः ।
कं न कुर्यात् प्रणम्रं ते सत्त्वं नाथ सचेतनम् ॥ ९६ ॥
तव वागमृतं श्रीमत्सर्वभाषास्वभावकम् ।
प्रीणयत्यमृतं यद्वत् प्राणिनो व्यापि संसदि ॥ ९७ ॥
अनेकान्तात्मदृष्टिस्ते सती शून्यो विपर्ययः ।
ततः सर्वं मृषोक्तं स्यात्तदयुक्तं स्वघाततः ॥ ९८ ॥
ये परस्खलितोन्निद्राः स्वदोषेभनिमीलिनः ।
तपस्विनस्ते किं कुर्युरपात्रं त्वन्मतश्रियः ॥ ९९ ॥
ते तं स्वघातिनं दोषं शमीकर्त्तुमनीश्वराः ।
त्वद्द्विषः स्वहनो बालास्तत्त्वावक्तव्यतां श्रिताः ॥१००॥
सदेकनित्यवक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।
सर्वथेति प्रदुष्यन्ति पुष्यन्ति स्यादितीहिते ॥ १०१ ॥
सर्वथा नियमत्यागी यथादृष्टमपेक्षकः ।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये नान्येषामात्मविद्विषाम् ॥१०२॥
अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाणनयसाधनः ।
अनेकान्तः प्रमाणात्ते तदेकान्तोऽर्पितान्नयात् ॥ १०३ ॥

इति निरुपमयुक्तिशासनः प्रियहितयोगगुणानुशासनः ।
अरजिनदमतीर्थनायकस्त्वमिव सतां प्रतिबोधनायकः
मतिगुणविभवानुरूपतस्त्वयि वरदागमदृष्टिरूपतः ।
गुणकृशमपि किंचनोदितं मम भवताद्दुरिताशनोदितम्

इत्यरजिनस्तोत्रम् ॥ १८ ॥

यस्य महर्षेः सकलपदार्थप्रत्यवबोधः समजनि साक्षात् ।
सामरमर्त्यं जगदपि सर्वं प्राञ्जलिभूत्वा प्रणिपततिस्म ॥
यस्य च मूर्तिः कनकमयीव स्वस्फुरदाभाकृतपरिवेषा ॥
वागपि तत्त्वं कथयितुकामा स्यात्पदपूर्वा रमयति साधून् ।
यस्य पुरस्ताद्विगलितमाना न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते
भूरपि रम्या प्रतिपदमासीज्जातविकोशाम्बुजमृदुहासा ॥
यस्य समन्ताज्जिनशिशिरांशोः शिष्यकसाधुग्रहविभवोभूत् ।
तीर्थमपि स्वं जननसमुद्रत्रासितसत्त्वोत्तरणपथोऽग्रम् ।
यस्य च शुक्लं परमतपोऽग्निर्ध्यानमनन्तं दुरितमधाक्षीत्
तं जिनसिंहं कृतकरणीयं मल्लिमशल्यं शरणमितोस्मि ।

इति मल्लिजिनस्तोत्रम् ॥ १९ ॥

अधिगतमुनिसुव्रतस्थितिर्मुनिवृषभो मुनिसुव्रतोऽनघः ।
मुनिपरिषदि निर्बभौ भवानुडुपरिषत्परिवीतसोमवत् ॥ १११
परिणतशिखिकण्ठरागया कृतमदनिग्रहविग्रहाभया ।
तव जिन तपसः प्रसूतया ग्रहपरिवेषरुचेव शोभितम् ॥
शशिरुचिशुचिशुक्ललोहितं सुरभितरं विरजो निजं वपुः ।

तव शिवमतिविस्मयं यते यदपि च वाङ्मनसोऽयमीहितम्।।
स्थितिजननिरोधलक्षणं चरमचरं च जगत्प्रतिक्षणम्
इति जिन सकलज्ञलाञ्छनं वचनमिदं वदतां वरस्य ते ।
दुरितमलकलंकमष्टकं निरुपमयोगबलेन निर्दहन् ।
अभवदभवसौख्यवान् भवान् भवतु ममापि भवोपशांतये ।

इति मुनिसुव्रतजिनस्तोत्रम् ।। २० ।।

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशलपरिणामाय स तदा,
भवेन्मा वा स्तुत्यः फलमपि ततस्तस्य च सतः ।
किमेवं स्वाधीनाज्जगति सुलभे श्रायसपथे,
स्तुयान्न त्वा विद्वान्सततमपि पूज्यं नमिजिनम् ।।
त्वया धीमन् ब्रह्मप्रणिधिमनसा जन्मनिगलं,
समूलं निर्भिन्नं त्वमसि विदुषां मोक्षपदवी ।
त्वयि ज्ञानज्योतिर्विभवकिरणैर्भाति भगवन्
अभूवन् खद्योता इव शुचिरवावन्यमतयः ।। ११७ ।।
विधेयं वार्यं चानुभयमुभयं मिश्रमपि तत्,
विशेषैः प्रत्येकं नियमविषयैश्चापरिमितैः ।
सदान्योन्यापेक्षैः सकलभुवनज्येष्ठगुरुणा,
त्वया गीतं तत्त्वं बहुनयविवक्षेतरवशात् ।। ११८ ।।
अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं,
न सा तत्रारम्भोस्त्यणुरपि च यत्राश्रमविधौ ।
ततस्तत्सिद्ध्यर्थं परमकरुणो ग्रन्थमुभयं,

भवानेवात्यागीन्न च विकृतवेषोपधिरतः ॥११६॥
वपुर्भूषावेषव्यवधिरहितं शान्तिकरणं,
यतस्ते संचष्टे स्मरशरविषातंकविजयम् ।
विना भीमैः शस्त्रैरदयहृदयामर्षविलयं,
ततस्त्वं निर्मोहः शरणमसि नः शान्तिनिलयः ॥

इति नमिजिन स्तोत्रम् ॥ २१ ॥

भगवानृषिः परमयोगदहनहुतकल्मषेन्धनः ।
ज्ञानविपुलकिरणैः सकलं प्रतिबुद्ध्य बुद्धकमलायतेक्षणः ॥
हरिवंशकेतुरनवद्यविनयदमतीर्थनायकः ।
शीलजलधिरभवो विभवस्त्वमरिष्टनेमिजिनकुञ्जरोऽजरः ॥
त्रिदशेन्द्रमौलिमणिरत्नकिरणविसरोपचुम्बितम् ।
पादयुगलममलं भवतो विकसितकुशेशयदलारुणोदरम् ॥
नखचन्द्ररश्मिकवचातिरुचिरशिखराङ्गुलिस्थलम् ।
स्वार्थनियतमनसः सुधियः प्रणमन्ति मन्त्रमुखरा महर्षयः ॥
द्युतिमद्रथाङ्गरविबिम्बकिरणजटिलांशुमण्डलः ।
नीलजलजदलराशिवपुः सह बन्धुभिर्गरुडकेतुरीश्वरः ॥
हलभृच्च ते स्वजनभक्तिमुदितहृदयौ जनेश्वरौ ।
धर्मविनयरसिकौ सुतरां चरणारविन्दयुगलं प्रणेमतुः ॥
ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः ।
मेघपटलपरिवीततटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ॥
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च सततमभिगम्यतेऽद्य च ।

प्रीतिनिततहृदयैः परितो भृशमूर्जयन्न्नु इति विश्रुतोऽचल :
बहिन्तरप्युभयथा च करणमविघाति नार्थकृत् ।
नाथ युगपदखिलं च सदा त्वमिदं तलामलकवद्विवेदिथ ॥
अत एव ते बुधनुतस्य चरितगुणमद्भुतोदयम् ।
न्यायविहितमवधार्य जिने त्वयि सुप्रसन्नमनसः स्थिता वयं

इत्यरिष्टनेमिजिनस्तोत्रम् ॥ २२॥

तमालनीलैः सधनुस्तडिद्गुणैः प्रकीर्णभीमाशनिवायुवृष्टिभि
वलाहकैर्वैरिवशैरुपद्रुतो महामना यो न चचाल योगतः ।
बृहत्फणामंडलमण्डपेन यं स्फुरत्तडित्पिङ्गरुचोपसर्गिणम् ।
जुगूह नागो धरणो धराधरं विरागसन्ध्यातडिदम्बुदो यथा॥
स्वयोगनिस्त्रिंशनिशातधारया निशात्य यो दुर्जयमोहविद्विष
अवापदार्हन्त्यमचिन्त्यमद्भुतं त्रिलोकपूजातिशयास्पदं पदम्
यमीश्वरं वीक्ष्य विधूतकल्मषं तपोधनास्तेऽपि तथा बुभूषवः
वनौकसः स्वश्रमवन्ध्यबुद्धयः शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे ॥
स सत्यविद्यातपसां प्रणायकः समग्रधीरुग्रकुलाम्बरांशुमान्
मया सदा पार्श्वजिनःप्रणम्यते विलीनमिथ्यापथदृष्टिविभ्रमः

इति पार्श्वजिनस्तोत्रम् ॥ २३ ॥

कीर्त्या भुवि भासि तया वीर त्वं गुणसमुच्छ्रया भासितया
भासोडुसभासितया सोम इव व्योम्नि कुन्दशोभासितया
तव जिन शासनविभवो जयति कलावपि गुणानुशासन-

विभवः । दोषकशामनविभवः स्तुवंति चेदं प्रभाकृ-शामन विभवः ॥ १३७ ॥ अनवद्यः स्याद्वादस्तव दृष्टेष्टाविरोधतः स्याद्वादः । इतरो न स्याद्वादो सद्वितयविरोधान्मुनीश्वराऽस्याद्वादः ॥ १३८ ॥ त्वमसि सुरासुरमहितो ग्रन्थिकसत्त्वाशयप्रणामामहितः । लोकत्रयपरमहितोऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलद्धामहितः ॥ १३९ ॥ सभ्यानामभिरुचितं दधासि गुणभूषणं श्रिया चारुचितम् । मग्नं स्वस्यां रुचिरं जयसि च मृगलाञ्छनं स्वकान्त्या रुचितम् ।१४०। त्वं जिन गतमदमायस्तव भावानां मुमुक्षुकामदमायः । श्रेयान् श्रीमदमायस्त्वया समादेशि सप्रयामदमायः २४१ गिरभित्त्यवदानवतः श्रीमत इव दन्तिनः स्रवद्दानवतः तव शमवद्दानवतो गतमूर्जितमपगतप्रमादानवतः १४२ बहुगुणसंपदसकलं परमतमपि मधुरवचनविन्याससकलम् । नयभक्त्यवतंसकलं तव देव मतं समन्तभद्रं सकलम्

इति वीरजिनस्तोत्रम् ॥ २४॥

यो निःशेषजिनोक्तधर्मविषयः श्रीगौतमाद्यैः कृतः,
सूक्तार्थैरमलैः स्तवोऽयमसमः स्वल्पैः प्रसन्नैः पदैः ।
तद्व्याख्यानमदो यथावगतः किञ्चित्कृतं लेशतः,
स्थेयांश्चन्द्रदिवाकरावधि बुधप्रह्लादचेतस्यलम् ॥ १ ॥

इति बृहत्स्वयंभूस्तोत्रं समाप्तम्

श्रीजिनसेनाचार्यकृतं

जिनसहस्रनामस्तोत्रम्

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूतवृत्तयेऽचिंत्यवृत्तये ॥ १ ॥
नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥
कामशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमन्सुरेण्मौलिभालाभ्यर्चितक्रमम् ॥ ३ ॥
ध्यानद्रुघणनिर्भिन्नघनघातिमहातरुः ।
अनंतभवसन्तानजयादासीदनन्तजित् ॥ ४ ॥
त्रैलोक्यनिर्जयावाप्तदुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन ! मृत्युंजयो भवान् ॥ ५ ॥
विधूताशेषसंसारबन्धनो भव्यबांधवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमेवासि जन्ममृत्युजरान्तकृत् ॥ ६ ॥
त्रिकालविषयाशेषतत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः ॥ ७ ॥
त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्मोहान्धासुरमर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥ ८ ॥
शिवः शिवपदाध्यासाद् दुरितारिहरो हरः ।
शंकरः कृतशं लोके शंभवस्त्वं भवन्सुखे ॥ ९ ॥
वृषभोऽसिजगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरुगुणोदयैः ।
नाभेयो नाभिसंभूतेरिक्ष्वाकुकुलनंदनः ॥ १० ॥

त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोकस्य लोचन ।
त्वं त्रिधाबुद्धसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञानधारकः ॥ ११ ॥
चतुश्शरणमांगल्यमूर्तिस्त्वं चतुरः सुधीः ।
पञ्चब्रह्ममयो देवः पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥ १२ ॥
स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्यो जातात्मने नमः ।
जन्माभिषेकवामाय वामदेव नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥
सुनिष्क्रान्तावघोराय पदं परममीयुषे ।
केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥
पुरुस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्तिपदभागिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥ १५ ॥
ज्ञानावरणनिर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ॥ १६ ॥
नमो दर्शनमोहघ्ने क्षायिकामलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय महौजसे ॥ १७ ॥
नमस्तेऽनन्तवीर्याय नमोऽनन्तसुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्तलोकाय लोकालोकावलोकिने ॥ १८
नमस्तेऽनन्तदानाय नमस्तेऽनन्तलब्धये ।
नमस्तेऽनन्तभोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥ १९ ॥
नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परमपूताय नमस्ते परमर्षये ॥ २० ॥
नमः परमविद्याय नमः परमतच्छिदे ।

नमः परमतत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥ २१ ॥
नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे ।
नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥
परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने परतरात्मने ।२३ ।
नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबंध नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥ २४ ॥
नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेतीन्द्रियज्ञानसुखायानिन्द्रियात्मने ॥ २५ ॥
कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥ २६ ॥
अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परमयोगीन्द्र वन्दितांघ्रिद्वयाय ते ॥ २७ ॥
नमः परमविज्ञान नमः परमसंयत ।
नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशकस्पृशे ।
नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षिणे ॥ २९ ॥
संज्ञ्यसंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ॥ ३० ॥
अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ॥ ३१

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्ते वीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२ ॥
अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ॥ ३३ ॥
एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पापशांतये ॥ ३४ ॥

इति पीठिका

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तोष्टुमोभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥
श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः संभवःशंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥
विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ॥ ३ ॥
विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥
विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ५ ॥
जिनो जिष्णुरमेयात्मा विष्णुरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तचिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥
युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः ।

परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः । ७ ।
स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः ।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥
प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगेश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥
शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धः सिद्धान्तविद्ध्येयः सिद्धसाध्योजगद्धितः ॥ १० ॥
सहिष्णुरच्युतोऽनंतः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥
विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परं ज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥
अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः । ४ ।
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।

शास्ता धर्मपतिर्द्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥
हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७ ॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥ ८ ॥
सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥
सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥
सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ ~ ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥
विश्वभृट् विश्वसृट् विश्वेट् विश्वभुग्विश्वनायकः ।
विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥ २ ॥
विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् ।
विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥
विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।

-वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥
क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥
सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥
व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥
मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मंत्रमूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्यो मृत्युंजयोऽमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥९॥
ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणःपुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥३॥

महाशोकध्वजोशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः ।
पद्मेशः पद्मसंभूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥१॥
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥२॥
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।

गुणाकरो गुणांभोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥
गुणाकरो गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥४॥
अगण्यः पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥५॥
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शांतो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥
निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलंको निरस्तैना निर्धूतांगो निराश्रयः ॥७॥
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिंत्यवैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत्सुनयतत्त्ववित् ॥८॥
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतांतकः ॥९॥
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥
कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥११॥

इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥४॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुंडरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥
सिद्धिदः सिद्धसंकल्प सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।

बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्द्धमानो महर्द्धिकः ॥२॥
वेदांगो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥३॥
अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद् युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥४॥
अतीन्द्रोऽतींद्रियो धींद्रो महेन्द्रोऽतींद्रियार्थदृक् ।
अनिंद्रियोऽहमिंद्रार्च्यो महेन्द्रमहितो महान् ॥५॥
उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः ।
अग्राह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः ।६।
अनंतर्द्धिरमेयर्द्धिरचिंत्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्र्यः प्राग्रहरोभ्यग्र्यः प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ॥७॥
महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८॥
महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥९॥
महामतिर्महानीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः ।
महाप्रज्ञो महाभागो महानंदो महाकविः ॥१०॥
महामहा महाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः ।
महादानो महाज्ञानो महायोगी महागुणः ॥११॥
महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपंचकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥५॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः ।
महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायो महोदयः ॥२॥
महाकारुणिको मंता महामंत्रो महायतिः ।
महानादो महाघोषः महेज्यो महसां पतिः ॥३॥
महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महेष्टवाक् ।
महात्मा महसां धाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥
महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोनंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥
महाभवाब्धिसंतारी महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरः क्षांतो महायोगीश्वरः शमी ॥६॥
महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मो महाव्रतः ।
महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥
सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥
सर्वयोगीश्वरोऽचिंत्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दांतात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीणबंधः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥

प्रणत: प्रणय: प्राण: प्राणद: प्रणतेश्वर: ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वर: ।।११।।
आनंदो नंदनो नंदो वंद्योऽनिंद्योऽभिनंदन: ।
कामहा कामद: काम्य: कामधेनुररिञ्जय: ।।१२।।
इति महामुन्यादिशतम् ।।६।।
असंस्कृत:सुसंस्कार: प्राकृतो वैकृतांतकृत् ।
अंतकृत्कांतिगु: कांतश्चिंतामणिरभीष्टद: ।।१।।
अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासन: ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतक: ।।२।।
जिनेंद्र: परमानन्दो मुनींद्रो दुन्दुभिस्वन: ।
महेंद्रवंद्यो योगींद्रो यतींद्रो नाभिनन्दन: ।।३।।
नाभेयो नाभिजोऽजात: सुव्रतो मनुरुत्तम: ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरु: सुगी: ।।४।।
सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुक: ।
विशिष्ट: शिष्टभुक् शिष्ट: प्रत्यय: कामनोऽनघ: ।।५।।
क्षेमी क्षेमकरोऽक्षय्य: क्षेमधर्मपति: क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तर: ।।६।।
सुकृती धातुरिज्यार्ह: सुनयश्चतुरानन: ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुख: ।।७।।
सत्यात्मा सत्यविज्ञान: सत्यवाक्सत्यशासन: ।
सत्याशी: सत्यसंधान: सत्य: सत्यपरायण: ।।८।।

स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुशीशो गिरांपतिः ॥१॥
नैकरूपो नयस्तुंगो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥३॥
लक्ष्मीवांस्त्रिदशाऽध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ।
मनोहरो मनोज्ञांगो धीरो गम्भीरशासनः ॥४॥
धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥५॥
अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥
सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥७॥

वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहाऽनघः ॥ ८ ॥
अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ९
अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् १०
शंकरः शंवदो दान्तो दमी क्षांतिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ११
त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ।१२।

इति बृहदादिशतम् ॥८॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः १
पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता २
युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ३
कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ४
देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ५

चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ६
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ७
तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरप्रभः ८
निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ९
द्युम्नाभो जातरूपाभो तप्तजाम्बूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः १०
शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ११
शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कांतिमान्कामितप्रदः १२
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः १३

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥९॥

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः १
तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोऽपहः २

जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः ।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ३
अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रभामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ४
मुमुक्षुर्बंधमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः ।
प्रशांतरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ५
मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ६
वक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् ।
तनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ७
श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः ।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ८
लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ९
प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेंद्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः १०
समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ११
अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥१२॥
समंतभद्रः शांतारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।

सूक्ष्मदर्शी जितानंगः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥
शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासादिअष्टाधिकशतम् । १०॥

इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्ता ।

धाम्नां पते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोभीष्टफलं लभेत् ॥२॥
त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमऽतोसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोसि जगद्धाता त्वमतोसि जगद्धितः ॥३॥
त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगं स्वोत्थानंतचतुष्टयः ॥४॥
त्वं पंचब्रह्मतत्त्वात्मा पंचकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥५॥
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥६॥
युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवंतं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥
इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः स पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥

ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः ।
पौरूहुतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥
स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुं ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥१०॥
स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखं ॥११॥
यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता न स्वं कस्यचित्
यो नेतॄन् नयते नमस्कृतिमलं नंतव्यपक्षेक्षणः ।
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥
तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानंतरं,
प्रोत्थानंतचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मानस्तंभविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं,
प्राप्ताचिंत्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवंदामहे ॥२१॥

इति श्रीजिनसहस्रनामस्तवनं समाप्तम् ।

श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं

भक्तामरस्तोत्रम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्
सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानां ॥१॥

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधादुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः। स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ,स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहं। बालं विहाय जलसंस्थितमिंदुबिम्बमन्यःक इच्छति जनःसहसा गृहीतुम् ३ वक्तुं गुणान्गुणसमुद्र शशांककांतान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्धया। कल्पांतकालपवनोद्धतनक्रचक्रं,को वा तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्यां ।४। सोहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश, कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः। प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेंद्रं,नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ।५। अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्। यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥ त्वत्संस्तवेन भवसंततिसंनिबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्,आक्रांत लोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंधकारम् मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद—मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात्,चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिंदुः ॥८॥ आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि विकासभांजि ॥६॥ नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ, भूतैर्गुणैर्भुवि भवंतमभि-

ष्टुवन्तः । तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ।१०। दृष्ट्वा भवंतमनिमेषविलोक-नीयं,नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः । पीत्वा पयःशशि-करद्युतिदुग्धसिन्धोः, क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ।। यैः शांतरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत । तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथिव्यां, यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ।।१२।। वक्त्रं क ते सुर-नरोरगनेत्रहारि,निश्शेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् । बिम्बं कलंकमलिनं क निशाकरस्य,यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश कल्पम् ।।१३।। सम्पूर्णमण्डलशशांककलाकलाप,शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर नाथमेकं, कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ।।१४।। चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभिर्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पांतकालमरुता चलिताचलेन, किं मन्द-राद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ।।१५।। निर्धूमवर्तिरपव-र्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोपि । गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां, दीपोपरस्त्वमसि नाथ जगत्-प्रकाशः ।।२१। नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः, स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति । नाम्भोधरोदरनिरुद्ध-महाप्रभावः, सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ।।१७।। नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं, गम्यं न राहुवदनस्य न

रूया दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ।३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः,सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रि-लोकयाः,दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभाषास्वभावपरि-णामगुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥ उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः, पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र ! धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य । यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,तादृक्कु-तो ग्रहगणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥ श्च्योतन्मदाविलवि-लोलकपोलमूल—मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम् । ऐरा-वताभमिभमुद्धतमापतन्तं, दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदा-श्रितानाम् ।३८। भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ता-फलप्रकरभूषितभूमिभागः,बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ।।३६ । कल्पांतकाल पवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतंतं, त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतंतम् । आक्रामति क्रमयु-गेण निरस्तशंकस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ४१ वल्गत्तुरंगगजगर्जितभीमनाद—माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् । उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं, त्वत्कीर्तना-

त्तम इवाशु भिदामुपैति ४२ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारि-वाह वेगावतारतरणातुरयोधभीमे। युद्धे जयं विजितदुर्जय-जेयपक्षास्त्वत्पादपंकजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥ अम्भो-निधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र—पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवा-ग्नौ,रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्म-रणाद् व्रजन्ति ।४४। उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः शो-च्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः। त्वत्पादपंकजरजोमृ-तदिग्धदेहा, मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥४५॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गाः,गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृ-ष्टजंघाः। त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥४६॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवान-लाहि-संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाश-मुपयाति भयं भियेव, यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां, भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगताम-जस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रम् ।

श्रीकुमुदचन्द्रप्रणीतं

कल्याणमन्दिरस्तोत्रम् ।

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि——भीताभयप्रदमनिन्दित-मंघ्रिपद्मम् । संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तु-पोतायमानमभि-नम्य जिनेश्वरस्य ॥१॥ यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः

स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् । तीर्थेश्वरस्य कमठ-स्मयधूमकेतोस्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥२॥ (युग्मम्) सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूपमस्मादृशा कथमधीश भवंत्यधीशाः ।-धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धो, रूपं प्ररूपयति किं किल धर्मरश्मेः ॥३॥ मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो, नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत । कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मात्, मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ॥४॥ अभ्युद्यतोस्मि तव नाथ जडाशयोपि, कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाक-रस्य । बालोपि किं न निजबाहुयुग वितत्य, विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ॥५॥ ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश, वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः । जाता तदेवमसमीक्षितकारितेय, जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥६॥ आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन संस्तवस्ते, नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति । तीव्रातपोपहतपा-न्थजनान्निदाघे, प्रीणाति पद्मसरसः सरसोनिलोपि ॥७॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिलीभवन्ति, जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबन्धाः । सद्यो भुजङ्गमया इव मध्य-भाग-मभ्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य ॥८ मुच्यत एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र, रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षि-तेपि । गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे, चौरैरिवाशु

पशाघः प्रपलायमानैः ॥९॥ त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव, त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः। यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः १० यस्मिन्हरप्रभृतयोपि हतप्रभावाः सोपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन। विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन, पीतं न किं तदपि दुर्धरवाडवेन ११ स्वामिन्ननल्पगरिमाण-मपि प्रपन्नास्, त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः। जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन, चिंत्यो न हंत महतां यदि वा प्रभावः ॥१२॥ क्रोधस्त्वया यदि ! विभो प्रथमं निरस्तो, ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौराः। प्लोष-त्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके, नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥१३॥ त्वां योगिनो जिन सदा परमात्म-रुप-मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोपदेशे। पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य-दक्षस्य सम्भवपदं ननु कर्णिकायाः ॥१४॥ ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन, देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति। तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके, चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥१५॥ अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं, भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्। एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि, यद्विग्रहं प्रशम-यन्ति महानुभावाः ॥१६॥ आत्मा मनीषिभिरयं त्वद-भेदबुद्ध्या, ध्यातो जिनेन्द्र भवतीह भवत्प्रभावः। पानी-

यमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं, किं नाम नो विषविकारम-पाकरोति ॥१७॥ त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि, नून विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ! किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शंखो, नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥१८॥ धर्मोपदेशसमये सविधानुभावा—दास्तां जनो भवति ते तरु-रप्यशोकः । अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि, किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ॥१९॥ चित्रं विभो कथम—वाङ्मुखवृन्तमेव, विष्वक्पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः । त्वद्-गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥२०॥ स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः, पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति । पीत्वा यतः परमसं-मदसंगभाजो, भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् । २१॥ स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो, मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः । येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय, ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥२२॥ श्यामं गभीरगिरि-मुज्ज्वलहेमरत्न—सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम् । आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥२३॥ उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन, लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव । सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग ! नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥२४॥ भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन—मागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति

सार्थवाहम् । एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय, मन्ये नद-न्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥२५॥ उद्द्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ,तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः । मुक्ता-कलापकलितोरुसितातपत्र-व्याजात्त्रिधाधृततनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥२६। स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन, कान्तिप्रतापयशसामिव संचयेन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन, साल-त्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥२७। दिव्यस्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलि-बन्धान् । पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वापरत्र, त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥२८॥ त्वं नाथ जन्मजल-धेर्विपराङ्मुखोऽपि, यत्तारयस्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव, चित्रं विभो यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥२९॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गत-स्त्वं, किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश । अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतु ३० प्राग्भारसम्भृतनभांसि रजांसि रोषा-दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि । छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो, ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥३१॥ यद्गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्रभीम-भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम् । दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे, तेनैव तस्य जिन दुस्तरवारि-कृत्यम् ॥३२॥ ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृताकृतिमर्त्यमुण्ड-प्रालंब-

भृङ्गयदवक्त्रविनिर्यदग्निः। प्रेतव्रजः प्रतिभवंतमपीरितो यः, सोऽस्यामवत्प्रतिभवं भवदुःखहेतुः ॥३३॥ धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसंध्य-माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः। भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः, पादद्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥३४॥ अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश, मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि। आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे, किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥३५॥ जन्मांतरेपि तव पादयुगं न देव,मन्ये मया महित-मीहितदानदक्षम्। तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानां, जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥३६॥ नूनं न मोहतिमिरा-वृतलोचनेन, पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि। मर्मा-विधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः, प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथम-न्यथैते ॥३७॥ आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि, नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या। जातोऽस्मि तेन जनबान्धव दुःखपात्रं, यस्मात्क्रियाः प्रतिफलंति न भाव-शून्याः ॥३८॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य, कारुण्यपुण्यवसते वशिनां वरेण्य। भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय, दुःखांकुरोद्दलनतत्परतां विधेहि ॥३९॥ निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्य-मासाद्य सादितरिपुप्रथि-तावदानम्। त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानवन्ध्यो,वन्ध्योऽस्मि चेद् भुवनपावन हा हतोऽस्मि ॥४०॥ देवेन्द्रवन्द्य विदिता-

खिलवस्तुसार, संसारतारक विभो भुवनाधिनाथ । त्रायस्व देव करुणाहृद मां पुनीहि, सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बु-राशेः ॥४१॥ यद्यस्ति नाथ भवदंघ्रिसरोरुहाणां, भक्तेः फलं किमपि सन्ततसंचितायाः । तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेपि ॥४२॥ इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र, सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकिताङ्गभागाः । त्वद्बिम्बनिर्मलमुखाम्बुजबद्धलक्ष्या, ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥४३॥ जननयन-कुमुदचन्द्र, प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा । ते विग-लितमलनिचया, अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥४४॥

इति कल्याणमन्दिरस्तोत्रम् ।

श्रीवादिराजप्रणीतं

एकीभावस्तोत्रम्

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो, घोरं दुःखं भवभवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिन-रवे भक्तिरुन्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽपर-स्तापहेतुः ॥१॥ ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुम्-त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं तत्त्वविद्याभियुक्ताः, चेतोवासे भवसि च मेम स्फारमुद्भासमानस्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ।२ आनन्दाश्रुस्नपितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्

यश्चार्चेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमन्त्रं भवन्तम् । तस्माद्-
स्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्निष्कास्यन्ते विविध-
विषमव्याधयः काद्रवेयाः ।३। प्रागेवेह त्रिदिवभवनादेष्यता
भव्यपुण्यात्, पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन
वपुरिदं यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्त्वमसि भग-
वन्निर्निमित्तेन बन्धुस्त्वय्येवासौ सकलविषया शक्तिरप्रत्य-
नीका । भक्तिस्फीतां चिरमधिवसन्मामिकां चित्तशय्यां,
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेशयूथं सहेथाः ॥५॥ जन्मा-
टव्यां कथमपि मया देव दीर्घं भ्रमित्वा,प्राप्तैवेयं तव नय-
कथास्फारपीयूषवापी । तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूहशीते
नितान्तं, निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदावोपतापाः ।६
पादन्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं, हेमाभासो
भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः । सर्वाङ्गेण स्पृशति भग-
वंस्त्वय्यशेषं मनो मे, श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्यु-
पैति ।७। पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिबन्तं,
कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्दधाम प्रविष्टम् । त्वां दुर्वारस्मर-
मदहरं त्वत्प्रसादैकभूमिं, क्रूराकाराः कथमिव रुजाकण्ट-
का निर्लुठन्ति ८ पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्नमूर्ति
र्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिप्राप्तो
हरति स कथं मानरोगं नराणां, प्रत्यासत्तिर्यदि न भवत-

स्तस्य तच्छक्तिहेतुः ।९।। हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्ति-शैलोपवाही, सद्यः पुन्सां निरवधिरुजाधूलिबन्धं धुनोति। ध्यानाहूतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टस्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोकोपकारः ।१०। जानासि त्वं मम भव-भवे यच्च यादृक्च दुःखं, जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि । त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतो-ऽस्मि भक्त्या, यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ।११। प्रापद् दैवं तव नुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः, पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपि सौख्यम् । कः संदेहो यदुपलभते वासवश्रीप्रभुत्वं, जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कार-चक्रम ।।१२। शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखावञ्चिकाकुंचिकेयम् । शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुन्सो, मुक्तिद्वारं परिदृढमहा-मोहमुद्राकवाटम् ।।१३। प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्, पन्था मुक्तेः स्थपुटितपदैः क्लेशगर्तैरगाधैः । तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासी, यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीरत्नदीपः ।१४। आत्मज्योतिर्निधिरनवधि-र्द्रष्टुरानन्दहेतुः, कर्मक्षोणीपटलपिहितो योऽनवाप्यः परे-षाम्। हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः, स्तोत्रै-र्बन्धप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ।।१५।। प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरेरायता चामृताब्धेः,या देव त्वत्पदकमलयोः सङ्गता

भक्तिगङ्गा । चेतस्तस्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांहः कल्माषं यद्भवति किमियं देव संदेहभूमिः ॥१६॥ प्रादुर्भूत स्थिरपदसुख त्वामनुध्यायतो मे, त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा । मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां दोषात्मानोऽप्यभिमतफलास्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति ।१७। मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभङ्गीतरंगैर्वागम्भोधिर्भुवनमखिलं देव पर्येति यस्ते । तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन,व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ॥१८॥ आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः,शस्त्रग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां, तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥१६। इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते, तस्यैवेयं भवलयकरी श्लाघ्यतामातनोति । त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं,त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ॥२०॥ वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वमन्येन तुल्यःस्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी नः क्रमन्ते । मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्तिपीयूषपुष्टास्ते भव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवन्ति ॥२१॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादो, व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम् । आज्ञावश्यं तदपि भुवनं संनिधिर्वैरहारी,क्वैवं भूतं

भुवनतिलक प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥ देव स्तोतुं त्रिदिवगणिकामण्डलीगीतकीर्तिं, तोतूर्ति त्वां सकलविषय-ज्ञानमूर्तिं जनो यः। तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जोहूर्ति पन्थास्तत्त्वग्रन्थस्मरणविषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥ चित्ते कुर्वन्निरवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं, देव त्वां यः समयनियमादादरेण स्तवीति। श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा, कल्याणानां भवति विषयः पंचधा पंचितानाम् ॥२४॥ भक्तिप्रह्वमहेन्द्रपूजितपद त्वत्कीर्तने न क्षमाः, सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम्। अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः ॥२५। वादिराजमनु शाब्दिकलोको, वादिराजमनु तार्किकसिंहः। वादिराजमनु काव्यकृतस्ते, वादिराजमनु भव्य-सहायः ॥२६॥

इति श्रीवादिराजकृतमेकीभावस्तोत्रम्

अथ श्रीधनंजयकविप्रणीतं

विषापहारस्तोत्रम्

स्वात्मस्थितः सर्वगतः समस्तव्यापारवेदी विनिवृत्तसङ्गः।
प्रवृद्धकालोऽप्यजरो वरेण्यः पायादपायात्पुरुषः पुराणः ॥१
परैरचिन्त्यं युगभारमेकः, स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः।

स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः,किमप्रवेशे विशति प्रदीपः
तत्याज शक्रः शक्तनाभिमानं,नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम्
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं वातायनेनेव निरूपयामि ॥३॥
त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो, विद्वानशेषं निखिलैरवेद्यः ।
वक्तुं कियान्कीदृशमित्यशक्यः, स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा
तवास्तु ॥ ४ ॥ व्यापीडितं बालमिवात्मदोषैरुल्लाघतां
लोकमवापिपस्त्वम् । हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः सर्वस्य
जन्तोरसि बालवैद्यः ॥५॥ दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा-
नद्य श्व इत्यच्युतदर्शिताशः । सव्याजमेवं गमयत्यशक्तः
क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ॥६॥ उपैति भक्त्या सुमुखः
सुखानि त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च दुःखम् । सदावदातद्यु-
तिरेकरूपस्तयोस्त्वमादर्श इवाऽवभासि ॥७॥ अगाध-
ताऽब्धेः स यतः पयोधिर्मेरोश्च तुङ्गा प्रकृतिः स यत्र ।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि
॥८॥ तवानवस्था परमार्थतत्त्वं त्वया न गीतः पुनरागमश्च,
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीर्विरुद्धवृत्तोऽपि समंजसस्त्वम् ॥९॥
स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्नुद्धूलितात्मा यदि नाम
शम्भुः । अशेत वृन्दोपहतोपि विष्णुः,किं गृह्यते येन भवा-
नजागः ॥१०॥ स नीरजाः स्यादपरोघवान्वा तद्दोषकी-
र्त्यैव न ते गुणित्वम् । स्वतोम्बुराशेर्महिमा न देव,
स्तोकापवादेन जलाशयस्य ॥११॥ कर्मस्थितिं जन्तुरनेक-

भूमिं नयत्यमुं सा च परस्परस्य । त्वं नेतृभावं हि तयो-र्भवाब्धौ, जिनेन्द्र नौनाविकयोरिवाख्यः ॥१२॥ सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्, धर्माय पापानि समाचरन्ति । तैलाय बालाः सिकतासमूहं, निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ॥१३॥ विषापहारं मणिमौषधानि, मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च । भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति, पर्यायनामानि तवैव तानि ॥१४॥ चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं, देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम् । हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं, सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ॥१५॥ त्रिकालतत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकीस्वामीति संख्या नियतेरमीषाम्, बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यंस्तेऽन्येऽपि चेद् व्याप्स्यदमूनपीदम् ॥१६॥ नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं, नागम्यरूपस्य तवोपकारि । तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानोरुद्बिभ्रतश्छत्रमिवादरेण ॥१७॥ क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः, स चेत् किमिच्छाप्रतिकूलवादः क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वं, तन्नो यथातथ्यमवेविजं ते ॥१८॥ तुङ्गात्फलं यत्तदकिंचनाच्च प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः । निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रेर्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः ॥१९॥ त्रैलोक्यसेवानियमाय दण्डं दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य । तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं तत्कर्मयोगाद्यदि वा तवास्तु ॥२०॥ श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः श्रीमान्न कश्चित्कृपणं त्वदन्यः । यथा

प्रकाशस्थितमन्धकार—स्थायीन्तेसौ न तथा तमःस्थम् २१
स्ववृद्धिनिःश्वासनिमेषभाजि प्रत्यक्षमात्मानुभवेपि मूढः ।
किंचाखिलज्ञेयविवर्तिबोध—स्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः २२
तस्यात्मजस्तस्य पितेति देवः त्वां येऽवगायन्ति कुलं
प्रकाश्य । तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं, पाणौ कृतं हेम
पुनस्त्यजन्ति ॥२३॥ दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः
सुरासुरास्तस्य महान्स लाभः। मोहस्य मोहस्त्वयि को
विरोद्धुमूलस्य नाशो बलवद्विरोधः ।२४। मार्गस्त्वयैको
ददृशे विमुक्तेश्चतुर्गतीनां गहनं परेण । सर्वं मया दृष्टमिति
स्मयेन, त्वं मा कदाचिद् भुजमालुलोके ।२५। स्वर्भानुर-
र्कस्य हविर्भुजोऽम्भः कल्पान्तवातोम्बुनिधेर्विघातः ।
संसारभोगस्य वियोगभावो विपक्षपूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये २६
अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति ।
हरन्मणिं काचधिया दधानस्तं तस्य बुद्धया वहतो न रिक्तः,
प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैः, दग्धस्य देवव्यवहारमाहुः ।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं,दृष्टं कपालस्य च मङ्गलत्वम्
॥२८॥ नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं, हितं वचस्ते निशमय्य
वक्तुः । निर्दोषतां के न विभावयन्ति, ज्वरेण मुक्तः सुगम
स्वरेण ॥२९। न क्वापि वाञ्छा ववृते च वाक्ते, काले
क्वचित्कोऽपि तथा नियोगः । न पूरयाम्यंबुधिमित्युदंशुः
स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ॥३०॥ गुणा गभीराः परमाः

प्रसन्ना बहुप्रकारा बहवस्तवेति । दृष्टोऽयमन्तः स्तवने न तेषां गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ।३१॥ स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि, स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं, केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम् ।३२। ततस्त्रिलोकीनगराधिदेवं,नित्यं परं ज्योतिरनन्तशक्तिम् । अपुण्यपापं परपुण्यहेतुं नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम् ॥३३॥ अशब्दमस्पर्शमरूपगन्धं, त्वां नीरसं तद्विषयावबोधम्, सर्वस्य मातारममेयमन्यैर्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि ।३४॥ अगाधमन्यैर्मनसाऽप्यलंघ्यं, निष्किंचनं प्रार्थितमर्थवद्भिः । विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं,पतिं जिनानां शरणं व्रजामि ३५ त्रैलोक्यदीक्षागुरवे नमस्ते,यो वर्धमानोपि निजोन्नतोभूत् । प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रिकल्पः, पश्चान्न मेरुः कुलपर्वतोभूत् ।३६ । स्वयं प्रकाशस्य दिवा निशा वा,न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम् । न लाघवं गौरवमेकरूपं, वन्दे विभुं कालकलामतीतम् ॥३७॥ इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्वर न याचे त्वमुपेक्षकोसि । छाया तरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्, कश्छायया याचितयात्मलाभः ॥३८॥ अथास्ति दित्सा यदि वोपरोधस्त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिम् । करिष्यते देव तथा कृपां मे को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः ॥३९॥ वितरति विहिता यथा कथंचिज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः । त्वयि नुतिविषया

पुनर्विशेषाद्दिशति सुखानि यशो धनं जयं च ॥४०॥

इति श्रीधनञ्जयकृतं विषापहारस्तोत्रम् ।

श्री भूपालकविप्रणीता

जिनचतुर्विंशतिका

श्रीलीलायतनं महीकुलगृहं कीर्तिप्रमोदास्पदं, वाग्देवी-रतिकेतनं जयरमाक्रीडानिधानं महत् । स स्यात्सर्वमहोत्सवैकभवनं यः प्रार्थितार्थप्रदं प्रातः पश्यति कल्पपादपदल-च्छायं जिनांघ्रिद्वयम् ॥१॥ शान्तं वपुः श्रवणहारि वचश्चरित्रं, सर्वोपकारि तव देव ततः श्रुतज्ञाः । संसार-मारवमहास्थलरुद्रसान्द्र—च्छायामहीरुह भवन्तमुपाश्रयंते ॥२॥ स्वामिन्नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननीगर्भान्धकूपोदरा-द्द्योद्घाटितदृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य स्फुटमं,त्वा-मद्राक्षमहं यदक्षयपदानन्दाय लोकत्रयीनेत्रेन्दीवरकाननेन्दु-ममृतस्यन्दिप्रभाचन्द्रिकम् ॥३॥ निःशेषत्रिदशेन्द्रशेखरशिखा रत्नप्रदीपावली-सान्द्रीभूतमृगेन्द्रविष्टरतटीमाणिक्यदीपा-वलिः । क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वा-दृशः, सर्वज्ञानदृशश्चरित्रमहिमा लोकेश लोकोत्तरः ॥४॥ राज्यं शासनकारिनाकपति यत्त्यक्तं तृणावज्ञया,हेलानिर्द-लितत्रिलोकमहिमा यन्मोहमल्लो जितः । लोकालोकमपि स्वबोधमुकुरस्यान्तःकृतं यत् त्वया,सैषाश्चर्यपरम्परा जिन-

चर क्वान्यत्र संभाव्यते ॥५॥ दानं ज्ञानधनाय दत्तमसकृत्पात्राय सद्वृत्तये,चीर्णान्युग्रतपांसि तेन सुचिरं पूजाश्च बह्व्यः कृताः । शीलानां निचयः सहामलगुणैः सर्वः समासादितो, दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टिसुभगः श्रद्धापरेण क्षणम् ॥६॥ प्रज्ञापारमितः स एव भगवान्पारं स एव श्रुतस्कंन्धाब्धेर्गुणरत्नभूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम् । नीयन्ते जिन येन कर्णहृदयालंकारतां त्वद्गुणाः,संसाराहिविषापहारमणयस्त्रैलोक्यचूडामणे ।७। जयति दिविजवृन्दान्दोलितैरिन्दुरोचिर्निचयरुचिभिरुच्चैश्चामरैर्वीज्यमानः । जिनपतिरनुरज्यन्मुक्तिसाम्राज्यलक्ष्मी-युवतिनवकटाक्षक्षेपलीलां दधानैः ॥८॥ देवः श्वेतातपत्रत्रयचमरिरुहाशोकभाश्चक्रभाषा-पुष्पौघासारसिंहासनसुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः । साश्चर्यैर्भ्राजमानः सुरमनुजसभाम्भोजिनीभानुमाली, पायान्नः पादपीठीकृतसकलजगत्पालमौलिर्जिनेन्द्रः ॥ ९ ॥ नृत्यत्स्वर्दन्तिदन्ताम्बुरुहनटन्नाकनारीनिकायः, सद्यस्त्रैलोक्ययात्रोत्सवकरनिनदातोद्यमाद्यन्निलिम्पः । हस्ताम्भोजातलीलाविनिहितसुमनोदामरम्यामरस्त्रीकाम्यः कल्याणपूजाविधिषु विजयते देव देवागमस्ते । १० ॥ चक्षुष्मानहमेव देव भुवने नेत्रामृतस्यन्दिनं, त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसादसुभगैस्तेजोभिरुद्भासितम् । येनालोकयता मयाऽनतिचिराच्चक्षुः कृतार्थीकृतं, दृष्टव्यावधिवीक्षणव्यतिकर

व्याजम्भमाणोत्सवम् ।११। कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चिन्मुग्धो मुकुन्दमरविन्दजमिन्दुमौलिम् । मोघीकृतत्रिदशयोषिदपाङ्गपातस्तस्य त्वमेव विजयी जिनराजमल्लः ।।१२।। किसलयितमनल्पं त्वद्विलोकाभिलाषात्कुसुमितमतिसान्द्रं त्वत्समीपप्रयाणात्, मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीं नयनपथमवाप्ताद्देव पुण्यद्रुमेण १३ त्रिभुवनवनपुष्प्यत्पुष्पकोदण्डदर्पप्रसरदभिनवाम्भोमुक्तिसूक्तिप्रसूतिः । स जयति जिनराजव्रातजीमूतसङ्घः,शतमखशिखिनृत्यारम्भनिर्बन्धबन्धुः ।।१४।। भूपालस्वर्गपालप्रमुखनरसुरश्रेणिनेत्रालिमालालीलाचैत्यस्य चैत्यालयमखिलजगत्कौमुदीन्दोर्जिनस्य उत्तंसीभूतसेवाञ्जलिपुटनलिनीकुड्मलास्त्रिः परीत्य, श्रीपादच्छाययापस्थितभवदवथुः संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम् १५ देव त्वदंघ्रिनखमण्डलदर्पणेऽस्मिन्नर्घ्ये निसर्गरुचिरे चिरदृष्टवक्त्रः । 'श्रीकीर्तिकान्तिधृतिसङ्गमकारणानि, भव्यो न कानि लभते शुभमङ्गलानि ।।१६।। जयति सुरनरेन्द्रश्रीसुधानिर्झरिण्याः, कुलधरणिधरोऽयं जैनचैत्याभिरामः । प्रविपुलफलधर्मानोकहाग्रप्रवाल—प्रसरशिखरशुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः ।।१७।। विनमदमरकान्ताकुन्तलाक्रान्तकान्तिस्फुरितनखमयूखद्योतिताशान्तरालः । दिविजमनुजराजव्रातपूज्यक्रमाब्जो, जयति विजितकर्मारातिजालो जिनेन्द्रः ।।१८।। सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमङ्गलाय, द्रष्टव्यमस्ति

यदि मङ्गलमेव वस्तु। अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं त्रैलोक्यमङ्गलनिकेतनमीक्षणीयम् ॥१९॥ त्वं धर्मोदयतापसाश्रमशुकस्त्वं काव्यबन्धक्रम-क्रीडानन्दनकोकिलस्त्वमुचितः श्रीमल्लिकाषट्पदः। त्वं पुन्नागकथारविन्दसरसीहंसस्त्वमुत्तंसकैः,कैर्भूपाल न धार्यसे गुणमणिस्रङ्मालिभिमौलिभिः ॥२०॥ शिवसुखमजरश्रीसङ्गमं चाभिलष्य, स्वमभिनिगमयन्ति क्लेशपाशेन केचित्। वयमिह तु वचस्ते भूपतेर्भावयन्तस्तदुभयमपि शश्वल्लीलया निर्विशामः ।२१। देवेन्द्रास्तव मज्जनानि विदधुर्देवाङ्गना मंगलान्यापेठुः शरदिन्दुनिर्मलयशो गन्धर्वदेवा जगुः। शेषाश्चापि यथानियोगमखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे,तत्किं देव ! वयं विदध्म इति नश्चित्तं तु दोलायते ॥२२॥ देव त्वज्जननाभिषेकसमये रोमाञ्चसत्कञ्चुकैः,देवेन्द्रैर्यदनर्ति नर्तनविधौ लब्धप्रभावैः स्फुटम्। किंचान्यत्सुरसुन्दरीकुचतटप्रान्तावनद्धोत्तम-प्रेङ्खद्वल्लकिनादझंकृतमहो तत्केन संवर्ण्यते ॥२३॥ देव त्वत्प्रतिबिम्बमम्बुजदलस्मेरेक्षणं पश्यतां,यत्रास्माकमहो महोत्सवरसो दृष्टेरियान्वर्तते। साक्षात्तत्रभवन्तमीक्षितवतां कल्याणकाले तदा, देवानामनिमेषलोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते ॥२४॥ दृष्टं धाम रसायनस्य महतां दृष्टं निधीनां पदं, दृष्टं सिद्धरसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः। किं दृष्टैरथवानुषङ्गिकफलैरेभिर्मयाद्य ध्रुवं दृष्टं मुक्तिविवाह-

मङ्गलगृहं दृष्टे जिनश्रीगृहे ॥२५॥ दृष्टस्त्वं जिनराजचन्द्र विकसद्भूपेन्द्रनेत्रोत्पलैः, स्नातं त्वन्नुतिचन्द्रिकाम्भसि भवद्विद्वच्चकोरोत्सवे । नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शांतिं मया गम्यते, देव त्वद्गतचेतसैव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम् ॥२६॥

इति जिनचतुर्विंशतिका।

अकलङ्कस्तोत्र

शार्दूलविक्रिडितछंदः ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितं, साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि । रागद्वेष भयामयान्तकजरालोलत्वलोभादयो, नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया वंद्यते ॥१॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा वह्निना, यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः। सोऽयं किं मम शंकरो भयतृषारोषार्ति मोहक्षयं, कृत्वा यः स तु सर्वविन्तनुभृतां क्षेमंकरः शंकरः ॥२॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येन्द्रवक्षःस्थलं,सारथ्येन धनंजयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान्। नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतं, विश्वं व्याप्य विजृंभते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥ उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः, पात्रीदंडकमंडलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिम्। आविर्भावयितुं भवंति स कथं ब्रह्मा भवे-

न्मादृशां, क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥४॥ यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्, कर्त्ता कर्मफलं न भुंक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम्। यज्ज्ञानं क्षणवृत्ति वस्तुसकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा, यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात् स बुद्धो मम ॥५॥

स्रग्धरा छन्द।

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात्, नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च। आर्द्राजः किंत्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं, संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ।६। ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेश-विभ्रान्तचेताः, शम्भुः खट्वांगधारी गिरिपतितनयापांग-लीलानुविद्धः। विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद् गोप-नाथस्य मोहादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोऽय-मेष्वाप्तनाथः ॥७॥ एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रे सहस्रं भुजानेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रा-यते। दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता—मेते मुक्तिपथं वदंति विदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ॥८॥ यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भंगिनः पारदृश्वा, पौर्वापर्या-विरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्। तं वंदे साधुवंद्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं बुद्धं वा वर्द्धमानं शतद-

लनिलयं केशवं वा शिवं वा ।६। माया नास्ति जटाकपा-
लमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली, खट्वांगं न च वासुकिर्न च
धनुः शूलं न चोग्रं मुखं । कामो यस्य न कामिनी न च
वृषो गीतं न नृत्यं पुनः,सोऽस्मान्पातु निरंजनो जिनपतिः
सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः ॥१०॥ नो ब्रह्मांकितभूतलं न च हरेः
शम्भोर्न मुद्रांकितं, नो चन्द्रार्ककरांकितं सुरपतेर्वज्रांकितं
नैव च । षड्वक्त्रांकितबौद्धदेवहुतभुग्यक्षोरगैर्नांकितं
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्रांकितं ॥११॥
मौंजीदंडकमंडलुप्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो, रुद्रस्यापि
जटाकपालमुकुटं कौपीनखट्वांगना । विष्णोश्चक्रगदादि
शंखमतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं,नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं
जैनेन्द्रमुद्रांकितं १२ नाहंकारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा
केवलं, नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्धया
मया । राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्म-
नो बौद्धौघान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः
॥१३॥ खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लम्बते
मुण्डमाला, भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव
हस्ते कपालं । चन्द्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषगमनं नैव कंठे
फणीन्द्रः, तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवम्
॥१४॥ किं वाद्यो भगवानमेयमहिमाः देवोकलंक कलौ,
काले यो जनतासु धर्मनिहितो देवोऽकलंको जिनः । यस्य

स्फारविवेकमुद्रलहरीजाले प्रमेयाकुला, निर्मग्ना तनुतेतरां भगवती तारा शिरःकम्पनम् ॥१५॥ सा तारा खलु देवता भगवतीमन्यापि मन्यामहे, पण्मासावधिजाडयसांख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभोः । वाक्कल्लोलपरम्पराभिरमते नूनं मनोमज्जन-व्यापारं सहते स्म विस्मितमतिः सन्ताडितेतस्ततः ॥१६ ॥

इति अकलंकस्तोत्रम् ।

सुप्रभातस्तोत्रम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे, यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे । यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः, संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपादयुगदुर्द्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनन्दन जिनाजितशंभवाख्य, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥२॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान देवाभिनंदनमुने सुमते जिनेंद्र, पद्मप्रभारुणमणिद्युतिभासुरांग, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥३॥ अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्णगात्र, प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर । चंद्रप्रभस्फटिकपाण्डुर पुष्पदंत, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥४॥ संततकांचनरुचे जिनशीतलाख्य श्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलंकपंक । बंधूकबंधुररुचे जिनवासुपूज्य, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं

मम सुप्रभातम् ॥ ५ ॥ उद्दंडदर्पकरिपो विमलामलांग स्थेमन्ननंतजिदनंतसुखांबुराशे । दुष्कर्मकल्मषविवर्जित धर्मनाथ, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥६॥ देवामरीकुसुमसंन्निभ शांतिनाथ, कुंथो दयागुणविभूषणभूषितांग देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ त्वद्ध्यानतोस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।७। यन्मोहमल्लमदभंजनमल्लिनाथ,क्षेमंकरावितथशासनसुव्रताख्य,यत्संपदाप्रशमितो नमिनामधेय,त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ८ तापिच्छगुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ, घोरोपसर्गविजयिन् जिनपार्श्वनाथ । स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पणवर्द्धमान, त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥६॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासं, यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनींद्राः । ध्यायंति सप्ततिशतं जिनवल्लभानां, त्वद्ध्यानतोस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥१०॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं, मांगल्यं परिकीर्तितम् । चतुर्विंशतितीर्थानां, सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनंदितम् । देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ॥१२॥ सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥१३॥ सुप्रभातं जिनेंद्राणां, ज्ञानोन्मीलितचक्षुषां । अज्ञानतिमिरांधानां, नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥ सुप्रभातं जिनेंद्रस्य, वीरः कमललोचनः । येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्र-

वह्निना ॥१५॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमंगलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्तॄणां, जिनानामेव शासनम् ॥१६॥

इति सुप्रभातस्तोत्रम् ।

स्व० पं० भागचन्द्रविरचितं

महावीराष्टकस्तोत्रम् ।

शिखरिणी छन्दः

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः, समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोन्तरहिताः । जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो, महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः–कमलयुगलं स्पंदरहितं, जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि । स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला, महावीर० ॥२॥ नमन्नाकेन्द्रालीमुकुटमणिभाजालजटिलं, लसत्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां । भवज्वालाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि, महावीर० ॥३॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह, क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः । लभंते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा, महावीर० ॥४॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो, विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः । अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर्, महावीर० ।५। यदीया वाग्गंगा विविध-

नयकल्लोलविमला, बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति । इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता; महावीर० ॥६॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः । स्फुरन्नित्यानंदप्रशमपदराज्याय स जिनः, महावीर० ॥७॥ महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग्, निरापेक्षो बंधुर्विदितमहिमा मङ्गलकरः । शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो, महावीर० ॥ ८ ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम् ॥९॥

अथ दृष्टाष्टकस्तोत्रम्

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि, भव्यात्मनां विभवसंभव भूरिहेतु । दुग्धाब्धिफेनधवलोज्ज्वलकूटकोटि—नद्धध्वज प्रकरराजिविराजमानम् ॥१॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैकलक्ष्मीः, धामर्द्धिवर्द्धितमहामुनिसेव्यमानम् । विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्य— पुष्पाञ्जलिप्रकरशोभितभूमिभागम् ॥२॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवास—विख्यातनाकगणिकागणगीयमानम् । नानामणिप्रचयभासुररश्मिजाल-व्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥३॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुरसिद्धयक्ष—गन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा । संगी-

तमिश्रितनमस्कृतधीरनादै—रापूरिताम्बरतलोरुदिगन्त-रालम् ॥४॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्विलोल—माला कुलालिललितालकविभ्रमाणम् । माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासिनीनां, लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥५॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणिरत्नहेम—सारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः । सन्मंगलैः सततमष्टशतप्रभेदै-र्विभ्राजितं विमल मौक्तिकदामशोभम् ॥६॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारु कर्पूरचन्दनतरुष्कसुगन्धिधूपैः, मेवायमानगगने पवनाभिघातचञ्चच्चलद्विमलकेतनतुङ्गशालम् ७ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः । दोधूयमानसितचामरपंक्तिभासं, भामंडलद्युतियुतप्रतिमाभिरामम् ॥८॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकार—पुष्पोपहार रमणीयसुरत्नभूमि । नित्यं वसंततिलकश्रियमादधानं, सन्मंगलं सकलचन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यम् ॥९॥ दृष्टं मयाद्य मणिकाञ्चनचित्रतुङ्गसिंहासनादिजिनबिम्बविभूतियुक्तम् । चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे, सन्मंगलं सकलचन्द्र-मुनीन्द्रवन्द्यम् ॥१०॥

अथाद्याष्टकस्तोत्रम्

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम ।

त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥

अद्य संसारगम्भीरपारावारः सुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते ।
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३॥
अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमंगलम् ।
संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥
अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम्
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥
अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादश स्थिताः ।
नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥
अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः ।
सुखसंगसमापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् ।
सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥८॥
अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः ।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥
अद्याहं सुकृतीभूतो निर्धूताशेषकल्मषः ।
भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१०॥
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः ।
तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥११॥

मंगलाष्टकम्

श्रीमन्नम्रसुरासुरेंद्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभाभास्वत्पादनखेंदवः प्रवचनांभोधाववस्थायिनः । ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः, स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वंतु मे मंगलम् ॥१॥ सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं, मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः । धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं, प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वंतु मे मंगलम् २ नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः, श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश । ये विष्णुप्रतिविष्णुलांगलधराः सप्तोत्तरा विंशति–स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु मे मंगलम्ः ।३। देव्योष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवताः, श्रीतीर्थंकरमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा । द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा, दिक्पाला दश चेत्यमी सुरगणाः कुर्वंतु मे मंगलम् ॥४॥ ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये, ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणाः । पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धिऋद्धीश्वराः, सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वंतु मे मंगलम् ॥५॥ कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे, चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम् । शेषाणामपि चो-

र्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो, निर्वाणावनयः प्रसिद्ध-विभवाः कुर्वंतु मे मंगलम् ॥६। ज्योतिर्व्यन्तरभावनामर-गृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा, जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु । इष्वाकारगिरौ च कुंडलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे, शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वंतु मे मंगलं ॥ ७ ॥ यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेको-त्सवो, यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञान-भाक् । यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः, कल्याणानि च तानि पंच सतत कुर्वंतु मे मंगलम् ॥८॥
इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः ।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥६॥

वीतरागस्तोत्रम्

मिश्रित भाषा

शिवं शुद्धबुद्धं परं विश्वनाथं
न देवो न बन्धुर्न कर्ता न कर्म ॥
न अंगं न सङ्गं न स्वेच्छा न कायम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥१॥
न बन्धो न मोक्षो न रागादिलोभं,

न योगं न भोगं न व्याधिं न शोकम्
न कोपं न मानं न मायं न लोभम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥२॥
न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा,
न चक्षुर्न कर्णं न वक्त्रं न निद्रा ॥
न स्वामी न भृत्यं न देवो न मर्त्यः,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥३॥
न जन्म न मृत्युः न मोहो न चिन्ता,
न क्षुद्रो न भीतो न कार्श्य न तन्द्रा ॥
न स्वेदं न खेदं न वर्णं न मुद्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥४॥
त्रिदंडे त्रिखंडे हरे विश्वनाथम्,
हृषीकेशविध्वस्तपरमारिजालम् ॥
न पुण्यं न पापं न चाक्षादिपापम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥
न बालो न वृद्धो न तुच्छो न मूढो,
न खेदं न भेदं न मूर्तिर्न स्नेहः ।
न कृष्णं न शुक्लं न मोहं न तंद्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥६॥
न आद्यं न मध्यं न अन्तं न चान्यत् ।
न द्रव्यं न क्षेत्रं न कालो न भावः ।

न शिष्यो गुरुर्नापि न हीनं न दीनम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥७॥

ज्ञानस्वरूपं स्वयं तत्त्ववेदी,
न पूर्णं न शून्यं न चैत्यं स्वरूपी ॥
न चान्योन्यभिन्नं न परमार्थमेकम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥८॥

आत्मारामगुणाकरं गुणनिधिं चैतन्यरत्नाकरं ।
सर्वे भूतगतागते सुखदुखे ज्ञाते त्वया सर्वगे ॥
त्रैलोक्याधिपते स्वयं स्वमनसा ध्यायन्ति योगीश्वराः ।
वंदे तं हरिवंशहर्षहृदयं श्रीमान् हृदाभ्युद्यताम् ॥९॥

अथ परमानन्दस्तोत्रम्

परमानन्दसंयुक्तं, निर्विकारं निरामयम् ॥
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम् ।१।

अनंतसुखसम्पन्नं ज्ञानामृतपयोधरम् ॥
अनंतवीर्यसंपन्नं, दर्शनं परमात्मनः ॥२।

निर्विकारं निराबाधं सर्वसंगविवर्जितम् ।
परमानन्दसम्पन्नं, शुद्धचैतन्यलक्षणम् ॥ ३ ॥

उत्तमा स्वात्मचिंता स्यात्, मोहचिंता च मध्यमा ।
अधमा कामचिंता स्यात्, परचिंताधमाधमा ॥४॥

निर्विकल्पसमुत्पन्नं, ज्ञानमेव सुधारसम् ।
विवेकमंजलिं कृत्वा, तं पिबंति तपस्विनः ॥५॥

सदानन्दमयं जीवं, यो जानाति स पंडितः ।
स सेवते निजात्मानं, परमानंदकारणम् ॥६॥
नलिनाच्च यथा नीरं भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।
सोऽयमात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति निर्मलः ॥७॥
द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं, भावकर्मविवर्जितम् ।
नोकर्मरहितं सिद्धं, निश्चयेन चिदात्मकम् ॥८॥
आनंदं ब्रह्मणो रूपं, निजदेहे व्यवस्थितम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम् ।६।
सद्ध्यानं क्रियते भव्यं, मनो येन विलीयते ।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्चमत्कारलक्षणम् ॥१०॥
ये ध्यानलीना मुनयः प्रधानाः, ते दुःखहीना नियमा-द्भवन्ति । सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्त्वं, व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेकमेव ।११। आनंदरूपं, परमात्मतत्त्वं, समस्तसंकल्प विकल्पमुक्तम् । स्वभावलीना निवसंति नित्यं, जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वं ।१२। निजानंदमयं शुद्धं, निराकारं निरामयम् । अनन्तसुखसम्पन्नं, सर्वसंगविवर्जितम् ॥१३ ।
लोकमात्रप्रमाणोयं, निश्चये न हि संशयः ।
व्यवहारे तनुमात्रः, कथितः परमेश्वरैः ॥१४॥
यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गतविभ्रमः ।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्वा, निर्विकल्पसमाधितः ।१५।
स एव परमं ब्रह्म, स एव जिनपुंगवः ।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः ॥ १६ ॥

स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मकः ॥ १७ ॥
स एव सर्वकल्याणं, स एव सुखभाजनम् ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमं शिवः ॥ १८ ॥
स एव परमानंदः, स एव सुखदायकः ।
स एव परमज्ञानं, स एव गुणसागरः ॥ १९ ॥
परमाल्हादसंपन्नं, रागद्वेषविवर्जितम् ।
सोहं तं देहमध्येषु, यो जानाति स पंडितः ॥२०॥
आकाररहितं शुद्धं, स्वस्वरूपे व्यवस्थितम् ।
सिद्धमष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनम् ।२१॥
तत्सदृशं निजात्मानं, यो जानाति स पंडितः ।
सहजानंदचैतन्यप्रकाशाय महीयसे ॥२२॥
पाषाणेषु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथा घृतम् ।
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये तथा शिवः ।२३॥
काष्ठमध्ये यथा वह्निः, शक्तिरूपेण तिष्ठति ।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानति स पंडितः ॥२४॥

आचार्य शांतिसागरस्तुतिः ।

पूज्यातिपूज्यैर्यतिभिस्सुवंद्यं, संसारगंभीरसमुद्रसेतुम् ।
ध्यानैकनिष्ठं गरिमागरिष्ठं,आचार्यवर्यं प्रणमामि नित्यं ॥१॥ ध्यानादिसैन्यं परिवर्ध्य पूर्णं, कर्मारिवर्गं प्रणि-

हस्य वेगात् । नीरागस्वातंत्र्यपदे प्रतिष्ठं, आ० ॥२॥ यो मुख्यसूरिर्मुनिनायकानां, आचारपारं गतवान्समग्रं । ध्यानप्रभावेन प्रवृद्धदीप्तिः, आ० ॥३॥ दुर्जेयकं द्वादशधा कषायं, जित्वा निजात्मानुभवैकशुद्ध्या, षष्ठे गुणे सप्तमके गतं तं, आ० ।४। आभ्यन्तरो बाह्य उपाधिभारः, दूरीकृतो येन वितृष्णभावात् । दैगम्बरं सुन्दरदिव्यकायं,आ० ॥५॥ धर्मामृतं पाययति प्रभूतं,यो भव्यजीवान् करुणास्वरूपः । स्वात्मस्वरूपं च चकार तेभ्यः, आ० ॥६॥ योऽनेकसाधून् विषयेष्वरक्तान्, निर्ग्रंथलिंगे विधिना चकार । गुरूपरागोपि च वीतरागः, आ० ७-महागभीरं विशदीकृतार्थं, शास्त्राब्धिपारं गतवान् समग्रम् ; तथापि प्रज्ञामदताविरक्तः, आ० ॥८॥ यथा कुन्दकुन्दः सुरैर्वंद्यपादः, अभूत्साधुसंसेव्यमानप्रपादः । तथैवाधुना लोकपूज्यं यतीन्द्रं भजे सूरिवर्यं सदा साधुवंद्यम् ॥९॥ यथा दुष्टजीवेन घोरोपसर्गाः, कृताः पार्श्वनाथे त्रिलोकैकपूज्ये । तथा दुष्टलोकोपसर्गं सहिष्णुं, भजे० ॥१०॥ यतीनामनेके यथा शिष्यवर्गाः, प्रभोः कुन्दकुन्दस्य सूरेरभूवन् । तथैवाधुना साधुसदोहशिष्यम्, भजे० ॥११॥ यथा सूत्रचिह्नं हि रत्नत्रयस्य पुरा भारते पूर्वपूज्यैर्निरुक्तम् । तथैवाधुना सूत्रचिह्नं ददानं भजे० ।१२। शांतेरगारं विनष्टारिमारं, जगत्कञ्जमित्रं गुणाढ्यं पवित्रम् । वरिष्ठैः सुपूज्यं गरिष्ठप्र-

धानं, भजे० ॥१३॥ भीमगौडा महाशक्तिशाली, स्वमाता सती सत्यरूपा सुरूपा। तयोः पुत्ररत्नं जिताचारियत्नं भजे० ॥१४। जगद्वल्लरी कर्तयित्वा कृपाणीं, गृहीत्वा शुभध्यानरूपां स्वभावाम्। प्रयेदे गुणं सप्तमञ्चकहीनं, भ० ॥१५॥ गुणारामनीरं भवाम्भोधितीरं, सदा निर्विकारं गृहीतात्मसारम्। कषायादिदुर्दण्डदोर्दण्डभेदं, भजे० १६ महद्ध्याननिष्ठं महत्सु प्रकृष्टं, महर्षिप्रतिष्ठं वचो यस्य मिष्टम्। चिदानंदरूपे स्वरूपे प्रविष्टं, भजे० ।१७। निर्ग्रंथ साधुमधुपव्रजराजमाना, त्वत्पादपद्मकलिका धवलाभिरामा, नक्षत्रवृन्दपरिवेष्टितचन्द्रबिम्बः, देवैः सुदृष्टिरुचिभिर्मघवा यथा वा ॥१८॥ यत्पादसेवनरता खलु भव्यलोकाः, संसारतो झटिति यांति विरक्तबुद्धिम्। यद्गीः प्रशस्यमहनीयसहेतुका च, पंचाननस्य समतां सदसि व्यनक्ति ॥ १९ ॥ मिथ्यान्धकारपटलं प्रविहाय शीघ्रं, तत्त्वप्रसारकिरणैः सुखदैः समन्तात्, श्रद्धापरायणजनाम्बुजकोरकांश्च, सन्तोषयन् विगततापरविस्त्वमेव ॥ २० ॥ मिथ्यान्धकारपरिमर्दनरश्मिजालं, ज्ञानप्रकाशितजगत्प्रविकाशिसूर्यम्। ध्यानैकताननियतं मुनिराजसेव्यं, आचार्यवर्यगुरुपादमहं नमामि ॥२१॥ गुणास्त्वदीयाः धवलाः गभीराः, सुरेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रपूज्याः। विभांति सूरे! तव दिव्यदेहे, ततोसि पूज्यः खलु विश्वलोके ।२२। दर्शं दर्शं

सूरिशान्तस्वरूपं पायं पायं वाक्यपीयूषधाराम्,स्मारं स्मारं तद्गुणान् स्पष्टपादाः,जाताः शान्ताः साधवोऽद्वेष्वरक्ताः ।२३। चित्ते चित्ते शान्तमूर्तेः सुबोधः, बोधे बोधे तत्स्वरूपानुरूपम् । रूपे रूपे स्वात्मवृत्तौ प्रवृत्तिः, वृत्तौ वृत्तौ कुन्थुनेमीन्दुवीराः ॥२४॥ -आसीद्यः खलु दक्षिणायनकरः पश्चादुदीच्यां गतः, ज्ञानध्यानतपःप्रभामयवपुः संधारयन् दीप्तिमान् । सम्यग्ज्ञानमरीचिभिर्विकासिता आशाश्च येनाखिलाः, सोऽयं सूरिरपूर्वभानुरुदितो लोके सदा शान्तिदः ॥२५॥ सुखदयाखिलबोधविधानया, विधिविशाखिकठोरकुठारया । विगतरागगुरुर्जिनदीक्षया, तरति तारयति भ्रमजालतः ॥२६॥

आचार्यश्रीमदुस्वामिविरचितं

तत्त्वार्थसूत्रम् ।

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥

तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाऽधिकरण स्थितिविधानतः ॥७॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभा-

श्राल्पवहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥९॥तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ।१३। तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥ १५ ॥ बहुबहुविधक्षिप्राऽनिःसृताऽनुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥ १७ ॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् २० भवप्रत्ययोऽवधि र्देवनारकाणाम् २१ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ।२४। विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः ।२५। मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ।३२। नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥३३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाऽज्ञानासंयताऽसिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीवभव्याऽभव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥ स्पर्शनरसनाघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ३० सम्मूर्च्छनगर्भोपपादा जन्म ३१ सचित्त

शीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥३५॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥ नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥ ५१ ॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्करावालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाः भूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिपंचोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमम् ॥ २ ॥ नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ४ ॥ संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक्चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेक

त्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥ ६ ॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥ ७ ॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशत सहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेम मयाः ॥१२॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्विगुण द्विगुणा ह्रदा पुष्कराणि च ॥ १८ ॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥ गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा

योजनस्य ॥ २४ ॥ तद्‌द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥ २५ ॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणी-भ्याम् ॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ् मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तर-कुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्त-लेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्न-पर्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मर-क्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितो-

दधिद्वीपदिक्कुमाराः ।१०। व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ।११। ज्योतिष्काः सूर्य्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च १२ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके १३ तत्कृतः कालविभागः १४ बहिरवस्थिताः १५ वैमानिकाः १६ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च १७ उपर्युपरि १८ सौधर्म्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च १९ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः २० गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः २१ पीतपद्मशुक्ललेश्याः द्वित्रिशेषेषु २२ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः २३ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः २४ सारस्वतादित्यवन्ह्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च २५ विजयादिषु द्विचरमाः २६ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः २७ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः २८ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके २९ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ३० त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ३१ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ३२ अपरा पल्योपममधिकम् ३३ परतः परतः पूर्वा पूर्वानन्तरा ३४

नारकाणां च द्वितीयादिषु ३५ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ३६ भवनेषु च ३७ व्यन्तराणां च ३८ परा पल्योपममधिकं ३९ ज्योतिष्काणां च ४० तदष्टभागोऽपरा ४१ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ४२

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः

अजीवकाया धर्म्माधर्म्माकाशपुद्गलाः १ द्रव्याणि २ जीवाश्च ३ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ४ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि । ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असंख्येयाः प्रदेशाः धर्म्माधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्म्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहारविसर्प्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्म्माधर्म्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ।२०। परस्परोपग्रहो जीवानाम् २१ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य २२ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥ २३ । शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायाऽतपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवः

स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते २६ भेदादणुः २७ भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः २८ सद् द्रव्यलक्षणम् २९ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ न जघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ च पारिणामिकौ च । ३७ । गुणपर्य्ययवद् द्रव्यम् ॥३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०। द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनः कर्म्म योगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः सांपरायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः । ६ । अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोक

तापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ । केवलिश्रुतसंघधर्म्मदेवाव-र्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणा-मश्चारित्रमोहस्य ॥१४। बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्या-युषः ॥ १५ ॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भ परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७॥ स्वभावमार्दवं च ॥ १८॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् १९ सरागसंयमसंयमासंयमा-कामनिर्ज्जराबालतपांसि दैवस्य २० सम्यक्त्वं च २१ योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः २२ तद्विपरीतं शुभस्य २३ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वन-तिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्त्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्ति-रावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य २४ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छा-दनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य २५ तद्विपर्य्ययौ नीचैर्वृत्त्य-नुत्सेकौ चोत्तरस्य २६ विघ्नकरणमन्तरायस्य २७

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् १ देशसर्व-तोऽणुमहती २ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च. ३ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि

पंच ४ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच ५ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धि सधर्म्माविसंवादाः पंच ६ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच ७ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्ज्जनानि पञ्च ८ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनं ९ दुःखमेव वा १० मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्त्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु ११ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् १२ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा १३ असदभिधानमनृतं १४ अदत्तादानं स्तेयं १५ मैथुनमब्रह्म १६ मूर्च्छा परिग्रहः १७ निःशल्यो व्रती १८ अगार्यनगारश्च १९ अणुव्रतोऽगारी २० दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च २१ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता २२ शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतिचाराः २३ व्रतशीलेषु पंच पंच यथाक्रमम् ।२४। बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्री–

डाकामतीव्राभिनिवेशाः २८ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधन-
धान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः २९ ऊर्ध्वाधस्तिर्य-
ग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ३० आनयनप्रेष्य-
प्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ३१ कन्दर्पकौत्कुच्य-
मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ३२
योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ३३ अप्रत्यवे-
क्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुप-
स्थानानि ३४ सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिपवदुःपक्वाहाराः
३५ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः
३६ जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि
३७ अनुग्रहार्थे स्वस्यातिसर्गो दानम् ३८ विधिद्रव्य-
दातृपात्रविशेपात्तद्विशेपः ३९

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकपाययोगा बन्धहेतवः १
सकपायत्वाज्जीवः कर्म्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स
बन्धः २ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ३ आद्यो
ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ४
पंचनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमम्
५ मतिश्रुतावधिमनःपर्य्ययकेवलानां ६ चक्षुरचक्षुरवधिके-
वलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धयश्च
७ सदसद्वेद्ये ८ दर्शनचारित्रमोहनीयाकपायकपायवेदनी-

याख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ९ नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि १० गतिजातिशरीरांगोपाङ्गनिर्माणबन्धनसङ्घातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ११ उच्चैर्नीचैश्च १२ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् १३ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः १४ सप्ततिर्मोहनीयस्य १५ विंशतिर्नामगोत्रयोः १६ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः १७ अपरा द्वादश मुहूर्ता वेदनीयस्य १८ नामगोत्रयोरष्टौ १९ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता २० विपाकोऽनुभवः २१ स यथानाम २२ ततश्च निर्जरा २३ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः २४ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् २५ अतोऽन्यत्पापम् २६

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आस्रवनिरोधः संवरः १ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः २ तपसा निर्ज्जरा च ३ सम्यग्योग–

निग्रहो गुप्तिः ४ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ५ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य-ब्रह्मचर्य्याणि धर्म्मः ६ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वा-शुच्यास्रवसंवरनिर्ज्जरालोकबोधिदुर्ल्लभधर्म्मस्वाख्यात-त्वानुचिंतनमनुप्रेक्षाः ७ मार्गाच्यवननिर्ज्जरार्थं परिषो-ढव्याः परीषहाः ८ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्या-रतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाञ्चालाभरोगतृणस्पर्श-मलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ९ सूक्ष्मसाम्परा-यछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश १० एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे १२ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ । १४ । चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाञ्चासत्कारपुरस्काराः १५ वेदनीये शेषाः १६ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैको-नविंशतेः १७ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धि-सूक्ष्मसाम्परायथाख्यातमिति चारित्रम् १८ अनशनाव-मौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकाय-क्लेशा बाह्यं तपः । १९ । प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्त्य-स्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् । २० नवचतुर्दशपञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् । २१ । आलोचनप्रतिक्र-मणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः २२ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः । २३ । आचार्योपाध्यायतप-

स्विशैक्षग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञानाम् । २४ । वाच-नापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः । २५ । बाह्याभ्यन्त-रोपध्योः ।२६। उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यान-मान्तर्मुहूर्तात् । २७ । आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि । २८ । परे मोक्षहेतू । २९ । आर्त्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्र-योगाय स्मृतिसमन्वाहारः । ३० । विपरीतं मनोज्ञस्य । ३१ । वेदनायाश्च । ३२ । निदानं च ॥३३॥ तदवि-रतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम् । ३४ हिंसानृतस्तेयविषय-संरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः । ३५ । आज्ञापाय-विपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ३६ शुक्ले चाद्ये पूर्व-विदः । ३७ । परे केवलिनः ३८ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसू-क्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ३९ त्र्येकयोग-काययोगायोगानाम् ४० एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ४१ अवीचारं द्वितीयम् ४२ वितर्कः श्रुतम् ४३ वीचा-रोऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिः ४४ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरता-नन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोहक्षपकक्षी-णमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्ज्जराः ४५ पुलाक-वकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रंथाः ४६ संयमश्रुतप्रति-सेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ४७

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् १

बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म्मविप्रमोक्षो मोक्षः २ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ३ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ४ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ५ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ६ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ७ धर्मास्तिकायाभावात् ८ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ९

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षन्तव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥२॥
तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृध्र–पिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्रसंयातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥३॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रं समाप्तम् ॥

अथ सामायिक पाठः

सिद्धवस्तुवचो भक्त्या, सिद्धान् प्रणमतां सदा
सिद्धकार्याः शिवं प्राप्ताः, सिद्धिं ददतु नोऽव्ययाम् १
नमोस्तु धौतपापेभ्यः, सिद्धेभ्यः ऋषिसंसदि
सामायिकं प्रपद्येऽहं, भवभ्रमणसूदनम् २
साम्यं मे सर्वभूतेषु, वैरं मम न केनचित्

आशां सर्वां परित्यज्य, समाधिमहमाश्रये ३
रागद्वेषान्ममत्वाद्वा, हा मया ये विराधिताः ।
क्षमन्तु जन्तवस्ते मे, ते मां क्षमयन्तु सर्वदा ४
तेभ्यः क्षमाम्यहं पुनः कृतकारितसम्मतैः
रत्नत्रयभवं दोषं, गर्हे निन्दामि वर्जये ५
तैरश्चं मानवं दैव–मुपसर्गं सहेऽधुना
कायाहारकषायादीन्, संत्यजामि त्रिशुद्धितः ६
रागद्वेष भयं शोकं, प्रहर्षौत्सुक्यदीनताः
व्युत्सृजामि त्रिधा सर्वमरतिं रतिमेव च ७
जीवने मरणे लाभेऽलाभे योगे विपर्यये
बन्धावरौ सुखे दुःखे, सर्वदा समता मम ८
आत्मैव मे सदा ज्ञाने, दर्शने चरणे तथा
प्रत्याख्याने ममात्मैव, तथा संवरयोगयोः ९
एको मे शाश्वतश्चात्मा, ज्ञानदर्शनलक्षणः
शेषा वहिर्भवा भावाः सर्वे संयोगलक्षणाः १०
संयोगमूला जीवेन, प्राप्ता दुःखपरम्परा
तस्मात्सयोगसम्बन्धं, त्रिधा सर्वं त्यजाम्यहम् ११
एवं सामायिकात्सम्यक् सामायिकमखण्डितम्
वर्तते मुक्तिमानिन्या, वशीभूताय ते नमः ॥ १२ ॥

इति सामायिक पाठ

श्रीअमितगतिसूरिविरचिता

द्वात्रिंशतिका ।

(सामायिक पाठ)

सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्, मध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ॥१॥ शरीरतः कर्तु मनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मान-मपास्तदोषम् । जिनेन्द्र कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसा-देन ममास्तु शक्तिः ॥२॥ दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे योगे वियोगे भवने वने वा । निराकृताशेषममत्वबुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥३॥ मुनीश लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निपाताविव बिंबिताविव । पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥४ एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः, प्रमादतः संचरता इतस्ततः । क्षताः विभिन्ना मिलिता निपीडिताः, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥५॥ विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्तिना मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया । चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥६॥ विनिन्दनालोचनग-र्हणैरहं, मनोवचःकायकषायनिर्मितम् । निहन्मि पापं भवदुःखकारणं, भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥ ७ ॥ अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्मणः,

व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्ध्ये ॥ ८ ॥ क्षतिं मनःशुद्धिविधेरतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलवृते-र्विलंघनम् । प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचार-मिहातिसक्तताम् ॥ ९ ॥ यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् । तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिम् ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः । चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देव ॥ ११ ॥ यः स्मर्यते सर्वमुनीन्द्रवृन्दैः यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः । यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १२ ॥ यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः, समस्तसंसारविकारबाह्यः, समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १३ ॥ निषूदते यो भवदुःख-जालं, निरीक्षते यो जगदन्तरालं । योऽन्तर्गतो योगिनि-रीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १४ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिपादको यो, यो जन्ममृत्युव्यसनादतीतः । त्रिलोकलोकी विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये ममा-स्ताम् ॥ १५ ॥ क्रोडीकृताशेषशरीरवर्गा, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः । निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १६ ॥ यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः । ध्यातो

धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।१७
न स्पृश्यते कर्मकलंकदोषै,र्यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः,
निरञ्जनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये
। १८ । विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुव-
नावभासी । स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं तं देवमाप्तं
शरणं प्रपद्ये । १९ । विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं,
विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् । शुद्धं शिवं शान्तमना-
द्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये । २० । येन क्षता
मन्मथमानमूर्च्छा, विषादनिद्राभयशोकचिन्ता । क्षतोऽन-
लेनेव तरुप्रपंचः, तं देवमाप्तं शरणं-प्रपद्ये । २१ । न
संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी, विधानतो नो फलको
विनिर्म्मितः । यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः, सुधीभिरा-
त्मैव सुनिर्मलो मतः । २२ । न संस्तरो भद्र समाधिसाधनं
न लोकपूजा न च संघमेलनम् । यतस्ततोऽध्यात्मरतो
भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम् । २३ । न
सन्ति बाह्या मम केचनार्थाः, भवामि तेषां न कदाच-
नाहम् । इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं
भव भद्र मुक्त्यै २४ आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानः, त्वं
दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः । एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र,
स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् २५ एकः सदा शाश्वतिको
ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः । बहिर्भवाः सन्त्यं-

परं समस्ताः, न शाश्वताः कर्मभवा स्वकीयाः २६
यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः। पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये २७ संयोगतो दुःखमनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी। ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् २८ सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं, संसारकान्तारनिपातहेतुम्। विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे २९ स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्। परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ३० निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन। विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुच्य शेमुषीम् ३१ यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः, सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः। शश्वदधीतो मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभववरं ते ३२

इति द्वात्रिंशता वृत्तैः परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्यगतचेतस्को, यात्यसौ, पदमव्ययम् ३३

इत्यमितगतिसूरिविरचिता द्वात्रिंशतिका

लघु—सामायिक पाठः ॥

सिद्धं सम्पूर्णभव्यार्थ—सिद्धेः कारणमुत्तमम् ।
प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्र–प्रतिपादनम् ।१।
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्ट—पादपद्मांशुकेसरं ।
प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥ २ ॥
सिद्धवस्तुवचोभक्त्या, सिद्धान् प्रणमतां सदा ।
सिद्धकार्याः शिवं प्राप्ताः सिद्धिं ददतु नोऽव्ययाम् ।३।
नमोस्तु धूतपापेभ्यः सिद्धेभ्यः ऋषिपरिषदि ।
सामायिकं प्रपद्येऽहं भवभ्रमणसूदनम् ॥ ४ ॥
समता सर्वभूतेषु संयमे शुभभावना ।
आर्त्तरौद्रपरित्यागः तद्धि सामायिकं मतम् । ५ ।
साम्यं मे सर्वभूतेषु, वैरं मम न केनचित् ।
आशाः सर्वाः परित्यज्य समाधिमहमाश्रये । ६ ।
रागद्वेषान्ममत्वाद्वा हा मया ये विराधिताः ।
क्षाम्यन्तु जन्तवस्ते मे, तेभ्यो मृष्याम्यहं पुनः । ७ ।
मनसा, वपुषा, वाचा कृतकारितसंमतैः ।
रत्नत्रयभवं दोषं गर्हे निंदामि वर्जये । ८ ।
तैरश्चं मानवं दैवं उपसर्गं सहेऽधुना ।
कायाहारकषायादि प्रत्याख्यामि त्रिशुद्धितः । ९ ।
रागं द्वेषं भयं शोकं प्रहर्षौत्सुक्यदीनतां ।
व्युत्सृजामि त्रिधा सर्वामरतिं रतिमेव च ॥ १० ॥

जीविते मरणे लाभेऽलाभे योगे विपर्यये ।
बंधावरौ सुखे दुःखे, सर्वदा समता मम ॥ ११ ॥
आत्मैव मे सदा ज्ञाने दर्शने चरणे तथा ।
प्रत्याख्याने ममात्मैव, तथा संवरयोगयोः । १२ ।
एको मे शाश्वतश्चात्मा ज्ञानदर्शनलक्षणः ।
शेषा वहिर्भवा भावाः सर्वे संयोगलक्षणाः । १३ ।
संयोगमूला जीवेन प्राप्ता दुःखपरम्परा ।
तस्मात् संयोगसंबंधं त्रिधा सर्वं त्यजाम्यहं । १४ ।
एवं सामायिकं सम्यक् सामायिकमखण्डितम् ।
वर्ततां मुक्तिमानिन्या वशीचूर्णायितं मम । १५ ।
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १६ ॥
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः । १७ ।
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मये भणियं ।
तं खमउ णाण देव य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ।१८।
खक्खओ कम्मक्खओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य ।
मम होउ जगतबंधव जिणवर तव चरणसरणेण १९

॥ इति सामायिक पाठ ॥

श्रीपार्श्व-नाथ-स्तोत्रम्

श्रीपार्श्वः पातु वो नित्यं, जिनः परमशंकरः ।
नाथः परमशक्तिश्च, शरण्य सर्वकामदः ॥१॥
सार्वो विश्वंभरः, स्वामी, सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
सर्वसत्त्वहितो योगी, श्रीकरः परमार्थदः ॥२॥
देवदेवः परमसिद्धश्चिदानंदमयः शिवः ।
परमात्मा परब्रह्म परमः परमेश्वरः ॥३॥
जगन्नाथः सुरज्येष्ठो, भूतेशः पुरुषोत्तमः ।
सुरेन्द्रो नित्यधर्मेशः, श्रीनिवासः शुभार्णवः ।
सर्वज्ञः सर्वदेवेशः, सर्वदः सर्वदासमः ।
सर्वात्मा सर्वदर्शी च, सर्वव्यापी जगद्गुरुः ॥५॥
तत्त्वमूर्तिः परो दिव्यः, परब्रह्मप्रकाशकः ।
परमेंदुः परंप्राप्यः परमामृतसिद्धिदः ॥६॥
अजस्सनातनः शंभुरीश्वरश्च सदाशिवः ।
विश्वेश्वरः, प्रमोदात्मा, क्षेत्राधीशः शुभप्रभः ॥७॥
साकारश्च निराकारः, सकलो निश्चलो मतः ।
निर्ममो निर्विकारश्च, निर्विकल्पो निरामयः ॥८॥
अजरश्चाऽरुजोऽनंत, एकानेकशिवात्मकः ।
अलक्षश्चाऽप्रमेयश्च, ध्यानलक्ष्यो निरञ्जनः ॥९॥
ओंकारः प्रकृतिर्व्यक्तो, व्यक्तरूपः श्रीमयः ।
ब्रह्मद्वयप्रकाशात्मा, निर्भयः परमाक्षरः ॥१०॥
दिव्यतेजोमयः शांतः, परमात्ममयोद्यतः ।

आद्यो ज्योतिः परेशानः, परमेष्ठी परं पुमान् ॥११॥
शुद्धस्फटिकसंकाशः, स्वयंभूः परमाकृतिः ।
व्योमाकारश्चरमश्च, लोकालोकप्रकाशकः ॥१२॥
ज्ञानात्मा परमानंदः, प्राणारूढमवस्थितः ।
मनःमाध्यो मनोध्येयो, मनोदृश्यः परात्परः ॥१३॥
सर्वतीर्थमयो नित्यः, सर्वदेवमयः प्रभुः ।
भगवान् सर्वतत्त्वज्ञः, शिवः श्रीसौख्यदायकः ॥१४॥
इति श्रीपार्श्वनाथस्य, सर्वज्ञस्य सद्गुरोः ।
दिव्यमष्टोतरं नाम, शतमत्र प्रकीर्तितम् ॥१५॥
पवित्रं परमं ध्येयं, परमानंददायकम् ।
भुक्तिमुक्तिप्रदातारं, पठतां मंगलप्रदम् ॥१६॥
श्रीमत्परमकल्याणं, सिद्धिदं श्रेयसे स्तुमः ।
पार्श्वनाथो हि श्रीमान् सो, भगवान् परमः शिवः ॥१७॥
धरणेन्द्रफणाच्छत्रालंकृतो वः श्रियं प्रभुः ।
दद्यात्पद्मावतीदेव्या, समधिष्ठितशासनः ॥ १८ ॥
ध्यायेत्कमलमध्यस्थं, श्रीपार्श्वं जगदीश्वरम् ।
ओं ह्रीं अर्हंसमायुक्तं, केवलज्ञानभास्करम् ॥१९॥
पद्मावत्यान्वितं वामे, धरणेन्द्रेण दक्षिणे ।
कमलाष्टदलस्थेन, 'मंत्रराजेन संयुतम् ॥२०॥
अष्टपत्रस्थितपंच,—नमस्कारैस्तथा त्रिभिः ।
ज्ञानाद्यैर्वेष्टितं नाथं, धर्मार्थकाममोक्षदम् ॥२१॥
सत्षोडशदलारूढ,—विद्यादेवीभिरावृतम् ।
चतुर्विंशतिपत्रस्थं,—जिनमातृसमावृतम् ॥२२॥

मायावेष्टत्रयाग्रस्थं, क्रोंकार सहितं प्रभुं ।
नवग्रहावृतं देवं, दिक्पालैर्दशभिर्वृतम् ॥२३॥
(ओं प्रं) चतुःकोणेषु मंत्राद्यैः, चतुर्वर्गान्वितंजिनम् ।
चतुरष्टादशद्वीति, द्विधा कं संज्ञकैर्युतम् ॥२४॥
दिक्षु क्षकारयुक्तेन, विदिक्षु लांक्रितेन च ।
चतुरस्रेण विज्ञांकं, कृतित्वेन प्रतिष्ठितं ॥२५॥
श्रीपार्श्वनाथमित्येवं, यः समाराधयेज्जिनम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तं, लभ्यते श्रीः सुखप्रदम् ॥२६॥
जिनेशः पूजितो भक्त्या, संस्तुतः प्रणतोऽथवा ।
ध्यात्वा स्तुयेत्क्षणं चापि, सिद्धिस्तेषां महोदया ॥२७॥
श्रीपार्श्वमंत्रराजं तु, चिंतामणिगुणप्रदम् ।
शांतिपुष्टिकरं नित्यं, क्षुद्रोपद्रवनाशनम् ॥२८॥
ऋद्धिसिद्धिमहाबुद्धि,धृतिकीर्तिसुकांतिदम् ।
मृत्युंजयं शिवात्मानं, जगदानंदनं जिनम् ॥२९॥
सर्वकल्याणपूर्णोयं, जरामृत्युविवर्जितं ।
अणिमादिमहासिद्धिर्लक्षजाप्येन चाप्नुयात् ॥३०॥
प्राणायाममनोमंत्रयोगादमृतमात्मनि ।
त्वात्मानं शिवं ध्यात्वा, स्वस्मिन् सिद्ध्यंति जन्तवः ।३१।
हर्षदः कामदश्चेति, रिपुघ्नः सर्वसौख्यदः ।
पातु नः परमानंदः, तत्क्षणं संस्तुतो जिनः ॥ ३२॥
तत्त्वरूपमिदं स्तोत्रं, सर्वमांगल्यसिद्धिदम् ।
त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं, नित्यां प्राप्नोति स श्रियम् ॥३३॥

इति श्रीपार्श्वनाथस्तवनम् ।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

यति-क्रिया-मंजरी

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥१॥

पंच परम गुरु देवान्-प्रणम्य शिरसा सरस्वतीं देवीम् ।
निश्रेयसि धातारं जिनोक्तधर्मं सदा वंदे ॥ २ ॥
वीरसागरनामानं गुरुं नत्वा सुभक्तितः ।
संगृह्यते शास्त्रमाश्रित्य यतीनां कृति-मंजरी ॥ ३ ॥

यति के मूलगुण व क्रियायें ।

वद समिदिंदिय रोधो लोचो आवासयमचेलमहाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥

अर्थ—पंच महाव्रत पंच समिति पंचेन्द्रियरोध लोच षट्
आवश्यक अचेलकत्व अस्नान क्षितिशयन अदंतधावन

स्थितिभोजन और एक भुक्ति, ये २८ मूलगुण साधु के होते हैं। तथा—

द्वादश तप वावीस परीषह ये ३४ उत्तर गुण कहलाते हैं यहां प्रकृत में षडावश्यक क्रिया के प्रयोग की विधि से ही प्रयोजन है।

श्री "अनगार धर्मामृत" के नवमे अध्याय में "नित्य नैमित्तिक क्रिया प्रयोग विधि" बतलाई गई है, इसमें उसी के अनुसार ही सामायिक आदि क्रियाओ के प्रयोग का स्पष्टीकरण किया गया है तथा प्रसंगानुसार अनगार धर्मामृत का आठवां अध्याय व मूलाचार, आचारसार चारित्रसार वेदनाखण्ड आदि शास्त्रों से भी उदाहरण लेकर विशेष रीति से खुलासा किया गया है।

आचारांग में शिष्य ने प्रश्न किया—

कहं चरे कहं चिट्ठे कहमासे कहं सये।
कहं भासे कहं भुञ्जे कहं पावं ण बंधइ॥

अर्थ—कैसे आचरण करे, कैसे ठहरे, कैसे बैठे, कैसे सोये, कैसे वचन बोले व कैसे भोजन करे कि जिससे पापों से बंध को प्राप्त न होवें।

उत्तर में

जदं चरे जदं चिट्ठे जदमासे जदं सये।
जदं भासे जदं भुञ्जे एवं पावं ण बंधइ॥

अर्थात् यत्नपूर्वक आचरण करे यत्नपूर्वक स्थित होवे, यत्न पूर्वक बैठे, यत्न पूर्वक सोवे, यत्न पूर्वक वचन बोले व यत्न पूर्वक भोजन करे तो इस प्रकार से पापों से नहीं बंधेगा।

आवश्यक क्रियाओं के नाम

सामायिकं चतुर्विंशतिस्तवो वंदना प्रतिक्रमणं।
प्रत्याख्यानं कायोत्सर्गश्चावश्यकस्य षड्भेदाः।

(अनगारधर्मामृते)

तेरह क्रियाओं के नाम

आवश्यकानि षट् पंचपरमेष्ठिनमस्क्रिया।
निसही चासही साधोः क्रियाः कृत्यास्त्रयोदश ॥

अनगार० ॥

अर्थ—सामायिक चतुर्विंशति स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान व कायोत्सर्ग ये छह आवश्यक क्रियायें हैं। ये ही ६ छहं आवश्यक, पांच ५ परमेष्ठिनमस्कार १२ निः सही और १३ असही ये त्रयोदश क्रियायें साधु को नित्य ही करने योग्य है।

इनही तेरह क्रियाओं को करण भी कहते हैं। तथा पंच महाव्रत पंच समिति और तीन गुप्ति इन तेरह प्रकार के चारित्रको करण कहते हैं। यहां पर यतिक्रियामंजरी में

स्वाध्याय वंदना और नियम (प्रतिक्रमण विधि) की ही प्रधानता है ।

निःसही–असही का स्वरूप

वसत्यादौ विशेत् तत्स्थं भूतादिं निसही गिरा ।
आपृच्छ्य तस्मान्निर्गच्छेत्सं चापृच्छ्यासही गिरा ॥

अर्थात् साधु जन मठ चैत्यालयादि वसतिकाओं में प्रवेश करते समय वहां पर स्थित भूतादि देवताओंको निःसही शब्द के द्वारा पूछ कर प्रवेश करे व निकलते समय असही शब्द के द्वारा पूछ करके आशीर्वाद देकर निकले ।

आर्यिकाओं की समाचार विधि

इन सभी क्रियाओं के करने के अधिकारी केवल मुनि जन ही है अथवा अन्य किसी को भी अधिकार है, इत्यादि प्रश्न के होने पर—

मूलाचार मे सामान्यतया समाचार विधि का प्रतिपादन करके आचार्य कहते हैं "यदि यतीनामयं न्यायः, आर्यिकाणां कः ? इत्यत आह" । मूलाचारमें अध्याय ४ गाथा १८७ पृ० १६१ में "एसो अज्जाणं पि अ समाचारो जहाविक्खओ पुव्वं । सव्वह्मि अहोरत्ते विभासिदव्वो जहा जोग्गं ॥

अर्थ—ऊपर जो भी समाचार कथन मुनियों के लिये है वही समाचार विधान आर्यिकाओं को भी अंहर्निश करना चाहिये परन्तु वृत्त मूलादि योगरहित पालन करना चाहिए।

तथैव—जहाजोग्गं–यथायोग्यं आत्मानुरूपो वृक्ष-मूलादिरहितः। सर्वस्मिन्नहोरात्रे एषोऽपि समाचारो यथायोग्यमार्यिकाणां आर्यिकाभिर्वा प्रकटयितव्यो विभावयितव्यो यथाख्यातः पूर्वस्मिन्निति"

यहां पर वृत्त मूलादि शब्द से वृत्त मूल आतापन अभ्रावकाशयोग व प्रतिमा योग का निषेध है। यहां पर कदाचित् कोई यह प्रश्न करे कि नग्नता और खडे होकर आहार लेने का निषेध होने से आर्यिकाओं के अट्ठाईस मूलगुणों के स्थान में छब्बीस ही तो रहे। परन्तु ऐसा प्रश्न तो आगम तथा युक्ति से ठीक नहीं मालुम पड़ता है। नग्न न रह कर वस्त्र (१ साड़ी मात्र) ग्रहण करना व बैठ कर आहार करना भी उनका मूलगुण ही है। तथाहि—

वस्त्रयुग्मं सुवीभत्सलिंगप्रच्छादनाय च।
आर्याणां संकल्पेन तृतीये मूलमिष्यते

(प्रायश्चित्त शास्त्र)

अतएव पर्यायजन्य असमर्थता के कारण आचार्यों का उनके लिये ऐसा ही आदेश है तथा व्रतोंकी प्रदानता

में २८ मूलगुण उन्हें दिये जाते है और मुनियों के ही संस्कारों का उनमें आरोपण किया जाता है।

अतः औपचारिक ही क्यों न हो अट्ठाईस मूलगुण आर्यिकाओं के होते है। तथा ये समाधिकाल में अपवाद रूप दिगम्बर अवस्थाको भी धारण कर सकती है व आचार्य की आज्ञानुसार गणिनी को शिक्षा दीक्षादि का अधिकार प्राप्त है।

उद्दिष्ट त्यागी श्रावक, क्षुल्लक, ऐलक व दशवीं प्रतिमाधारी श्रावक भी गुरुओं के चरण सान्निध्य में रहकर इन षड़ावश्यकों का पालन करे। तथाहि—

बन्दना त्रितये काले प्रतिक्रान्ति द्वयं तथा।
स्वाध्यायानां चतुष्कं च योगिभक्तिद्वयं पुनः॥
उत्कृष्टश्रावकेनामूः कर्तव्या यत्नतोऽन्वहं।
षडष्टौ द्वादश द्वे च क्रमशोऽमूषु भक्तयः॥

अर्थात्—त्रिकाल बन्दना में ६ कायोत्सर्ग, प्रातः काल, सायंकाल के दो प्रतिक्रमण में ८ कायोत्सर्ग ४ स्वाध्याय के १२ व योगिभक्ति के २ कायोत्सर्ग है विधिवत् इन्हें क्षुल्लकादि भी करें तथा—

दिणपडिम वीरचरिया तियाल योगेसु णत्थि अहियारो।
सिद्धान्त रहस्साणवि अज्झयणं देशविरदाणं (वसुनन्दि)

अर्थात्—दिन प्रतिमा, वीरचर्या, त्रिकाल योग (वृक्षमूल आतापन अभ्रावकाश) करने को, सिद्धान्त

शास्त्र रहस्य (प्रायश्चित्त) शास्त्र अध्ययन का अधिकार देश–विरत अर्थात् एकादश प्रतिमा तक धारण करने वाले श्रावकों को नहीं है।

कायोत्सर्ग विधि

अट्ठसद देवसियं कल्लद्धं पक्खियं च तिण्णिसया।
उस्सासा कायव्वा णियमन्ते अप्पमत्तेण ॥१६०॥
चादुम्मासे चउरो सदाइं संवत्सरे य पंच सया।
काओसग्गुस्सासा पंचसु ठाणेसु णादव्वा ॥१६१॥
पाणिवह मुसावाए अदत्तमेहुणपरिग्गहे चेव।
अट्ठसदं उस्सासा काओसग्गम्हि कादव्वा ॥१६२॥
भत्ते पाणे गामन्तरे य अरहन्त समण सेज्जासु।
उच्चारे पस्सवणे पणवीसं होंति उस्सासा ॥१६३॥
उद्देसे णिद्देसे सज्झाए वंदणे य पडिकमणे।
सत्तावीसुस्सासा काओसग्गम्हि कादव्वा ॥१६४॥

षडावश्यकाधिकारः ॥७॥ पृष्ठ ४६५ मूलाचारे।

अर्थ—दैवसिक प्रतिक्रमण में १०८ रात्रिक में ५४ पाक्षिक में ३००, चातुर्मासिक मे ४०० सांवत्सरिक में ५०० श्वासोच्छ्वास प्रमाणों द्वारा कायोत्सर्ग वीर भक्ति के समय मे करना चाहिए। तथा—

पञ्च महाव्रतों में किसी भी एक व्रतमें अतिचार के लगने पर १०८ उच्छ्वासों में ही दैवसिक प्रतिक्रमण विधि करना चाहिए।

गोचरी करके आने पर गोचार प्रतिक्रमण में ग्रामांतर गमन में तथा जिन भगवान् की निषद्या भूमि अर्थात् जन्म तप ज्ञान निर्वाण स्थानों की वन्दना में तथा श्रमण निषद्या भूमि की वन्दना में व मलमूत्रादि विसर्जनमें २५ उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करना चाहिये तथा——उद्देश–ग्रन्थादिके प्रारम्भ कालमें, निर्देश–समाप्ति काल में स्वाध्याय करने में देवगुरु वन्दना करने में सत्ताईस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग होता है।

विशेष—दैवसिकादि कायोत्सर्ग वीरभक्ति की प्रतिज्ञा करने पर अर्थात् वीरभक्ति पढ़ने से पहले करना चाहिये निषद्या वन्दना स्वाध्यायादि कायोत्सर्ग उन उन क्रियाओं की "कृत्यविज्ञापना" अनन्तर करना चाहिए तथा मल मूत्रादि विसर्जन में कोई २ ईर्यापथ शुद्धि प्रतिक्रमण कहते हैं परन्तु वास्तव में इनका प्रतिक्रमण दैवसिक रात्रिक प्रतिक्रमण में आये हुए उत्सर्ग समिति प्रतिक्रमण "उच्चार पस्सवण" इत्यादि में हो जाता है पृथक् करने का कोई विधान नहीं आया अतः कायोत्सर्ग मात्र करना चाहिए।

प्रतिदिन के कायोत्सर्ग की गणना

स्वाध्याये द्वादशेष्टा-षड्वन्दनेऽष्टौ प्रतिक्रमे।
कायोत्सर्गा योगभक्तौ द्वौ चाहोरात्रगोचराः ॥७५॥

॥ अ० प्र० ८॥

एक एक वारके स्वाध्यायमें तीन तीन भक्ति सम्बन्धी तीन २ कायोत्सर्गों के होने से, चार वारके स्वाध्याय के १२ तथा त्रिकाल देव बन्दना (सामायिक) सम्बन्धी दो दो मिलकर छह हुये। दैवसिक, रात्रिक प्रतिक्रमण सम्बन्धी आठ तथा रात्रि योग ग्रहण मे १ व निष्ठापन में एक मिलाकर २८ कायोत्सर्ग मुनियों को नित्य प्रति करने योग्य है।

भक्ति में कृतिकर्म में कायोत्सर्ग की विधि

दुओणदं जहाजादं बारसावत्तमेव च।
चदुस्सिरं तिसुद्धं च किदियम्मं पउंजदे ॥मूलाचारे॥

तथाहि—क्रियायामस्यां व्युत्सर्गभक्तेरस्याः करोम्यहं।
विज्ञाप्येति समुत्थाय गुरुस्तवनपूर्वकम् ॥
कृत्वा करसरोजातमुकुलालकृतं निजं।
भाललीलासरः कुर्यात्त्र्यावर्ता शिरसो नतिम् ॥
आद्यस्य दण्डकस्यादौ मंगलादेरयं क्रमः।
तदंगेऽप्यंगव्युत्सर्गः कार्योऽतस्तदनंतरम्।
कुर्यात्तथैव थोस्सामीत्याद्यार्याद्यन्तयोरपि।
इत्यस्मिन्–द्वादशावर्ता शिरोनतिचतुष्टयं ॥
॥ आचारसारे ॥

अर्थ—इस क्रिया मे इस भक्ति के कायोत्सर्ग को मैं करता हूं। इस प्रतिज्ञा को करके उठकर के "णमोकार

मन्त्र" को एक बार पढ़कर हस्त को मुकुलित करके तीन आवर्त और एक शिरोनति पूर्वक नमस्कार करे। चत्तारि दंडक पढ़कर पुनः तीन आवर्त एक शिरोनति करे। अनन्तर कायोत्सर्ग (नव वार महामन्त्र जप) करें पुनः नमस्कार करके तीन आवर्त व एक शिरोनति करके थोस्सामि स्तव दंडक पढ़े व पुनः तीन आवर्त एक शिरोनमन करे इस प्रकार से एक कायोत्सर्ग के कृति कर्म मे द्वादश आवर्त और चार शिरोनति होती हैं।

मन्त्र जपनेकी विधिः

जिनेन्द्र मुद्रया गाथां ध्यायेत् प्रीतिविकस्वरे।
हृत्पंकजे प्रवेश्यांतर्निरुद्ध्य मनसानिलम् ॥२२॥
पृथग्द्वि द्व्येक गाथांश चिंतांते रेचयेच्छनैः।
नव कृत्वः प्रयोक्तैवं दहत्यंहः सुधीर्महत् ॥२३॥

॥ अनगा० ६ अ० ॥

अर्थ—प्रीति से विकास को प्राप्त हृदय कमल में मन के वायु को अन्दर लेजाकर तथा अन्दर ही रोक कर मन्त्र का ध्यान करे। पृथक् पृथक् गाथा के दो दो अंशों में एक एक से रेचन (वायु को बाहर) करे। यथा "णमो अरहन्ताणं" चिन्तवन करते हुए श्वास अन्दर ले जाकर रोके। "णमो सिद्धाणं" चिंतवन में उच्छ्वास

को बाहर निकाले। "णमो आइरियाणं" में अन्दर लेवे। "सव्वसाहूणं" पद के चिन्तवन से वायु को बाहर निकाले। इस प्रकार एक मन्त्रमें तीन स्वासोच्छ्वास के होने से नव बार मन्त्र के जपने से २७ स्वासोच्छ्वास होते है जो महान् पापों को नाश करने में समर्थ होते हैं।

इसी प्रकार १८ बार मन्त्र के जपने में ५४, ३६ बार में १०८, १२ कायोत्सर्ग में ३००, १६ कायोत्सर्ग मे ४००, व २० कायोत्सर्ग में ५०० उच्छ्वास होते है।

यहां पर कायोत्सर्ग का लक्षण नवबार मन्त्र जप का है। तथा इतने इतने उच्छ्वास प्रमाण जप को भी कायोत्सर्ग कहते है।

मानसिक जप चिंतवन प्रति अशक्त जीवों के लिए कहते है—

वाचाप्युपांशु व्युत्सर्गे कार्यो जाप्यः स वाचिकः।
पुण्यं शतगुणं चैत्तः सहस्रगुणम वहेत् ॥२४॥

॥ अन० अ० ६ ॥

अर्थ—वचनके द्वारा जिसका स्पष्ट उच्चारण अन्य न सुन सकें अपने ही अन्तरंग में उच्चारण हो उसे उपांशु जप कहते है। यथा—"णमो अरहंताणं" पढ़कर रुक जावे, णमो सिद्धाणं पढ़कर रुके, णमो आइरियाणं व णमो उवज्झायाणं पढ़कर रुके अनन्तर "णमो लोए"

"सव्वसाहूणं" पढ़कर रुकने से इस वाचिक जाप्य में सौ गुणा फल होता है, व चिन्तवन स्वरूप मानसिक जाप्य में सहस्र गुणा फल प्राप्त होता है।

अपराजितमन्त्रो वै सर्वविघ्नविनाशनः।
मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः॥

तथा—अकलंक प्रतिष्ठादि शास्त्रों में भी भक्तियोंके करने का विधान इसी प्रकार से ही किया गया है।

विधि—अथ······१ क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तव समेतं···२··· भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। इति विज्ञाप्य-भूमि स्पर्शनात्मक नमस्कार करे।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं॥
चत्तारि मङ्गलं अरहन्त मङ्गलं सिद्ध मङ्गलं
साहू मङ्गलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मङ्गलं।
चत्तारि लोगुत्तमा अरहन्त लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

---

१ जिस क्रिया को करना हो उसका नाम लेना यथा "नदीश्वर पर्व क्रियायां" इत्यादि। २—जिस भक्ति को करना हो उसका नाम लेवे यथा सिद्धभक्ति इत्यादि।

(यहां मन्त्र पढ़ते हुए मुकुलित अंजलि से तीन आवर्त और शिरोनति करें)

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहन्त सरणं पव्वजामि सिद्धसरणं पव्वजामि साहू सरणं पव्वजामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि। अड्ढाइज्ज दीव दो समुद्देसु पण्णारस कम्म भूमिसु जाव अरहंताणं भयवन्ताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं अन्तयडाणं पारयडाणं धम्माइरियाणं धम्म देसियाणं धम्मणायंगाणं धम्मवरचाउरंगचक्कवट्टीणं देवाहिदेवाणं णाणाणं दंसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं करेमि भंते! सामायिय सव्व सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीव तिविहेण मणसा वचसा कायेण ण करेमि ण कारेमि कीरन्तं पि ण समणुमणामि। तस्स भन्ते! अइचारं पच्चक्खामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवन्ताणं पज्जुवासं करेमि ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(इस प्रकार सामायिक दण्डक पढ़कर पुनः तीन आवर्त व एक शिरोनति करे पश्चात् जिस मुद्रा से कायोत्सर्ग करे सत्तावीस उच्छ्वास में ९ जाप्य, अनन्तर प्रणाम (नमस्कार) करके पुनः खड़े होकर तीन आवर्त व एक शिरोनति करे। व मुक्ताशुक्ति मुद्रा के द्वारा चतुर्विंशति स्तव पढ़े।

स्तव—थोस्सामिहं जिणवरे तित्थयरे केवलि अणन्त जिणे।
णर पवर लोय महिये विहुयरयमले महप्पण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे।

अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ॥ ३ ॥
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमलमणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥
कुन्थुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामि रिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ॥ ५ ॥
एवं मए अभित्थुआ विहूयरयमला पहीणजरमरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥ ७ ॥
चंदेहिं णिम्मलयरा आइच्चेहिं अहियपयासंता ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ८ ॥

अनन्तर तीन आवर्त व एक शिरोनति करे। इस तरह एक कायोत्सर्ग मे दो प्रणाम बारह आवर्त चार शिरोनमन होते हैं।

पुनः जिस भक्ति हेतुक कायोत्सर्ग किया है उस भक्ति का पाठ करें।

पूर्वोक्त प्रमाण आवर्त व शिरोनमन समान होते हुए भी कहीं कहीं दण्डक व स्तव ······ में लघुता पाई जाती है—तद्यथा

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥

चत्तारि मंगलं—अरहन्त मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं, चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्वज्जामि सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वजामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि। तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ॥

सत्तावीस उच्छ्वास में ६ जाप्य

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवलि अणन्तजिणे।
णरपवरलोयमहिये विहुयरयमले महप्पण्णे ॥
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तीत्थंकरे जिणे बन्दे।
अरहन्त कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥

किसी भी क्रिया की कृत्यविज्ञापना में कायोत्सर्ग के साथ जो दण्डक व स्तव का विधान आता है वहाँ पर उपरोक्त यही विधि की जाती है समय कम अथवा कारण वश लघु पाठ भी हो सकता है।

(अर्ध रात्रि के दो घड़ी अनन्तर से सूर्योदय से दो घड़ी पहले तक विरात्रि कहलाती है)।

नित्य क्रिया प्रयोग

अर्थ वैरात्रिक स्वाध्याय प्रतिष्ठापन क्रियायां श्रुत भक्ति कायोत्सर्गं करोमि (दंडकं पठित्वा जाप्य स्तव)।

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगं विशालं।
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं,
भक्त्या नित्यं प्रवन्दे श्रुतमहमखिल सर्वलोकैकसारम् ।१।
जिनेन्द्रवक्त्रप्रतिनिर्गतं वचो यतीन्द्रभूतिप्रमुखैगणाधिपैः
श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं।
कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि ॥
अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भक्तिजुत्तो सुदणाणं महोवयं सिरसा ॥४॥

अंचलिका

इच्छामि भन्ते ! सुदभक्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेउं अंगोवंगपइण्णय पाहुडय परियम्मसुत्त पढमाणियोग पुव्वगय चूलिया चेव सुतत्थ थुय धम्म कहाइयं सुदं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्ति होउ मज्झं।

अथ वैरात्रिक स्वाध्याय प्रतिष्ठापन क्रियायां श्रीआचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

दंडकं पठित्वा

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रविषयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः ।
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः ॥
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया ।
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ॥१॥
श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने,
परिणतिरुरुद्योगो मार्गप्रवर्तनसद्विधौ ।
बुधनुतिरनुत्सेको लोकज्ञता मृदुता स्पृहा,
यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोस्तु गुरुः सतां ॥२॥
श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावना पटुमतिभ्यः ।
सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥३॥
छत्तीस गुण समग्गे पंचविहाचारकरणसंदरिसे ।
सिस्साणुग्गह कुसले धम्माइरिये सदा वन्दे ॥४॥
गुरुभक्ति संजमेण य तरंति संसारसायरं घोरं ।
छिंदंति अट्ठकम्मं जम्मण मरणं ण पावेंति ॥५॥
ये नित्यं व्रतमन्त्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः ।
षट् कर्माभिरतास्तपोधनधनाः साधुक्रियाः साधवः ।
शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वारकपाटपाटनभटाः प्रीणंतु मां साधवः ॥६॥

गुरवः पांतु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।
चारित्रार्णवगम्भीराः मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥७॥

इच्छामि भन्ते आइरियभत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाणसम्मदंसण सम्मचारित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरीयाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगई गमणं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ।

स्वाध्याय प्रारम्भः

त्रैकाल्यंद्रव्यषट्कं नवपदसहितं जीवषट्कायलेश्याः ।
पंचान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगतिज्ञानचारित्रभेदाः
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ।
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः
सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविह आराहणाफलं पत्ते,
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ।
उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णित्थरणं
दंसणणाणचरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥

(कोई भी शास्त्र का स्वाध्याय करे) स्वाध्याय के अनन्तर अथ वैरात्रिक स्वाध्याय निष्ठापनक्रियायां

पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवन समेतं श्रीश्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

दण्डकं पठित्वा

नोट—अर्हद्वक्त्र प्रसूतं गणधररचितमित्यादि ।

इच्छामि भंते सुदभत्ति काओसग्गो कओ इत्यादि च ।

पूर्वाण्ह स्वाध्यायहेतु दिक्शुद्धिविधिः

पश्चाद् वाहर निकल कर शुद्ध प्रासुक भूमि में स्थित होकर "पौर्वाण्हिक" स्वाध्याय के हेतु दिक् शुद्धि करे । अर्थात्:—

निष्ठाप्य पश्चिमस्यामास्वाध्यायं शुद्धिभूस्थितः ।
व्युत्सर्गेणेन्द्रकीनाशप्रचेतोधनिनां दिशः ॥७३॥
नवार्या पाठकालेन प्रत्येकं शोधयेद्यं ।
पूर्वाण्ह वाचनाहेतोः कालशुद्धि विधिस्त्वयम् ॥७४॥

आचारसारे अध्याय

अर्थः—"वैरात्रिक स्वाध्याय" का निष्ठापन शुद्ध भूमि में स्थित होकर कायोत्सर्ग से नव नव बार णमोकार मन्त्र पढ़ कर पूर्वाण्ह वाचना के लिये पूर्व, दक्षिण, पश्चिम व उत्तर दिशाओं की शुद्धि करे अर्थात् क्रम से चारों दिशाओं में नव नव बार महामन्त्र का उच्चारण करे ।

रात्रि प्रतिक्रमण व योग निष्ठापन की प्रयोग विधि

श्लोक :—भक्त्या सिद्धप्रतिक्रांति वीरद्विद्वादशार्हताम् । प्रतिक्रामेन्मलं योगं योगिभक्त्या भजेत्त्यजेत् ।

अर्थ—सिद्धभक्ति प्रतिक्रमणभक्ति, वीरभक्ति और चतुर्विंशति भक्ति के द्वारा रात्रि जन्य दोषों का प्रतिक्रमण करे ।

"रात्रौ भवा रात्रिकी पश्चिमरात्रावनुष्ठेया"

अर्थात् रात्रि सम्बन्धी दोषों की विशुद्धि के लिये जो प्रतिक्रमण है वह रात्रिक प्रतिक्रमण कहलाता है और पश्चिम रात्रि में उसका अनुष्ठान करना चाहिये । और योगभक्ति के द्वारा रात्रियोग ग्रहण व मोचन करे "अद्य रात्रावत्र वसत्यां स्थातव्यमिति नियमविशेषं योगं" आज रात्रि में मैं इसी वसतिका में रहूंगा इस नियमविशेष को योग कहते हैं ।

॥ रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमणम्

जीवे प्रमादजनिताः प्रचुराः प्रदोषा, यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयांति । तस्मात्तदर्थममलं मुनिबोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोधनार्थं ॥ १ ॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना ।

रागद्वेष मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम् ॥
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र भवतः श्रीपादमूलेऽधुना ।
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ॥ २ ॥
खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वेरं मज्झं ण केण वि ॥ ३ ॥
रागबंध पदोसं च हरिसं दीणभावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे ॥ ४ ॥
हा दुट्ठ कयं हा दुट्ठचिंतियं भासियं च हा दुट्ठं ।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छुत्तावेण वेदंतो ॥ ५ ॥
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराहसोहणयं ।
णिंदण गरहण जुत्तो मण वच कायेण पडिकमणम् ॥६॥
एइंदिया, वेइंदिया, ते इंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया,
पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणप्फ-
दिकाइया तसकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं
उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु
मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।
वदसमिदिंदिय रोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥ १ ॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥
छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

पंचमहाव्रत-पंचसमिति पंचेन्द्रियरोध लोच—षडावश्यक क्रियादयोऽष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौच-सत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्म अष्टादशशीलसहस्राणि, चतुरशीतिलक्षगुणाः, त्रयो-दशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति सकलं सम्पूर्णं अर्ह-त्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुसाक्षिकं सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु।

अथ सर्वातिचारशुद्ध्यर्थं रात्रिकप्रतिक्रमणक्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं आलोचनासिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्—

(अपराह्न में दिवस सम्बन्धी प्रतिक्रमण में 'दैवसिक' शब्द का प्रयोग करें)

इति प्रतिज्ञाप्य

णमो अरहंताणमित्यादि सामायिकदंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात्।

थोस्सामीत्यादि (चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्)

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमितविद्विषे।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते॥ १॥
तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि॥ २॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविहकम्ममुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पयिट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीदाणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्ती होउ मज्झं ।

आलोचना—

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो, पंचमहव्वदाणि पंचसमिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणिणंवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जा—संखेज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणन्ताणंता हरिआ वीआ अंकुरा छिण्णा भिण्णा, तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

बेइंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खिकिमि संखखुल्लुय वराडय—अक्ख रिट्ठवाल संबुक्क-सिप्पि-पुंलविकाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा

कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २ ॥

तेइंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुंथु-द्देहिय-विंछियगोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंसमसयमक्खि-पयगकीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उब्भेदिमा उववादिमा अवि चउरासीदिजोणिपमुहसदसहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ५ ॥

प्रतिक्रमणपीठिकादण्डकः

इच्छामि भन्ते ! (देवसियम्मि) राईयम्मिआलोचेउं, पंचमहव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेर-

मणं, विदियं महव्वद मुसावादादो वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदत्तादाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राईभोयणादो वेरमणं, इरियासमिदीए भासासमिदीए, एसणासमिदीए, आदाणणिक्खेवणसमिदीए, उच्चारपस्सवण-खेलसिंहाणवियडिपइट्ठावणियासमिदीए, मणगुत्तीए वचिगुत्तीए कायगुत्तीए, णाणेसु दंसणेसु चरित्तेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस सीलसहस्सेसु चउरसीदिगुण सगसहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अङ्गाणं चोदसण्हं पुव्वाणं, दसण्हं मुंडाणं दसण्हं समणधम्माणं, दसण्हं धम्मज्झाणाणं णवण्हं बंभचेरगुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हंकम्माणं अट्ठण्हं पवयणमाउयाणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविहं संसाराणं, छण्हं जीवणिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इंदियाणं पंचण्हं पञ्चमहव्वयाणं पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं दिट्ठियाए पुट्ठियाए पदोसियाए परदावणियाए, से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पदोसेण वा

पमादेण वा पिम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा एदेसिं अच्चासणदाए तिण्हं दंडाणं तिण्हं लेस्साणं तिण्हं गारवाणं, दोण्हं अट्टरुद्दसंकिलेसपरिणामाणं, तिण्हं अप्पसत्थसंकिलेस परिणामाणं, मिच्छणाण-मिच्छदंसण-मिच्छचरित्ताणं मिच्छत्तपाउग्गं असंयमपाउग्गं, कसाय पाउग्गं, जोगपाउग्गं, अपाउग्गसेवणदाए, पाउग्गगरहणदाए, इत्थं मे जो कोई (देवसिओ) राईओ अदिक्कमो वदिक्किमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो। तस्स भन्ते ! पडिक्कमामि, मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं समाहिमरणं पंडियमरणं, वीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिण-गुणसम्पत्ति होउ मज्झं ॥ २ ॥

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदन्तवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥ १ ॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तोहं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

(इति प्रतिक्रमणपीठिकादंडकः)

अथ सर्वातिचारविशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमणक्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सक-

लकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीप्रतिक्रमणभक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम्—

णमो अरहन्ताणं (इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात। अनन्तरं थोस्सामीत्यादि पठेत्)।

(निषिद्धिकादंडकाः)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥३॥

णमो जिणाणं ३, णमोणिस्सिहीए ३, णमोत्थु दे ३, अरहंत! सिद्ध! बुद्ध! णीरय! णिम्मल! समभण! सुभमण! सुसमत्थ! समजोग! समभाव! सल्लघट्टाण सल्लघत्ताण! णिब्भय! णीराय! णिद्दोस! णिम्मोह! णिम्मम! णिस्संग! णिस्सल्ल! माण-माय मोस-मूरण! तवप्पहावण! गुणरयण-सीलसायर अणंत! अप्पमेय! महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धरिसिणो चेदि णमोत्थु ए णमोत्थु ए णमोत्थु ए।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केवलिणो ओहिणाणिणो मणपज्जवणाणिणो चउदसपुव्वं-गामिणो सुदसमिदिसमिद्धा य तवो य बारहविहो तवस्सो, गुणा य गुणवन्तो य महरिसी तित्थं तित्थंकरा य, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणीओ विणदा य, बंभचेरवासी बंभ-

चारीय, गुत्तीओ चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ चेव मुत्ति-मंतो य, समिदीओ चेव समिदिमन्तो य, सुसमयपरसमय-विदू, खंतिक्खवगा य, खंतिवंतो य, खीणमोहा य खीणवंतो य बोहियबुद्धा य बुद्धिमन्तो य, चेइयरुक्खा य चेइयाणि।

उड्ढमहतिरियलोए सिद्धायदणाणि णमंसामि, सिद्ध-णिसीहियाओ अट्ठावयपव्वए सम्मेदे उज्जंते चंपाए पावाए मज्झिमाए हत्थिवालियसहाए जाओ अण्णाओ काओवि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि, इसिपब्भारतलग्ग-याणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं, गुरुआइरिय-उवज्झायाणं, पव्वत्तित्थेर-कुलयराणं, चउवण्णो य समणसंघो य भरहेरावएसु दससु पंचसु महाविदेहेसु। जे लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं। एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थ-यम्मि, तिविहं, तियरणसुद्धो ॥६॥

(इति निषिधिका दण्डकः)

पडिक्कमामि भन्ते ! राइयस्स (देवसियस्स) अइचारस्स अणाचारस्स मणदुच्चरियस्स वचिदुच्चरियस्स कायदु-च्चरियस्स णाणाइचारस्स दंसणाइचारस्स तवाइचारस्स वीरियाइचारस्स चारित्ताइचारस्स पंचण्हं महव्वयाणं पंचण्हं समिदीणं तिण्हं गुत्तीणं छण्हं आवासयाणं छण्हं

जीवणिकायाणं विराहणाए पील कदो वा कारिदो व कीरन्तो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

पडिक्कमामि भन्ते ! अइगमणे णिग्गमणे ठाणे गमणे चंकमणे उव्वत्तणे आउंटणे पसारणे आमासे परिमासे कुइदे कक्कराइदे चलिदे णिसण्णे सयणे उव्वट्टणे परियट्टणे एइंदियाणं वेइंदियाणं तेइंदियाणं चउरिंदयाणं पंचिन्दियाणं जीवाणं संघट्टणाए संघादणाए उद्दावणाए परिदावणाए विराहणाए एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइयो), अदिक्कमो वदिक्कमो अइचारो णाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

पडिक्कमामि भन्ते ! इरियावहियाए विराहणाए उड्ढमुहं चरंतेण वा अहोमुहं चरंतेण वा तिरियमुहं चरन्तेण वा दिसिमुहं चरन्तेण वा विदिसिमुहं चरन्तेण वा पाणचंकमणदाए बीयचंकमणदाए हरियचंकमणदाए उत्तिंगपणयदयमट्टियमक्कडय तन्तुसत्ताण चंकमणदाए पुढविकाइयसंघट्टणाए आउकाइयसंघट्टणाए तेउकाइयसंघट्टणाए वाउकाइयसंघट्टणाए वणप्फदिकाइयसंघट्टणाए तसकाइयसंघट्टणाए परिदावणाए विराहणाए इत्थ मे जो कोई इरियावहियाए अइचारो अणाचारो तस्समिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

पडिक्कमामि भन्ते ! उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण वियडिपयट्ठावणियाए पइट्ठागंतेण जो कोई पाणा वा भूदा वा जीवा वा सत्ता वा संघट्टिदा वा संघादिदा वा उद्दाविदा वा परिदाविदा वा इत्थ मे जो कोई राईओ देवसिओ अईचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।४।

पडिक्कमामि भन्ते ! अणेसणाए पाणभोयणाए पणयभोयणाए बीयभोयणाए हरियभोयणाए आहा-कम्मेण वा पच्छाकम्मेण वा पुराकम्मेण वा उद्दिट्ठयडेण वा णिद्दिट्ठयडेण वा दयसंसिट्ठयडेण वा रससंसिट्टयडेण वा परिसादणियाए पइट्ठावणियाए उद्देसियाए णिद्देसियाए कीदयडे मिस्से जादे ठविदे रइदे अणसिट्ठे वलिपाहुडदे पाहुडदे घट्टिदे मुच्छिदे अइमत्तभोयणाए इत्थ मे जो कोई गोयरिस्स अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ५

पडिक्कमामि भन्ते ! सुमणिंदियाए विराहणाए इत्थि-विप्परियासियाए दिट्ठिविप्परियासियाए मणविप्परियासि याए वचिविप्परियासियाए कायविप्परियासियाए भोयण विप्परियासियाए उच्चावयाए सुमणदंसणविप्परियासियाए पुव्वरए पुव्वखेलिए णाणाचिंतासु विसोतियासु इत्थ मे जो कोई देवसिओ राईओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥६॥

पडिक्कमामि भन्ते ! इत्थीकहाए अत्थकहाए भत्त-कहाए रायकहाए चोरकहाए वेरकहाए परपासंडकहाए देसकहाए भासकहाए अकहाए विकहाए णिट्ठल्लकहाए परपेसुण्णकहाए कन्दप्पियाए कुक्कुच्चियाए डंवरियाए मोक्खरियाए अप्पपसंसणदाए परपरिवादणदाए परदुगन्छणादाए परपीडाकराए सावज्जाणुमोयणियाए इत्थ मे जो कोई देवसिओ राईओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

पडिक्कमामि भन्ते ! अट्टज्झाणे रुद्दज्झाणे इहलोय सण्णाए परलोय सण्णाए आहारसण्णाए भयसण्णाए मेहुणसण्णाए परिग्गहसण्णाए कोहसल्लाए माणसल्लाए मायासल्लाए लोहसल्लाए पेम्मसल्लाए पिवाससल्लाए णियाणसल्लाए मिच्छादंसणसल्लाए कोहकसाए माण-कसाए मायकसाए लोहकसायेकिण्ह लेस्स परिणामे णीलसलेस्सपरिणामे काउलेस्सपरिणामे आरंम्भपरिणामे परिग्गहपरिणामे पडिसयाहिलासपरिणामे मिच्छादंसणपरि-णामे असंजमपरिणामे पावजोगपरिणामे कायसुहाहिलासपरि-णामे सद्देसु रूवेसु गन्धेसु रसेसु फासेसुकाइयाहिकरणि-याए षदोसियाए परिदावणियाए पाणाइवाइयासु, इत्थ मे जो कोई देवसिओ राईओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

पडिक्कमामि भन्ते ! एक्के भावे अणाचारे, वेसु राय-दोसेसु, तीसु दण्डेसु, तीसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु, पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु, छसु जीवणिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, णवसु बंभचेरगुत्तीसु, दसविहेसु समणधम्मेसु एयारस विहेसु उपासय पडिमासु बारह विहेसु भिक्खुपडिमासु, तेरसविहेसु किरियाट्ठाणेसु चउदस विहेसु भूदगामेसु, पण्णारसविहेसु पमायठाणेसु, सोलसविहेसु पवयणेसु, सत्तारसविहेसु असंजमेसु, अट्ठारसविहेसु असंपराएसु उणवीसाए णाहज्झाणेसु, वीसाए असमाहिट्ठाणेसु, एक्कवीसाए सवलेसु, बावीसाए परीसहेसु, तेवीसाए सुद्दयडज्झाणेसु, चउवीसाए अरहन्तेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियाट्ठाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्तावीसाए अणगारगुणेसु, अठ्ठावीसाए आयारकप्पेसु, एउणतीसाए पावसुत्तपसंगेसु, तीसाए मोहणीठाणेसु, एक्कत्तीसाए कम्मविवाएसु वत्तीसाए जिणोवएसेसु तेत्तीसाए अच्चासणदाए, संखेवेण जीवाण अच्चासणदाए, अजीवाण अच्चासणदाए, णाणस्स अच्चासणदाए, दसणस्स अच्चासणदाए, चरित्तस्स अच्चासणदाए, तवस्स अच्चासणदाए, वीरियस्स अच्चासणदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं

गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुपण्णं इक्कं तं पडिक्कमामि, अणागयं पच्चक्खामि, अगरहियं गरहामि, अणिंदियं णिंदामि, अणालोच्चियं आलोचेमि, आराहणंमब्भुट्ठेमि विराहणं पडिक्कमामि इत्थ मे जो कोई (देवसिओ) राईओ,अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥६॥

इच्छामि भन्ते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं णेगाइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं सेढिमग्गं खंतिमग्गं मुत्तिमग्गं पमुत्तिमग्गं मोक्खमग्गं पमोक्खमग्गं णिज्जाणमग्गं णिव्वाणमग्गं सव्वदुक्खपरिहाणिमग्गं सुचरियपरिणि-व्वाणमग्गं अविगहं अविसंतिपवयणं उत्तमं त सद्दहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदोत्तरं अण्णं ण त्थि ण भूदं भवं ण भविस्सादि णाणेण वा दंसणेण वा चरित्तेण वा सुत्तेण वा इदो जीवा सिज्झन्ति बुज्झन्ति मुंचन्ति परिणिव्वायन्ति सव्वदुक्खाणमंतं करेन्ति पडि-वियाणंति समणोमि संजदोमि उवरदोमि उवसन्तोमि उवहि णियडिमाणमायमोसमिच्छाणाण-मिच्छदंसण मिच्छ-चरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण सम्मदंसणसम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्णत्तं, इत्थ मे जो कोई (देवसिओ) राईओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

पडिक्कमामि भन्ते ! सवस्स सव्वकालियाए इरियासमिदीए, भासासमिदीए एसणासमिदीए आदाणनिक्खेवणासमिदीऐ, उच्चारपस्सवणखेलसिंहाणयवियडिपइट्ठावणिसमिदीए मणगुत्तीए वचिगुत्तीए कायगुत्तीए पाणादिवादादो वेरमणाए मुसावादादो वेरमणाए, अदिण्णदाणादो वेरमणाए, मेहुणादो वेरमणाए, परिग्गहादो वेरमणाए, राईभोयणादो वेरमणाए, सव्वविराहणाए सव्वधम्मअइक्कमणदाए सव्वमिच्छाचरियाए इत्थ मे जो कोई (देवसिओ) राईओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥११॥

इच्छामि भन्ते ! वीरभत्तिकाउस्सग्गो जो मे देवसिओ राईओ अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो काइओ वाइओ माणसिओ दुच्चिंतीओ दुब्भासिओ दुप्परिणामीओ दुस्समिणीओ, णाणे दंसणे चरित्ते सुत्ते सामाइए, पंचण्हं महव्वयाणं पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीणं, छण्हं जीवणिकायाणं, छण्हं आवासगाणं विराहणाए अट्ठविहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए अण्णहा उस्सासिएण वा णिस्सासिएण वा उम्मिसीएण वा णिम्मिसिएण वा खासिएण वा छिंविएण वा जम्भाइएण वा सुहुमेहिं अंगचलाचलेहिं दिट्ठिचलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं असमाहिपत्तेहिं आयरेहिं

जाव अरहन्ताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवसयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचारविशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमणक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं निष्ठितकरणवीरभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं ।

इति प्रतिज्ञाप्य

दिवसे १०८ रात्रि प्रति क्रमणे ५४ उच्छ्वासेषु णमो अरहंताणं इत्यादि दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् पश्चात् थोस्सामीत्यादि चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्

णमो अरहन्ताणं इत्यादि दण्डक पाठ का उच्चारण कर ५४ उच्छ्वास में कायोत्सर्ग करे अर्थात् दो कायोत्सर्ग करे तथा दैवसिक प्रतिक्रमण में १०८ उच्छ्वासों में अर्थात् चार कायोत्सर्ग करे ।

विशेष—यहां पर उच्छ्वास रूप से कायोत्सर्ग का प्रमाण लेने से दो अथवा चार कायोत्सर्ग होते हुए भी ५४ व १०८ उच्छ्वासों प्रमाण एक ही कायोत्सर्ग समझना चाहिये, क्योंकि बृहत्कायोत्सर्ग ३०० उच्छ्वास १२ कायोत्सर्ग में होता है इसलिये

हो दैवसिक रात्रिक प्रतिक्रमण में चार भक्ति में चार चार कायोत्सर्ग ही गणना में आते हैं।

वीरभक्ति

य: सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्
पर्यायानपि भूतभाविभवत: सर्वान् सदा सर्वदा।
जानीते युगपत् प्रतिक्षणमत: सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नम: ॥१॥

वीर: सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधा: संश्रिता:,
वीरेणाभिहत: स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नम:।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो,
वीरे श्रीद्युतिकांतिकीर्तिधृतयो हे वीर! भद्रं त्वयि ॥२॥

ये वीरमादौ प्रणमंति नित्यं,
ध्यानस्थिता: संयमयोगयुक्ता:।
ते वीतशोका हि भवंति लोके,
संसारदुर्गं विषमं तरंति ॥ ३ ॥

व्रतसमुदयमूल: संयमस्कंधबंधो,
यमनियमपयोभिर्वर्धित: शीलशाख:।
समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो,
गुणकुसुमसुगंधि: सत्तपश्चित्रपत्र: ॥४॥

शिवसुखफलदायी यो दयाछाययोद्घ:,
शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थ:।

दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तभावं,
स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥ ५ ॥
चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः।
प्रणमामि पंचभेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥ ६ ॥
धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं एहे धर्म ! मां पालय ॥७॥
धम्मो मंगलमुद्दिट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

अंचलिका—

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचारमालोचेउं, म-
म्मणाणसम्म दंसण—सम्मचारित्त—तव-वीरियाचारेसु जम-
णियम—संजमसीलमूलुत्तरगुणेसु सव्वमईचारं सावज्जोगं
पडिविरदोमि असंखेज्जलोगअज्झवसाठाणाणि अप्पसत्थ-
जोगसण्णाणिंदियकसायगारवकिरियासु मणवयणकायक-
रणदुप्पणिहाणाणि परिचितिताणि किण्हणीलकाउलेस्सा-
ओ विकहापलिकुंचि-एण उम्मगहस्सरदिअरदिसोयभयदु-
गछवेय णविज्झंभजंभाइआणि अट्टरुद्दसंकिलेसपरिणामाणि
परिणामदाणि अणिहुदकरचरणमणवयणकायकरणेण अक्खि-
त्तबहुलपरायणेण अपडिपुण्णेण सरक्खरणायपरिसंणाय-

डिवचिए वा अच्छाकारिदं मिच्छा मेलिदं आमेलिदं वा मेलिदं वा अण्णहादिण्णं अण्णहापडिच्छदं आवासएसु परिहीणदाए कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु-मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं ठितिभोयणमेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥
छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं ।

अथ सर्वातिचारविशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रति-क्रमणक्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं चतुर्विंशति-तीर्थंकरभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

इति प्रतिज्ञाप्य

—❀—

णमो अरहंताणं इत्यादि (दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात्)
(थोस्सामीत्यादि चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्)

चउवीसं तित्थयरे उसहाइवीरपच्छिमे वंदे ।
सव्वे सगणगणहरे सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥१॥
ये लोकेऽष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ।

ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिता—
स्तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ।२
नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं,
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगणवृषभं नंदनं देवदेवं ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगंधं
क्षांतं दान्तं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे ।३।
विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं,
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यं ।
मुक्तं दांतेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रं
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ।।४।।
कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम्
देवेन्द्राच्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचंद्रं भवांतं
पार्श्वं नागेन्द्रवंद्यं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ।५।

अंचलिका—

इच्छामि भंते चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं अट्ठमहापाडिहेर-सहियाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेविंदमणि-मउडमत्थयमहियाणं बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजइअ-णगारोवगूढाणं थुइसहस्सणिलयाणं उसहाइवीरपच्छिम-मंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि

णमंसामिदुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ती होउ मज्झं।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तोहं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं।

अथ सर्वातिचारशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमणक्रियायां श्रीसिद्धभक्तिप्रतिक्रमणभक्ति—निष्ठित करण वीर भक्ति—चतुर्विंशतितीर्थंकरभक्तीः कृत्वा तद्धीनादिकदोषविशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(इति विज्ञाप्य)

णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् । थोस्सामीत्यादि स्तवं पठेत्।

अथेष्टप्रार्थनेत्यादि पूर्वोक्तां समाधिभक्तिं पठेत्।

इति रात्रिक दैवसिक प्रतिक्रमणं वा समाप्तम्।

नोट :—अपराण्ह कालके दिवस सम्बन्धी प्रतिक्रमण में "रात्रिक" राइयम्मि "राइओ" शब्द को न बोल कर (दैवसिक) आदि शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिए।

अपराह्ण काल में दैवसिक प्रतिक्रमणानन्तर ग्रहण किये गये रात्रि योग का इस समय त्याग करे।

अथ रात्रि योग निष्ठापन क्रियायां योगभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

णमो अरहन्ताणं इत्यादि कायोत्सर्ग, थोस्सामी-त्यादि। जातिजरोरुरोगमरणा इत्यादि योगभक्ति सां-चलिकां पठेत्। अथवा प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित ...... इत्यादि पठेत्।

अथ योगभक्तिः

जातिजरोरुरोगमरणातुरशोकसहस्रदीपिताः, दुःस-हनरकपतनसन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्धचेतसः। जीवितमंबुबिं-दुचपलं तडिदभ्रसमा विभूतयः, सकलमिदं विचिन्त्य मुनयः प्रशमाय वनान्तमाश्रिताः॥१॥ व्रतसमितिगुप्ति-संयुताः शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः। ध्यानाध्य-यनवशंगताः विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति॥२॥ दिनकर-किरणनिकरसन्तप्तशिलानिचयेषु निःस्पृहाः मलपटलाव-लिप्ततनवः शिथिलीकृतकर्मबंधनाः॥ व्यपगतमदनदर्प-रतिदोषकषायविरक्तमत्सराः। गिरिशिखरेषु चंडकिरणाभि-मुखस्थितयो दिगम्बराः॥३॥ सज्ज्ञानामृतपायिभिः क्षांतिपयःसिच्यमानपुण्यकायैः। धृतसन्तोषच्छत्रकैस्ताप-स्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः॥४॥ शिखिगलकज्जलालिमलि-नैर्विबुधाधिपचापचित्रितैः, भीमरवैर्विसृष्टचण्डाशनिशी-

तलवायुवृष्टिभिः। गगनतलं विलोक्य जलदैः स्थगितं सहसा तपोधनाः, पुनरपि तरुतलेषु विषमासु निशासु विशंकमासते ॥५॥ जलधाराशरताडिता न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः। संसारदुःखभीरवः परीषहारातिघातिनः प्रवीराः ॥६॥ अविरतबहलतुहिनकणवारिभिरंघ्रिपपत्रपातनैरनवरतमुक्तसीत्कारवैः परुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः। इह श्रमणा धृतिकम्बलावृताः शिशिरनिशाम्। तुषारविषमां गमयन्ति चतुःपथे स्थिताः ॥७॥ इति योगत्रयधारिणः सकलतपः शालिनः प्रवृद्धपुण्यकायाः। परमानन्दसुखैषिणः समाधिमग्र्यं दिशन्तु नो भदन्ताः ॥८॥ गिम्हे गिरिसिहरत्था वरिसाकाले रुक्खमूलरयणीसु। सिसिरे बाहिरसयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥१॥ गिरिकन्दरदुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः। पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्ति परमां गतिम् ॥२॥ इच्छामि भन्ते योगभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्स लोचेउं अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारसकम्मभूमीसु आदावणरुक्खमूलअब्भोवासठाणमोणविरासणेक्कपासकुक्कुडासणचउछपक्खखवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ॥

इति योगभक्तिः

इस प्रकार शौचानुष्ठान समाप्त करे। देव बन्दना के लिए श्रीजिन मंदिर को जावे वहा उचित स्थान में अपने हस्तपाद को धोकर "निसही निसही निसही" तीन बार उच्चारणकर चैत्यालय के शिखर का अवलोकन कर तीन बार प्रणाम करे अनन्तर "दृष्टं जिनेन्द्र भवनं" इत्यादि दर्शन स्तोत्र की वंदना मुद्रा को जोडकर पढते हुए चैत्यालय की तीन प्रदक्षिणा देवे प्रदक्षिणा मे प्रत्येक दिशा में तीन प्रदक्षिणा से प्रत्येक दिशा में तीन तीन आवर्त और एक एक शिरोनति करते जावे।

अथ देवबंदना प्रयोग

ॐ जय जय जय निःसही निःसही निःसही।

(चैत्यालयकी प्रदक्षिणा करते समय प्रत्येक दिशामें तीन तीन आवर्त और एक शिरोनति करे) दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भवतापहारि, भव्यात्मनां विभव संभवभूरिहेतु

दुग्धाब्धिफेनधवलोज्वलकूटकोटि-
नद्धध्वजप्रकरराजिविराजमानम् ॥१॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैकलक्ष्मी
धामर्द्धिवर्द्धितमहामुनिसेव्यमानम् ॥

विद्याधरामरवधूजनपुष्पदिव्य,
पुष्पांजलिप्रकरशोभितभूमिभागम् ॥२॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवास,
विख्यातनाकगणिकागणगीयमानम्।

नानामणिप्रचयभासुररश्मिजाल-

व्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥३॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुरसिद्धयक्ष-
गन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा ।
संगीतमिश्रितनमस्कृतधीरनादै-
रापूरिताम्बरतलोरुदिगन्तरालं ॥४॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्विलोल-
मालाकुलालिललितालकविभ्रमाणम् ।
माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासिनीनां
लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यं ॥५॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणिरत्नहेम-
सारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः ।
सन्मंगलैः सततमष्टशतप्रभेदै-
र्विभ्राजितं विमलमौक्तिकदामशोभम् ॥६॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारु-
कर्पूरचन्दनतरुष्कसुगन्धिधूपैः ।
मेघायमानगगने पवनाभिघात-
चंचच्चलद्विमलकेतनतुंगशालम् ॥७॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्र-
च्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः ।
दोधूयमानसितचामरपंक्तिभासं
भामण्डलद्युतियुतप्रतिमाभिरामं ॥८॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकार
पुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमि ।
नित्यं वसंततिलकश्रियमादधानं
सन्मंगलं सकलचन्द्रमुनीन्द्रवंद्यं ॥९॥
दृष्टं मयाद्य मणिकांचनचित्रतुंग,
सिंहासनादिजिनबिम्बविभूतियुक्तं ॥
चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे,
सन्मंगलं सकलचन्द्रमुनीन्द्र वंद्यं ॥१०॥

पुनः पैर धोकर मन्दिर में प्रवेश करके दर्शन स्तोत्र पढकर खड़े होकर पैरों में चार अंगुल का अन्तर रख कर और दोनों हाथों को मुकलित कर ऐर्यापथिक दोष विशुद्धि पाठ पढ़े ।

ईर्यापथविशुद्धिः—

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए विराहणाए अणागुत्ते अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि पइट्ठवणियाए, जे जीवा एइंदिया वा बे इंदिया वा, ते इंदिया वा चउरिंदिया वा पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा संघादिदा वा, परिदाविदा वा, किरिच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा ठाणचंकमणदो वा तस्स उत्तरगुणं तस्स पायच्छित्तकरणं, तस्स

विसोहिकरणं, जाव अरहंताणं भयवंताणं णमोकारं पज्जुवासं करोमि, तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(इस प्रतिक्रमण को पढकर "णमो अरहंताणम्" इत्यादि गाथा का सत्ताईस उच्छ्वासों में नौ बार जाप्य देवे अनन्तर पर्यंकासन से बैठकर आलोचना पाठ पढ़े।)

आलोचना

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा—
देकेन्द्रियप्रमुखजीवनिकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१॥

इच्छामि भन्ते ! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिस विदिसासु विहरमाणेण जुगंतर दिट्ठिणा भव्वेण दट्ठव्वा । पमाददोषेण डवडवचरियाए पाणभूदजीवसत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतं समणुमण्णिदो वा तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अनन्तर उठकर गुरु को अथवा देव को पंचांग नमस्कार करे पुनः गुरु के समक्ष अथवा गुरु दूर हो तो देव के समक्ष बैठकर कृत्य विज्ञापन करें कि :—

नमोऽस्तु भगवन् ! देववन्दनां करिष्यामि ।

अनन्तर पर्यंकासन से बैठकर नीचे लिखा मुख्य मङ्गल पढ़ें ।

सिद्धं सम्पूर्णभव्यार्थसिद्धेः कारणमुत्तमम् ।
प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ॥ १ ॥

सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्टपादपद्मांशुकेशरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥ २ ॥

अनन्तर बैठे बैठे नीचे लिखा पाठ पढ़कर सामायिक स्वीकार करे ।

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झं ण केणवि ॥१॥
रायबंधं पदोषं च हरिसं दीणभावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे ॥२॥
हा दुट्ठकयं हा दुट्ठचिंतियं भासियं च हा दुट्ठं ।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छुत्तावेण वेदंतो ॥३॥
दव्वे खेत्ते काले भावे यकदीवराहसोहणयं ।
णिंदण-गरहणजुत्तो मण-वच-कायेण-पडिक्कमणं ॥४॥
समता सर्व भूतेषु संयमः शुभभावना ।
आर्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं मतं ॥५॥

अथ कृत्य विज्ञापना

भगवन्नमोऽस्तु प्रसीदंतु प्रभुपादाः वंदिष्येऽहं । एषोऽहं सर्वसावद्ययोगाद्विरतोऽस्मि ।

अनन्तर क्रिया विज्ञापना

अथ पौर्वाह्णिक देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण

सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वन्दना स्तव समेतं चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

इस तरह कृत्य विज्ञापन कर खड़े होकर भूमि स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें। पश्चात् जिन प्रतिमा के सन्मुख चार अङ्गुल प्रमाण दोनों पैरों में अन्तर रखकर खड़े होवे व तीन आवर्त और एक शिरोनति करें पश्चात् मुक्ताशुक्ति मुद्रा जोड़कर सामायिक दंडक पढ़ें और पुनः तीन आवर्त व एक शिरोनति करे पश्चात् जिन मुद्रा से कायोत्सर्ग करें।

पुनः पूर्वोक्त विधि से खड़े होकर तीन आवर्त एक शिरोनति कर चतुर्विंशति स्तव पढ़ें। अनन्तर जिनचैत्य की तीन प्रदक्षिणा देते हुए प्रति दिशा में तीन तीन आवर्त व एक एक शिरोनमन करते हुए चैत्य वन्दना पढ़े।

चैत्यभक्ति

श्रीगौतमादिपदमद्भुतपुण्यबन्ध—
मुद्योतिताखिलममोघमघप्रणाशम् ।
वन्दे जिनेश्वरमहं प्रणिपत्य तथ्यं
निर्वाणकारणमशेषजगद्धितार्थम् ॥

जयति भगवान् हेमाम्भोजप्रचारविजृम्भिता—
वमरमुकुटच्छायोद्गीर्णप्रभापरिचुम्बितौ ।
कलुषहृदया मानोद्भ्रान्ताः परस्परवैरिणो
विगतकलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः ॥ १ ॥

तदनु जयति श्रेयान् धर्मः प्रवृद्धमहोदयः
कुगति-विपथ-क्लेशाद्योऽसौ विपाशयति प्रजाः।
परिणतनयस्याङ्गीभावाद्विविक्तविकल्पितं,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्रवचोऽमृतम् ॥ २
तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंगतरंगिणी
प्रभवविगमध्रौव्यद्रव्यस्वभावविभाविनी।
निरुपमसुखस्येदं द्वारं विघाट्य निरर्गलं,
विगतरजसं मोक्षं देयान्निरत्ययमव्ययम् ॥ ३ ॥
अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः।
सर्वजगद्वंद्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥ ४ ॥
मोहादिसर्वदोषारिघातकेभ्यः सदा हतरजोभ्यः।
विरहितरहस्कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥ ५ ॥
क्षान्त्यार्जवादिगुणगणसुसाधनं सकललोकहितहेतुं।
शुभधामनि धातारं वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ॥ ६ ॥
मिथ्याज्ञानतमोवृतलोकैकज्योतिरमितगमयोगि।
सांगोपांगमजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ॥ ७ ॥
भवनविमानज्योतिर्व्यंतरनरलोकविश्वचैत्यानि।
त्रिजगदभिवन्दितानां वंदे त्रेधा जिनेन्द्राणां ॥ ८ ॥
भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यर्च्यतीर्थकर्तॄणाम्।
वन्दे भवाग्निशान्त्यै विभवानामालयालीस्ताः ॥९॥
इति पंच महापुरुषाः प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि।

चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टां ॥ १० ॥
अकृतानि कृतानि चाप्रमेयद्युतिमंति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु
मनुजामरपूजितानि वंदे प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्
द्युतिमंडलभासुराङ्गयष्टीः प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम्
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः
विगतायुधविक्रियाविभूषाः प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम्
प्रतिमाः प्रतिमागृहेषु कान्त्याप्रतिमाः कल्मषशान्तयेऽभिवन्दे
कथयन्ति कषायमुक्तिलक्ष्मीं परया शान्ततया भवान्तकानाम्
प्रणमाम्यभिरूपमूर्तिमन्ति प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्
यदिदं मम सिद्धभक्तिनीतं सुकृतं दुष्कृतवर्त्मरोधि तेन ।
पटुना जिनधर्म एव भक्तिर्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे
अर्हतां सर्वभावानां दर्शनज्ञानसम्पदाम् ।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये ॥ १६ ॥
श्रीमद्भावनवासस्थाः स्वयंभासुरमूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम् ॥ १७ ॥
यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये ॥ १८ ॥
ये व्यन्तरविमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः ।
ते च संख्यामतिक्रान्ताः सन्तु नो दोषविच्छिदे ॥ १९ ॥
ज्योतिषामथ लोकस्य भूतयेऽद्भुतसम्पदः ।
गृहाः स्वयंभुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान् ॥ २० ॥

अत्राञ्जनयनोत्पलं सकलकोपवह्नेर्जयात्
कटाक्षशरमोक्षहीनमविकारतोद्रेकतः।
विषादमदहानितः प्रहसितायमानं सदा
मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धिमात्यन्तिकीम् ॥३१॥
निराभरणभासुरं विगतरागवेगोदया-
न्निरंबरमनोहरं प्रकृतिरूपनिर्दोषतः।
निरायुधसुनिर्भयं विगतहिंस्यहिंसाक्रमात्
निरामिषसुतृप्तिमद्विविधवेदनानां क्षयात् ॥३२॥
मितस्थितनखांगजं गतरजोमलस्पर्शनं
नवांबुरुहचन्दनप्रतिमदिव्यगन्धोदयम्।
रवीन्दुकुलिशादिदिव्यबहुलक्षणालंकृतं
दिवाकरसहस्रभासुरमपीक्षणानां प्रियम् ॥ ३३ ॥
हितार्थपरिपंथिभिः प्रबलरागमोहादिभिः
कलंकितमना जनो यदभिवीक्ष्य शोशुद्ध्यते।
सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः
शरद्विमलचन्द्रमंडलमिवोत्थितं दृश्यते ॥ ३४ ॥
तदेतदमरेश्वरप्रचलमौलिमालामणि-
स्फुरत्किरणचुम्बनीयचरणारविन्दद्वयम्।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र ! तव रूपमन्धीकृतं
जगत् सकलमन्यतीर्थगुरुरूपदोषोदयैः ॥ ३५ ॥

अनन्तर चैत्यके सम्मुख बैठकर नीचे लिखा आलोचना पाठ पढ़े

आलोचना या अंचलिका—

इच्छामि भन्ते चेइयभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अहलोयतिरियलोयउड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण चेइयाणि ताणि सव्वाणि, तिसु वि लोएसु भवणवासियवाणविंतर-जोइसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अंचंति, पुज्जंति, वन्दंति, णमंसंति। अहमवि इह संतो तत्थ, संताइ णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अनन्तर उठकर पंचांग नमस्कार करें। पश्चात् भगवान के सन्मुख पहिले की तरह खड़े होकर मुक्ता शुक्ति मुद्रासे हाथ जोड़कर तीन आर्त अनन्तर बैठे २ ही नीचे लिखी कृत्यविज्ञापना करें।

अर्थ पौर्वाह्णिक देव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनानिकेतं न पंच गुरु भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

और एक शिरोनति कर पूर्वोक्त सामायिक दंडक पढ़ें। अंत में तीन आवर्त और एक शिरोनति कर सत्ताईस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करें। कायोत्सर्ग पूर्ण होने पर पुनः पचांग नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। पश्चात् थोस्सामि इत्यादि चतुर्विंशति स्तव पढ़कर अंत मे तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। अनन्तर भगवान के सन्मुख पूर्वोक्तरीति से खड़े होकर नीचे लिखी पंच महा गुरुभक्ति पढ़े

मणुयणाइंदसुरधरियछत्तया,
पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दितु अम्हं वरं मंगलं ॥१॥

जेहिं झाणग्गिबाणेहि अइथद्धयं,
जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्ढयं।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दितु सिद्धा वरं णाणयं ॥२॥

पंचहाचारपंचग्गिसंसाहया,
बारसंगाइ सुयजलहि अवगाहया।
मोक्खलच्छी महंती महंते सया,
सूरिणो दितु मोक्खं गया संगया ॥३॥

घोरसंसार भीमाडवीकाणणे,
तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे।
णट्ठमग्गाण जीवाण पहदेसया,
वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥

उग्गतवचरणकरणेहिं खीणं गया,
धम्मवरझाणसुक्कझाणं गया।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया,
साहवो ते महामोक्खपहमग्गया ॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,
गुरुयसंसारघणवेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्धसुक्खाइवरमाणणं,
कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ॥६॥
अरिहा सिद्धाइरिया, उवज्झाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥७॥

आलोचना वा अंचलिका

अनन्तर नीचे लिखा आलोचना पाठ पढ़ें ।

इच्छामि भन्ते पंचगुरुभत्ति काओसग्गो कओ तस्सा-लोचेओ अट्ठमहापाडिहेरजुत्ताणं अरहन्ताणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोयम्मिपइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठपवय-णमाउसंजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादिसुदणाणोवदे-सयाणं,उवज्झायाणं तिरयणपालणरयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदेमि णमस्सामि दुःक्ख-क्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

पश्चात् पूर्वोक्त देव वंदना के पाठमे न्यूनता हुई हो अथवा अधिकता हुई हो तो इसकी विशुद्धि के लिए समाधिभक्ति पढ़ने का आगम में नियम है । तद्यथा—प्रथम बैठकर क्रियाविज्ञापन करें

अथ पौर्वाह्निक देव वंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्री समाधि

गुरुभक्ती विधाय तद्धीनाधिकत्वादिदोषविशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि।

अनंतर उठकर पंचांग नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनतिपूर्वक णमो अरहंताणं इत्यादि सामायिक दंडक पढ़ें। दंडक के अन्त में तीन आवर्त और शिरोनति करके सत्ताईस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे अनन्तर भूमिस्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति पूर्वक थोस्सामि इत्यादि दंड पढे अन्तमें पुनः तीन आवर्त और एक शिरोनति कर नीचे लिखी समाधि-भक्ति पढे। तद्यथा-

समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा।
पश्यन् पश्यामि ! देव त्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥

अथेष्टप्रार्थना--प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे।
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥२॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ता हीणं च जं मए भणियं।
तं खमउ णाणदेव ! मज्झवि दुक्खक्खयं दिन्तु ।३।

अनन्तर उठकर नीचे लिखा आलोचना पाठ पढे।

इच्छामि भंते ! समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तयसरूवपरमप्पज्झाण लक्खणसमाहिभत्तीये णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अनन्तर यथावकाश आत्मध्यान करें

अथ देव वन्दना विधिः

पडिक्कमामि, भन्ते ! इरियावहियाए विराहणाए अणागुत्ते अइगमणे णिग्गमणे ठाणे गमणे चंकमणे पाणुग्गमणे बिज्जुग्गमणे हरिदुग्गमणे उच्चारपस्सवण खेलसिंहाणय वियडिपयइट्ठा वणीयाए जे जीवा एइन्दिया वा वेइन्दिया वा तेइन्दिया वा चउइन्दिया वा पंचिंदिया वा णोल्लिदा वा पेल्लिदा वा संघट्टिदा वा संघादिदा वा उद्दाविदा वा परिदाविदा वा किरिच्छिदा वा लेस्सिदा वा छिंदिदा वा भिंदिदा वा ठाणदो वा ठाणचंकमणदो वा तस्स उत्तरगुणं तस्स पायच्छित्त करणं तस्स विसोहि करणं जाव अरहन्ताणं भयवन्ताणं पुज्जवासं करेमि ताव कायं पावं दुच्चरियं वोस्सरामि।

ॐ णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं॥

(६ जाप्य २७ उच्छ्वास)

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय प्रमुख जीव निकाय बाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगांतरेक्षा ।
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१॥

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्स आलोचेउं पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण जुगुन्तर दिट्ठिणा भव्वेण दट्ठव्वा डवडवचरियाए पमाद दोसेण पाणभूद जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् ! पादद्वयं ते प्रजाः
हेतुस्तत्र विचित्रदुखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्णभूमंडलो ।
ग्रीष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥१॥
क्रुद्धाशीर्विषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो ।
विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशान्ति यथा ॥
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् ।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसाशाम्यन्त्यहो विस्मयः
संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते ।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयांति क्षयं ॥
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता ।

नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥३॥
त्रैलोक्येश्वरभंगलब्धविजयादत्यन्तरौद्रात्मकान्
नानाजन्मशतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानला–
न्न स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥४॥
लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानैकमूर्ते! विभो!
नानारत्नपिनद्धदंडरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥
त्वत्पादद्वयपूतगीतिरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः।
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुञ्जराः ।५।
दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे।
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहरप्राणीष्टभामंडल ॥
अव्याबाधमचिन्त्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतं ।
सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥६॥
यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं–
स्तावद्धारयतीह पङ्कजवनं निद्रातिभारश्रमम् ॥
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय–
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ।७।
शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात्
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शांत्यर्थिनः प्राणिनः ।

कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः ।८।

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्धूत कलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥१॥

जिनेन्द्रमुन्मूलितकर्मबन्धं प्रणम्य सन्मार्गकृतस्वरूपम् ।
अनन्तबोधादिभवं गुणौघं क्रियाकलापं प्रकटं प्रवक्ष्ये ॥२॥

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वेरं मज्झं ण केण वि ॥३॥

रागबंधपदोसं च हरिसं दीणभावयं ।
उस्सगुत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे ॥४॥

हा ! दुट्ठकयं हा ! दुट्ठचिंतियं भासियं च हा ! दुट्ठं ।
अन्तो अन्तो डज्झमि पच्छुत्तावेण वेदंतो ॥५॥

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराहसोहणयं ।
णिंदण गरहण जुत्तो मण वचि काएण पडिकमणं ॥६॥

अथ कृत्यविज्ञापना

भगवन्नमोऽस्तु ते, एषोऽहं देव वन्दनां कुर्याम् ।

(इति सामायिकस्वीकारः

समता सर्वभूतेषु संयमे शुभभावना ।
आर्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं मतं ॥१॥

सिद्धं सम्पूर्ण भव्यार्थं सिद्धेः कारणमुत्तमम् ।
प्रशस्त दर्शन ज्ञान-चारित्र प्रतिपादनम् ॥२॥
सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्ट पादपद्मांशु केसरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥३॥
आदौ मध्येऽवसाने च मङ्गलं भाषितं बुधैः ।
तज्जिनेन्द्र गुणस्तोत्रं तदविघ्न प्रसिद्धये ॥४॥
विघ्नाः प्रणश्यन्ति भयं न जातु न क्षुद्रदेवा परिलंघयंति ।
अर्थान्यथेष्टांश्च सदा लभंते जिनोत्तमानां परिकीर्तनेन ।५
सिद्धेभ्यो निष्ठितार्थेभ्यो वरिष्ठेभ्यः कृतादरः ।
अभिप्रेतार्थसिद्ध्यर्थं नमस्कुर्वे पुनः पुनः ॥६॥
आई मङ्गल करणे सिस्सा लहु पारया हवंत्तित्ति ।
मज्झे अव्वोच्छित्ती विज्जा विज्जा फलं चरिमे ॥७॥
दुओणदं जहाजादं बारसा वत्त मेव च
चदुस्सिरं तिसुद्धिं च किरियम्मं पउंजदे ॥८॥
किरियम्मंपि करंतो ण होदि किरियम्मि णिज्जरा भागी
बत्तीसाणण्णदरं साहुठ्ठाणं विराहिंतो ॥९॥
तिविहं तियरण-सुद्धं मयरहियं दुविहं ठाण पुणरुत्तं ।
विणयेण कम्मविसुद्धं किरियम्मं होदि कादव्वं ॥१०॥
योग्य कालासन स्थान मुद्रावर्त शिरोनतिः ।
विनयेन यथाजातः कृति कर्मामलं भजेत् ॥११॥

स्नेष्माञ्जी श्रुतिजपान् साम्यार्थं प्रतिमार्पिते ।
गुडयां यथाम्नायमाद्याद्दत्तं संकल्पितेऽर्हति ॥१२॥
एकत्वेन चरन्निजात्मनि मनोवाक्कायत्रमंच्युते ।
कैश्चिद्विक्रियते न जातु यतिवद्यद्भागपि श्रावकः १३
येनाइच्छ तल्लिङ्गवानुपरिमग्रंवयकं नीयते ।
भव्योऽद्भुत चैभवेऽत्र न सजेत्सामायिकं कः सुधी ।१४।

अथ कृत्यविज्ञापन।

भगवन्नमोऽस्तु प्रसीदन्तु प्रभुपादा वन्दिष्येऽहं एषोऽहं सर्वसावद्य योगाद्विरतोऽस्मि ।

अथ पौर्वाह्निक देव वन्दनायां चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

चत्तारि मंगलं अरहन्त मंगलं ... तावकायं पाव कम्मं दुच्चरियवोस्सरामि ।ह जाप्यं ॥ थोस्सामि हमित्यादि ॥

चैत्यभक्ति

श्रीगौतमादिपदमद्भुतपुण्यबन्ध—
मुद्योतिताखिलममौ मिनवणासत् ।

वक्ष्ये जिनेश्वरमहं प्रणिपत्य तथ्यं
निर्वाणकारणमशेषजगद्धितार्थम् ॥
जयति भगवान् हेमाम्भोजप्रचारविजृंभिता-
वमरमुकुटच्छायोद्गीर्णप्रभापरिचुम्बितौ ।
कलुषहृदया मानोद्भ्रान्ताः परस्परवैरिणो
विगतकलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः ॥ १ ॥
तदनु जयति श्रेयान् धर्मः प्रवृद्धमहोदयः
कुगति-विपथ-क्लेशाद्योऽसौ विपाशयति प्रजाः ।
परिणतनयस्यांगीभावाद्विविक्तविकल्पितं
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्रवचोऽमृतम् ॥ २ ॥
तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंगतरंगिणी
प्रभवविगमध्रौव्यद्रव्यस्वभावविभाविनी ।
निरुपमसुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलं
विगतरजसं मोक्षं देयान्निरत्ययमव्ययम् ॥ ३ ॥
अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः ।
सर्वजगद्वंद्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥ ४ ॥
मोहादिसर्वदोषारिघातकेभ्यः सदा हतरजोभ्यः ।
विरहितरहस्कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥ ५ ॥
क्षान्त्यार्जवादिगुणगणसुसाधनं सकललोकहितहेतुं ।
शुभधामनि धातारं वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ॥ ६ ॥
मिथ्याज्ञानतमोवृतलोकैकज्योतिरमितगमयोगि ।

अंगोपांगमजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ॥ ७ ॥
भवनविमानज्योतिर्व्यंतरनरलोकविश्वचैत्यानि ।
त्रिजगदभिवन्दितानां वंदे त्रेधा जिनेन्द्राणां ॥ ८ ॥
भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यर्च्यतीर्थकर्तृणाम् ।
वन्दे भवाग्निशान्त्यै विभवानामालयालीस्ताः ॥ ९ ॥
इति पंच महापुरुषाः प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टां ॥ १० ॥
अकृतानि कृतानि चाप्रमेयद्युतिमान्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु
मनुजामरपूजितानि वंदे प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्
द्युतिमंडलभासुराङ्गयष्टीः प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम्
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः
विगतायुधविक्रियाविभूषाः प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम्
प्रतिमाः प्रतिमागृहेषु कान्त्याप्रतिमाः कल्मषशान्तयेऽभिवन्दे
कथयन्ति कषायमुक्तिलक्ष्मीं परया शान्ततया भवान्तकानाम्
प्रणमाम्यभिरूपमूर्तिमन्ति प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्
यदिदं मम सिद्धभक्तिनीतं सुकृतं दुष्कृतवर्त्मरोधि तेन ।
पटुना जिनधर्म एव भक्तिर्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे
अर्हतां सर्वभावानां दर्शनज्ञानसम्पदाम्
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये ॥ १६ ॥
श्रीमद्भावनवासस्थाः स्वयंभासुरमूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम् ॥ १७ ॥

यावन्ति संन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये ॥ १८ ॥
ये व्यन्तरविमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः ।
ते च संख्यामतिक्रान्ताः सन्तु नो दोषविच्छिदे ॥ १९ ॥
ज्योतिषामथ लोकस्य भूतयेऽद्भुतसम्पदः ।
गृहाः स्वयंभुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान् ॥ २० ॥
वन्दे सुरकिरीटाग्रमणिच्छायाभिषेचनम् ।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्चाः सिद्धिलब्धये ॥ २१ ॥
इति स्तुतिपथातीतश्रीभृतामर्हतां मम ।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्रवनिरोधिनी ॥ २२ ॥

अर्हन्महानदस्य त्रिभुवनभव्यजनतीर्थयात्रिकदुरित-
प्रक्षालनैककारण मतिलौकिककुहकतीर्थमुत्तमतीर्थम् ॥२३॥

लोकालोकसुतत्त्वप्रत्यवबोधनसमर्थदिव्यज्ञान-
प्रत्यहवहत्प्रवाहं व्रतशीलामलविशालकूलद्वितयम् ॥२४॥

शुक्लध्यानस्तिमितस्थितराजद्राजहंसराजितमसकृत् ।
स्वाध्यायमन्द्रघोषं नानागुणसमितिगुप्ति-सिकतासुभगम् २५

क्षान्त्यावर्तसहस्रं सर्वदया-विकचकुसुमविलसल्लतिकम्
दुःसहपरीषहाख्यद्रुततरंगत्तरंगभंगुरनिकरम् ॥२६॥
व्यपगतकषायफेनं रागद्वेषादिदोष-शैवलरहितम् ।
अत्यस्तमोह-कर्दममतिदूरनिरस्तमरणमकरप्रकरम् ॥२७॥

अपिवृषभस्तुतिसन्द्रोद्रे-कितनिर्घोष-विविधवर्णिकगध्वानम्
विविधतपोनिधिपुलिनं सास्रव संवर निर्जरा निःस्रव
गणधरचक्रधरेन्द्रप्रभृतिमहाभव्यपुंडरीकैः पुरुषैः
बहुभिः स्नातं भक्त्या कलिकलुषमलापकर्षणार्थममेयम् २९
अवातीर्णवतः स्नातुं ममापि दुस्तरसमस्तदुरितं दूरं ।
व्यवहरतु परमपावनमनन्यजय्यस्वभावभावगंभीरं ॥३०॥

अताम्रनयनोत्पलं सकलकोपवह्नेर्जयात्
कटाक्षशरमोक्षहीनमविकारतोद्रेकतः ।
विषादमदहानितः प्रहसितायमानं सदा
मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धिमात्यन्तिकीम् ॥३१॥

निरावरणभासुरं विगतरागवेगोदयान्
निरंबरमनोहरं प्रकृतिरूपनिर्दोषतः ।
निरायुधसुनिर्भयं विगतहिंस्यहिंसाक्रमात्
निरामिषसुतृप्तिमद्विविधवेदनानां क्षयात् ॥३२॥

मितस्थितनखांगजं गतरजोमलस्पर्शनं
नवांबुरुहचन्दनप्रतिमदिव्यगन्धोदयम् ।
रवीन्दुकुलिशादिदिव्यबहुलक्षणालंकृतं
दिवाकरसहस्रभासुरमपीक्षणानां प्रियम् ॥ ३३ ॥

हितार्थपरिपंथिभिः प्रबलरागमोहादिभिः
कलंकितमना जनो यदभिवीक्ष्य शोशुद्धयते ।

सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः
शरद्विमलचन्द्रमंगलमिवोत्थितं दृश्यते ॥ ३४ ॥

तदेतदमरेश्वरप्रचलमौलिमालामणि—
स्फुरत्किरणचुम्बनीयचरणारविन्दद्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र ! तव रूपमन्धीकृतं
जगत् सकलमन्यतीर्थगुरुरूपदोषोदयैः ॥ ३५ ॥

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं, चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम्
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं जिनं जितस्वान्तकषायबन्धम्
यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेषभिन्नं तमस्तमोरेरिव रश्मिभिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च, ध्यानप्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥

स्वपक्षसौस्थित्यमदावलिप्ता वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः
प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगंडा गजा यथा केशरिणोनिनादैः
यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाद्भुतकर्मतेजाः ।
अनन्तधामाक्षरविश्वचक्षुः, समेतदुःखक्षयशासनश्च ॥

स चन्द्रमा भव्यकुमुद्वतीनां, विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेपः ।
व्याकोशवाङ्न्यायमयूखमालः पूयात् पवित्रो भगवान्मनोमे
ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुह चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥१॥

जय रिसह रिसीसरणमियपाय, जय अजिय जियंगमरोसराय
जय संभवसंभवकयविओय, जय अहिणंदण णंदियपओय ॥

जय सुमइ सुमइसम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमाणिवास ।
जय जयहि सुपास सुपासगत्त, जय चन्दप्पह चन्दाहवत्त ॥
जय पुष्फयन्त दतंन्तरंग, जय सीयल सीयलवयणभंग ॥
जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज, जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥
जय विमल विमलगुणसेढिठाण, जय जयहि अणंताणंतणाण
जय धम्म धम्मतित्थयर संत, जय संति संति विहियायवत्त
जय कुन्थु कुन्थु पहुअंगि सदय, जय अर अर माहर विहियसमय
जय मल्लि मल्लि आदामगंध, जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध
जय णमि णमियामरणियरसामि, जयणमि धम्मरहचक्कणमि
जय पास पासछिंदणकिवाण, जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण

इह जाणिय णामहिं दुरियविरामहिं,
परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
अणहणहिं अणाइहिं समियकुवाइहिं,
पणविवि अरहंतावलिहिं ॥

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानां
अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां ।
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥
जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा–

श्चंद्राम्भोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभाजिनाः
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धनाः ।
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके ।
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥
द्वौ कुन्देंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ,
द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ॥
शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥

अथ पौर्वाण्हिक देववंदनायां पंचगुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं

णमो अरहंताणमित्यादि पठित्वा कायोत्सर्गं कृत्वा थोस्सामि दंडकं पठेत् ।

आलोचना या अंचलिका—

इच्छामि भन्ते चेइयभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अहलोयतिरियलोयउड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण चेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसु वि लोएसु भवणवासियवाणविंतर-जोइसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं

अंचंति, पुज्जंति वन्दंति, णमंसंति। अहमवि इह संतोतत्थ, संताइ णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अनन्तर उठकर पंचांग नमस्कार करे। पश्चात् भगवान के सन्मुख पहिले की तरह खड़े होकर मुक्ता शुक्ति मुद्रासे हाथ जोड़कर तीन आवर्त कर अनन्तर बैठे २ ही नीचे लिखी कृत्यविज्ञापना करे।

अथ पौर्वाह्णिक देव वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं पंच गुरु भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं।

और एक शिरोनति कर पूर्वोक्त सामायिक दंडक पढें। अंत में तीन आवर्त और एक शिरोनति कर सत्ताईस उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे। कायोत्सर्ग पूर्ण होने पर पुनः पचांग नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। पश्चात् थोस्सामि इत्यादि चतुर्विंशति स्तव पढ़कर अंत मे तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। अनन्तर भगवान के सन्मुख पूर्वोक्तरीति से खड़े होकर नीचे लिखी पंच महा गुरुभक्ति पढ़े।

अथ पौर्वाह्णिक देववंदनायां शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। णमो अरिहंताण मित्यादि कायोत्सर्ग विधि पूर्वक।

दोधकवृत्त

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं।
अष्टशताचितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रं ॥१॥

पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिंद्रनरेंद्रगणैश्च ।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि २
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपत्रारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥३॥
तं जगदर्चितशांतिजिनेंद्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ।

वसंततिलका ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैः ।
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ॥
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपा—
स्तीर्थंकराः संततशांतिकरा भवंतु ॥

इन्द्रवज्रा

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतींद्रसामान्यतपोधनानां ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः
अशोक वृक्ष सुरपुष्पवृष्टिर्दिव्यध्वनिश्चामर मासनं च ।
भामंडलं दुंदुभिरातपत्रं, सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणां ७

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशं
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्म भूज्जीवलोके,
जैनेंद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ।८।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः।
कुर्वंतु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ६ ॥

इच्छामि भन्ते ! सांतिभत्ति काओ सग्गो कओतस्सा लोचेउं पंचमहा कल्लाणसंपण्णाणं अट्ठमहा पाडिहेर सहियाणं चउतीसातिसय विसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेविंद मणि मयमउडमत्थयमहियाणं वलदेव वासुदेवचक्कहररिसिमुणि जदिअणगारो वगूढाणं थुइसम महस्स णिलयाणं उसहाइवीर पच्छिम मंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगइगमणं समाहि मरणं जिणगुण सम्पत्ति होउ मज्झं।

अथपौर्वाह्णिकदेववंदनायां चैत्य-पंचगुरु शांतिभक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि दोष विशुद्ध्यर्थं आत्म पवित्री करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

जैनमार्ग रूचिरन्य मार्ग निर्वेदता जिन गुण स्तुतौ मतिः निष्कलंक विमलोक्ति भावना संभवंतु मम जन्म जन्मनि

अक्खर पयत्थ हीणं मत्ता हीणं च जंमए भणियं।
तंखमउ णाण देवय मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ।२।

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिला हो सुगइगमण समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनं ॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १ ॥

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाण संप्राप्तिः ॥ २ ॥
अक्खर पयत्थ हीणं मत्ता हीणं च जंमए भणियं ।
तं खमउ णाण देवय देउ समाहिं च मे बोहिं ॥४॥
जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्कइ तं च सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ।
तव यरणं वय धरणं संजम सरणं च जीवदयाकरणं ।
अंते समाहिं मरणं चउगइ दुक्खं णिवारेइ ॥ ६ ॥
दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं ।
समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ।

नोट—इस देव वंदनाकी टीका श्रीप्रभाचन्द्राचार्य कृत मिलती है तथा बहुत से मूल २ ही क्रिया कलापो मे भी यही विधि पाई जाती है इसमे,कायोत्सर्ग मुद्रा आवर्त शिरोनति नमस्कार आदि की विधि पूर्ववत् ही समझ लेना चाहिये ।

प्रथम देववंदना में जो पाठ कम है उसमें अनगार धर्मामृत के संकेत से ही मात्र दो भक्ति को ही लेकर प्रथम का शांत्यष्टक व चैत्यभक्ति के अंतर्गत चन्द्रप्रभुस्तुति व जयमाला तथा लघुचैत्य भक्ति का पाठ छोड़ दिया गया है। परंतु इसही प्रभाचन्द्राचार्य कृत टीका बिल्कुल इस ही क्रम से होने से यह विधि प्राचीन व प्रामाणिक है यद्यपि सर्वत्र देववंदना में चैत्य पंचगुरु भक्ति का विधान है फिर भी इनके अन्तर्गत पाठ अधिक होते हुये भी प्रधानता इन दो भक्तियों की ही है।

पुनः गुरु वंदनाके कालका निर्णय

वंद्या दिनादौ गुर्वाद्या विधिवत् विहितक्रियैः।
मध्यान्हे स्तुति देवैश्च, सायंकृतप्रतिक्रमैः ॥

अर्थ—प्रभात में सामायिकानंतर आचार्यादिकी वन्दना विधिवत् भक्ति पाठ करके करे व मध्यान्ह में देव वन्दना (सामायिक) के पश्चात् तथा अपराण्ह में दैवसिक प्रतिक्रमण के बाद में विधिवत् वन्दना करे। तथा अन्य समय में भी नमोऽस्तु आदि पदों के द्वारा वन्दना प्रतिवन्दनादिक करे। यथा:—

सर्वत्रापि क्रियारंभे वंदना प्रति वंदने।
गुरु शिष्ययोः साधूनां तथा मार्गादि दर्शने ॥

आचार्यादि वंदना विधिः

लघ्व्यां सिद्धगणि स्तुत्या, गणी वंद्यो गवासनात्।
सिद्धान्तोऽन्त श्रुतः स्तुत्या, तथान्यस्तन्नुतिं विना ॥

अर्थः—लघु सिद्ध भक्ति और आचार्य भक्ति के द्वारा गवासन से बैठकर साधु और व्रतिक आचार्य की वंदना करें तथा सिद्धांतविद् आचार्य की वन्दना करते समय इन दोनों भक्तियों के बीच, लघुश्रुतभक्ति भी करें और सामान्य की वन्दना लघु सिद्ध भक्ति पूर्वक तथा आचार्य पद रहित सामान्य मुनि यदि सिद्धांतविद् हैं तो सिद्धभक्ति व श्रुतभक्ति पूर्वक वंदना करें।

अथ आचार्य वंदना प्रायोग्य विधि

नमोऽस्तु श्री आचार्य वंदनायां श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(णमोकार ९ गुणित्वा)

लघु सिद्धभक्तिः

सम्मत्तणाण दंसण वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरुलहुमव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥
तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्त सिद्धेय।
णाणम्हि दंसणम्हिय सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥

नमोऽस्तु आचार्य वंदनायां श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(णमोकार ९ गुणित्वा)

लघुश्रुतभक्ति

कोटी शतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ सहस्र संख्य-
मेतच्छ्रुते पंच पदं नमामि ॥ १ ॥

अरहंत भासि यत्थं, गणहर देवेहिं गत्थियं सम्मं।
पणमामि भत्ति जुत्तो, सुदणाण महोवहिं सिरसा ।२।

नमोऽस्तु आचार्य चन्दनायां श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहं।

(णमोकार ९ गुणित्व)

लघु आचार्य भक्ति

श्रुत जलधि पारगेभ्यः स्वपरमत विभावना पटुमतिभ्यः
सुचरित तपोनिधिभ्यः नमो गुरुभ्यः गुण गुरुभ्यः ॥ १ ।

छत्तीस गुण समग्गे पंचविहाचार करण संदरिसे।
सिस्साणुग्गह कुसाले धम्माइरिये सदा वन्दे ॥ २ ॥

गुरु भत्ति संजमेण य तरंति संसार सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ कम्मं जम्मण मरणं ण पावेंति ॥ ३ ॥

ये नित्यं व्रत मंत्र होम निरता, ध्यानाग्नि होत्राकुलाः।
षट्कर्माभिरतास्तपोधन धनाः, साधुक्रियाः साधवः ।४।
शील प्रावरणा गुण प्रहरणाश्चंद्रार्क तेजोऽधिकाः।

मोक्षद्वार कपाट पाटन भटाः प्रीणंतु मां साधवः ॥ ५ ॥
गुरवः पांतु नो नित्यं ज्ञान दर्शन नायकाः ।
चारित्रार्णव गंभीरा मोक्ष मार्गोपदेशकाः ॥ ६ ॥

पौर्वाह्णिक स्वाध्याय विधिः

अथ पौर्वाह्णिक स्वाध्याय प्रारंभ क्रियायां श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(दंडकं पठित्वा—पूर्ववत् अर्हद्वक्त्र सूतं इत्यादिकं पठित्वा आचार्यभक्तिं कुर्यात्

तद्यथा—पौर्वाह्णिक स्वाध्याय प्रारंभ क्रियायां श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(दण्डकं पठित्वा)

प्राज्ञः प्राज्ञ इत्यादि पढ़ें । पुनः स्वाध्याय करें । स्वाध्याय के बाद भी लघुश्रुतभक्ति पढ़कर निष्ठापन करें पुनः—
पूर्वाह्णेऽप्यपराह्णस्य, वाचनार्थं विशोधयेत् ।
एवमाशाचतस्रस्तु, सप्तार्याप्ठकालतः ॥

(आचार सारे)

अर्थः—पूर्वाह्णस्वाध्याय के अनन्तर भी अपराह्णकाल के स्वाध्याय के लिये चारों दिशाओं में सावधान चार णमोकार मंत्र को पढ़कर दिक् शुद्धि करें ।

प्राभातिक कृत्यानंतर करने योग्य कार्य

प्रवृत्यैवं दिनादौ द्वे नाड्यो यावद्यथाबलं ।
नाडीद्वयोन मध्यान्हं यावत्स्वाध्यायमावहेत् ॥ ३४ ॥

अर्थ—सूर्योदय के दो घड़ी बाद प्रारंभ किये गये स्वाध्याय कोअपनी शक्तिके अनुसार मध्यान्ह की दो घड़ी के पहिले पहिले तक करे ।

यदि उपवास है तो अस्वाध्याय काल में करने योग्य कार्य ।

ततो देवगुरुस्तुत्या ध्यानं वाराधनादिवा ।
शास्त्रं जपं वाऽस्वाध्याय कालेऽभ्यस्येदुपोषितः ॥ ३५ ॥

अर्थ—पूर्वाण्हिक स्वाध्याय के निष्ठापनानंतर देववंदना गुरुवंदना पूर्वोक्त विधि से अर्थात् पौर्वाण्हिक की माध्यान्हिक पाठका उच्चारण करे अनंतर बचे हुये समय में ध्यान करे अथवा आराधनादि शास्त्रों को पढ़ व जाप्य करें । और यदि उपवास नहीं है तो देव गुरु वंदना करके आहार को गमन करें । सोही कहते हैं—

प्राणयात्राचिकीर्षायां प्रत्याख्यानमुपोषितं ।
न वा निष्ठाप्य विधिवद् भुक्त्वा भूयः प्रतिष्ठपेत् ॥३६॥

अर्थ—प्राणयात्रा अर्थात् दशप्राणयुक्त शरीर से ही ज्ञान ध्यान की सिद्धि है । अतः उसकी रक्षा हेतु भोजन की इच्छा होनेपर प्रत्याख्यान—अथवा पूर्व दिन के

उपवास को निष्ठापन करके विधिवत् आहार करे और पुनः उपवास या प्रत्याख्यान को ग्रहण करे।

प्रत्याख्यान निष्ठापन व प्रतिष्ठा विधि।

हेयं लघ्व्या सिद्धभक्त्याशनादौ।
प्रत्याख्यानाद्याशुग्राह्यमंते।
सूरौ तादृक् योगिभक्त्याग्रयातत्।

१—मध्यान्ह देव वंदना अनंतर आहार के विषय में वर्तमान। में समझ में नहीं आता है क्योंकि मध्यान्ह की दो घड़ी। अवशिष्ट रहने पर देववन्दना करने पर मध्यान्ह के उपरान्त ही आहार का काल इस नियम से बैठता है। और वर्तमान में आहारानंतर ही देव वन्दना होती है।

ग्राह्यं वंद्यःसूरि भक्त्याग्रया तत॥ ३७॥

अर्थ—भोजन के पहले लघु सिद्धभक्ति पढ़कर प्रत्याख्यान अथवा उपवास का त्याग (निष्ठापन) करे और भोजन के बाद शीघ्र ही लघु सिद्धभक्ति पढ़कर उपवास अथवा प्रत्याख्यान ग्रहण करे—अन्तेप्रक्रमाद् भोजनस्यैव प्रान्ते। कथं आशु शीघ्र भोजनान्तरमेव। आचार्या सन्निधावेत द्विधेयं। सूरौ। आचार्य समीपे पुनर्ग्राह्य प्रतिष्ठाप्यं साधुना कितत्। प्रत्याख्यानादि। कया। लघव्यासिद्धभक्त्या' इत्यादि। अर्थात् भोजनान्तर स्वयमेव साधु वहीं पर लघुसिद्धभक्ति पूर्वक शीघ्र ही प्रत्या-

ख्यान ग्रहण कर लेवे। पश्चात् गुरुके पास आकर लघु योगभक्ति व सिद्धभक्ति पूर्वक प्रत्याख्यानादि ग्रहण करे पुनः लघु आचार्य भक्ति पढ़कर आचार्य की वन्दना करे।

प्रत्याख्यान निष्ठापन प्रतिष्ठापन विधि

अथ प्रत्याख्यान निष्ठापन क्रियायां सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। ६ जाप्य-[1]

[1]— नवधा भक्तिके पश्चात् भोजन के प्रारंभ करते समय।

तवसिद्ध णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्त सिद्धे य।
णाणम्हि दंसणम्हि य सिद्धे सिरसा णमंस्सामि ।१।

इच्छामि भंते। सिद्ध भक्ति काउसग्गो कओ तस्सा लोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्म चरित्त जुत्ताणं अट्ठविह कम्म विप्प मुक्काणं अट्ठगुण संपण्णाणं उड्ढ लोयमत्थ-यम्मि पइट्ठियाणं तव सिद्धाणं णय सिद्धाणं संजम सिद्धाणं चरित्त सिद्धाणं अतीताणागदवट्टमाण कालत्तय सिद्धाणं सव्व सिद्धाणं सया णिच्च कालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउमज्झं।

भोजन के पश्चात्—

अथ प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन क्रियायां सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गंकरोम्यहं। ९ जाप्य।

तत्र सिद्धेणयसिद्धे……इत्यादि । अनन्तर गुरुके पास आकरके--

अथ प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन क्रियायांसिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं । ९ जाप्यं ।

सवसिद्धे णय सिद्ध……इत्यादि सिद्ध भक्ति पढे । अथ प्रत्याख्यानं प्रतिष्ठापन क्रियायां योगिभक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहं । ९ जाप्यं ।

लघु योगि भक्ति——

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित सलिले वृक्ष मूलाधिवासा ।
हेमंते रात्रिमध्ये प्रतिविगत भया काष्ठवत्त्यक्त देहाः ॥
ग्रीष्मे सूर्यांशु तप्ता गिरि शिखिरगताः स्थानकूटांतरस्था ।
स्तेमे धर्मं प्रदद्यु मुनिगणं वृषभामोक्ष निःश्रेति भूतः ।१।
गिम्हे गिरि सिहरस्था वरिसा यालेरुक्खमूलरयणीसु ।
सिसिरे वाहिर सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥ २ ॥
गिरि कंदर दुर्गेषु ये वसंति दिगंबराः ।
पाणि पात्र पुटादारास्ते यांति परमां गतिं ।३।

अंचलिका

इच्छामि भंते । योगि भत्ति काओसग्गो कओ तस्सा लोचेउं अड्ढाइज्ज दीवदो समुद्देसु पण्णारस कम्म भूमेसु आदावण—रुक्ख—मूल—अब्भग्वासठाण-मोण-वीरोसणेक्क-वास—कुक्कुडासण—चउत्थ—पक्ख—खमणादि जोग जुत्ताणं

णच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ॥

इसी प्रकार यदि पूर्व दिन का उपवास हो तो "प्रत्याख्यान निष्ठापन की जगह उपवास निष्ठापन तथा प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन की जगह उपवास प्रतिष्ठापन का पाठ करना चाहिये।

नंतर आचार्य के समक्ष प्रत्याख्यान अथवा उपवास ग्रहण कर लघु आचार्य भक्ति पूर्वक आचार्य की वंदना करे।

नमोऽस्तु आचार्य वंदनायां आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ६ जाप्य।

श्रुतजलधि पारगेभ्यः इत्यादि पाठ करें।

प्रत्याख्यानादि ग्रहण के अनंतर करने योग्य कार्य

प्रतिक्रम्याथ गोचार दोषं नाडी द्वयाधिके।
मध्यान्हे प्राग्वद्वृत्त स्वाध्याय विधिवद् भजेत्।

अर्थ—पश्चात् साधु आहार में हुये दोषों का प्रतिक्रमण करके मध्यान्ह काल की दो घड़ी के अनंतर पूर्वोक्त विधि से अर्थात् पौर्वाण्हिक के स्थान में आपराण्हिक स्वाध्याय का प्रयोग करके स्वाध्याय का प्रारंभ करे। इसमें जो

आहारके बाद दोषोंके प्रतिक्रमण करनेका अर्थात् गोचार प्रतिक्रमण का कथन है उसी का स्पष्टीकरण।

लघुप्रतिक्रमण सात माने हैं। यथा—

लुञ्चे रात्रौ दिने भुक्ते निषेधिका गमने पथि।
स्यात् प्रतिक्रमणालघ्वी तथा दोषेतु सप्तमी॥

(अनगारे)

अथ—केशलुञ्च प्रतिक्रमण रात्रिप्रतिक्रमण दिवस प्रतिक्रमण गोचार प्रतिक्रमण निषेधिका गमन प्रतिक्रमण ईर्यापथ प्रतिक्रमण दोष (स्वप्नाद्यतीचार) प्रतिक्रमण इस प्रकार यह सात प्रतिक्रमण लघुमाने है। इन में से चार प्रतिक्रमण लघु होने से तीन प्रतिक्रमणों में अंतर्भूत हो जाते हैं। यथा निषिद्धिका गमन प्रतिक्रमणा लुञ्च-प्रतिक्रमणा गोचार प्रतिक्रमणा अतिचार दोष प्रतिक्रमण चेर्यापथिकादि प्रतिक्रमणासु अंतर्भवति लघुत्वात्।

तत्राद्या पंचातीचार प्रतिक्रमणायां अन्त्यारात्रि प्रतिक्रमणायां शेषेद्वे दैवसिक प्रतिक्रमणायां चांतर्भवति अर्थात् निषिद्धिका के लिये जो गमन उसमें होने वाले दोषोंका प्रतिक्रमणा वह निषिद्धका प्रतिक्रमण है वह ईर्यापथ शुद्धि प्रतिक्रमण में गर्भित हो जाता है। तथा अतिचार प्रतिक्रमण (स्वप्नादि दोष प्रतिक्रमण) है वह रात्रिक प्रतिक्रमण में अंतर्भूत हो जाता है तथा

लोच प्रतिक्रमण और गोचार प्रतिक्रमण अर्थात् दो तीन अथवा चार मास से किये जाने वाले केशलोच का प्रतिक्रमण और आहार में होने वाले दोषों का प्रतिक्रमण ये दोनों ही प्रतिक्रमण दैवसिक प्रतिक्रमण में अंतर्भूत होजाते हैं।

विशेषः—भक्ति की पुस्तकों में हिन्दी में जहां कौनसी भक्ति कहां करना यह कथन है वहां पर आहारको निकलते समय योगि भक्ति व सिद्धिभक्ति गुरु के पास करके जावे ऐसा भी कथन है। परंतु अनगार धर्मामृत चारित्र सार आचार सारमें तो केवल आहारके बादमें गुरुके पास प्रत्याख्यान के लिये ही दो भक्ति हैं। तथा दाताके घरमें नवधा भक्तिके अनंतर सिद्ध भक्तिपूर्वक प्रत्याख्यान निष्ठापन या आहारानन्तर शीघ्र ही सिद्धभक्ति पूर्वक प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन करे। नन्तर गुरु के पास आकर लघु सिद्ध भक्ति व लघु योगि भक्ति पूर्वक पुनः प्रत्याख्यान ग्रहण करे व आचार्यभक्ति पूर्वक आचार्य वन्दना करे।

उक्तंच आचारसारे

आलोचना समासीनो दातृ प्रचालित क्रमः।
ऊर्ध्वाधः पार्श्वदिक्कोण निक्षेपाद्यनिरीक्षणः ॥ ११८ ॥
नर्णापूर्ण प्रतिज्ञोऽय सिद्धभक्ति विधायतत।

प्रत्याख्यानं विनिष्ठाप्य प्ररितो भक्त दातृभिः ॥ ११६॥
समांगुल चतुष्कांत ......
स्तः सिद्धयोगभक्ती द्वे प्रत्याख्याने तदंगता ।
सूरि भक्तिं भवेत् सिद्ध भक्तित निष्ठापनेऽस्यतु ।७१

चारित्रसारे च

सिद्ध योगि भक्तीकृत्वा प्रत्याख्यानंगृहीत्वा आचार्य भक्तिं कृत्वा ऽऽचार्यानुवन्दतां । सिद्धभक्तिं कृत्वा प्रत्याख्यानं मोचयेत् ।

पुनः—

नाड़ी द्वयावशेषेऽन्हि तं निष्ठाप्य यथाक्रमं ।
कृत्वान्हिकं गृहीत्वा च योगं वंद्यौपतैर्गणी ।४०।

अर्थः सूर्यास्तके होने में दो घड़ी अवशिष्ट रहने पर स्वाध्याय का निष्ठापन करे और

कृत्वैवं अपराण्हेऽपि पंचार्या पाठकालतः ।
दिक् शुद्धिं वाचनां पूर्व रात्रौ कुर्याद्दिवं पुरा ॥

अर्थ—स्वाध्यायानन्तर अपराण्ह में भी चारों दिशाओं में पांच पांच वार णमोकार मंत्र को पढ़कर प्रादोपिक स्वाध्याय" के लिये दिक् शुद्धि करें । पुनः "दैवसिक प्रति क्रमण" करके रात्रियोग को ग्रहण करे (आज रात्रि में मैं इसी वसतिका में रहूंगा। इस नियम विशेप को योग कहते हैं.) और पश्चात् पूर्वोक्त विधि से आचार्य वन्दना करे

ऊपर जो "रात्रिक प्रतिक्रमण" बताया है, वही दैवसिक भी करें। अन्तर केवल इतना ही है कि "रात्रिक राइयो शब्द के स्थान में "देवसिओ' शब्दों का प्रयोग करें तथा वीर भक्ति मे १०८ उच्छ्वासों मे ४ कायोत्सर्ग करे और "रात्रियोग निष्ठापन" क्रिया में भी "रात्रियोग प्रतिष्ठापन" शब्द का प्रयोग कर उपर्युक्त योग भक्ति को करे।

पुनः—

स्तुत्वादेव मथारभ्य प्रदोषे सद्विनाडिके।
मुञ्चेत् निशीथे स्वाध्याय प्रागेव घटिका द्वयात् ॥४१॥

अर्थ—आचार्य वन्दना के बाद पूर्वोक्त विधि से देववन्दना (सामायिक) करे, अन्तर केवल इतना ही है कि "पौर्वाण्हिक देववन्दनायां" के स्थान में "आपराण्हिक देववन्दनायां" का प्रयोग करे। पुनः सूर्यास्त से दो घड़ी के बीतने पर "प्रादोषिक" स्वाध्याय को करे। अर्थात् "वैरात्रिक स्वाध्याय प्रतिष्ठापन क्रियाया" के स्थान में "प्रादोषिक स्वाध्याय प्रतिष्ठान क्रियायां" का प्रयोग करे और अर्द्धरात्रि के दो घडी अवशिष्ट रहने पर स्वाध्याय का निष्ठापन कर देवे।

निद्रा जीतने का उपाय

ज्ञानधारा घनानन्द सान्द्र संसार भीरुकः।
शोचमानो जितं चैनो जयेन्निद्रां जिताशनः ॥४२॥

अर्थ—ज्ञान, दर्शन और चारित्र तप की आराधना में उत्पन्न हुए आनन्द से संयुक्त संसार से भयभीत तथा पूर्व में अर्जित जो पाप उनका शोच करता हुआ साधु निद्रा को जीतने का प्रयत्न करे।

अब असमर्थ साधु को स्वाध्याय व देववन्दना को करने की विधि बतलाते हैं।

सम्प्रति लेखन मुकुलित वत्सोत्संगित करः सपर्यंकः।
कुर्यादेकाग्र मनाः स्वाध्यायं वन्दना पुन रशक्त्या ॥४३॥

अर्थ—पिच्छिका सहित अंजली जोड़कर जुड़ी हुई अंजली को वक्षस्थल के मध्य में करके पर्यंकासन व वीरासन अथवा सुखासन से बैठकर मनको एकाग्र करके स्वाध्याय व वन्दना को करे यदि खड़े होने की सामर्थ्य न होवे तो यह विधान है।

योग प्रतिक्रम विधिः प्रागुक्तो व्यावहारिकः।
कालक्रम नियमोऽत्र न स्वाध्यायादि वंद्यतः ॥४४॥

अर्थ—पूर्व में कहा गया जो काल क्रम नियम है उसका कदाचिद् धर्म कार्यादि के व्यासंग से रात्रियोग और प्रतिक्रमण विधान में अतिक्रमण भी हो जावे, परन्तु स्वाध्याय व देववन्दना तथा भक्त (आहार) के

प्रत्याख्यान आदिकोंमें जो काल क्रम नियम है उसमें अति-क्रमण नहीं करना चाहिए।

इति नित्य क्रिया प्रयोग विधि.

अथ नैमित्तिक क्रिया प्रयोग विधिः

चतुर्दशी क्रिया प्रयोग

त्रिसमये वन्दनेभक्ति द्वयमध्ये श्रुतनुतिं चतुर्दश्यां।
प्राहुस्तद्भक्ति त्रयं मुखान्तयोः केऽपि सिद्ध शांति नुती।४५।

अर्थ—त्रिकाल वन्दना में चतुर्दशी के दिन "प्राकृत क्रियाकाण्ड चारित्रसार" मत के अनुसार चैत्यभक्ति और पंच गुरुभक्ति के मध्य में श्रुतभक्ति भी करे तथा "संस्कृत क्रियाकाण्ड मत के अनुसार" आदि में सिद्धभक्ति चैत्यभक्ति श्रुतभक्ति पंचगुरुभक्ति व शान्तिभक्ति करे।

यहां संस्कृत क्रिया काण्ड मत से प्रयोग की विधि—सामायिक करते समय—प्रथम ईर्यापथशुद्धि से लेकर "भगवन् नमोऽस्तु........एषोऽहं सर्व सावद्य योगाद्विरतोऽस्मि" पर्यंत क्रिया करके भक्ति करे।

अथ पौर्वाण्हिक देववन्दनायां चतुर्दशी क्रियायांपूर्वाचार्यानु क्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भावपूजा वन्दना स्तव दंडकं पठित्वा समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

इति विज्ञाप्य णमो अरहन्ताणं मिति उच्चार्य सामायिक दण्डकं कायोत्सर्गं कुर्यात् पुनः थोस्सामिति चतुर्विंशति स्तव को करके सिद्ध भक्ति को पढ़े

अथ श्रीसिद्धभक्तिः

सिद्धानुद्धूतकर्मप्रकृतिसमुदयान्साधितात्मस्वभावान् ॥
वन्दे सिद्धिप्रसिध्यै तदनुपमगुणप्रग्रहाकृष्टितुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः प्रगुणगुणगणोच्छादिदोषापहारात्,
योग्योपादानयुक्त्या दृषद इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥
नाभावः सिद्धिरिष्टा न निजगुणहतिस्तत्तपोभिर्न युक्तेः ।
अस्त्यात्मानादिबद्धः स्वकृतजफलभुक् तत्क्षयान्मोक्षभागी ।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेहप्रमितिरुपसमाहारविस्तारधर्मा ।
ध्रौव्योत्पत्तिव्ययात्मा स्वगुणयुत इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः २
स त्वन्तर्बाह्यहेतुप्रभवविमलसद्दर्शनज्ञानचर्या-
संपद्धेतिप्रघातक्षतदुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्यसारैः ॥
कैवल्यज्ञानदृष्टिप्रवरसुखमहावीर्यसम्यक्त्वलब्धि-
ज्योतिर्वातायनादिस्थिरपरमगुणैरद्भुतैर्भासमानः ॥३॥
जानन्पश्यन्समस्तं सममनुपरतं संप्रतृप्यन्वितन्वन् ।
धुन्वन्ध्वान्तं नितान्तं निचितमनुसमं प्रीणयन्नीशभावम् ॥
कुर्वन्सर्वप्रजानामपरमभिभवन् ज्योतिरात्मानमात्मा ।
आत्मन्येवात्मनासौ क्षणमुपजनयन्सत्स्वयंभूः प्रवृत्तः ॥४॥
छिन्दन्शेषानशेषान्निगलबलकलींस्तैरनन्तस्वभावैः ।
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरुलघुकगुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यैश्चान्यव्यपोहप्रवणविषयसंप्राप्तिलब्धिप्रभावै-
रूर्ध्वं व्रज्यास्वभावात्समयमुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ॥५॥

अन्याकाराप्ति हेतु र्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः।
प्रागात्मोपात्तदेहप्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तिः।
क्षुत्तृष्णाश्वासकासज्वरमरणजरानिष्टयोगप्रमोह—
व्यापत्त्याद्युग्रदुखप्रभवभवहतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ६
आत्मोपादानसिद्धं स्वयमतिशयवद्वीतबाधं विशालं।
वृद्धिह्रासव्यपेतं विषयविरहितं निःप्रतिद्वन्द्वभावम्॥
अन्यद्रव्यानपेक्षं निरुपममितं शाश्वतं सर्वकालं।
उत्कृष्टानन्तसारं परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम्॥७॥
नार्थः क्षुत्तृडविनाशाद्विविधरसयुतैरन्नपानैरशुच्या।
नास्पृष्टेर्गन्धमाल्यैर्नहि मृदुशयनैर्ग्लानि निद्राद्यभावात्।
आतङ्कार्तेरभावे तदुपशमनसद्भेषजानर्थतावद्।
दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगततिमिरे दृश्यमाने समस्ते॥८॥
तादृक्सम्पत्समेता विविधनयतपःसंयमज्ञानदृष्टि—
चर्यासिद्धाः समन्तात्प्रविततयशसो विश्वदेवाधिदेवाः।
भूता भव्या भवन्तः सकलजगति ये स्तूयमाना विशिष्टै॥
स्तान्सर्वान्नौम्यनंतान्निजिगमिषुररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम्॥

अंचलिका—

इच्छामि भन्ते सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचारित्तजुत्ताणं अट्ठ-

विहकम्मचिप्पमुक्कणं अट्ठ गुणसम्पण्णाणं उड्ढलोयम-च्छयमि पयट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं अतीताणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सया णिच्चकालं अंचेमि वन्दामि पूजेमि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिण-गुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अथ पौर्वाह्निक देव वंदनायां चतुर्दशी क्रियायां चैत्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(णमोकार मंत्र, चत्तारि दंडक, कायोत्सर्ग चतुर्विंशति स्तव करके जयति भगवान् हेमाम्भोजेत्यादि चैत्य भक्ति करें।

अथ पौर्वाह्निक देव वंदनायां चतुर्दशी क्रियायां पूर्वाचा-र्यां ……श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(णमो अरहंताणमित्यादि उच्चार्य सामायिक दंडकं विधाय कायोत्सर्गं कुर्यात् पुनः थोस्सामीति चतुर्विंशति स्तवं पठेत्।

श्रीश्रुतभक्तिः

स्तोष्ये संज्ञानि परोक्षप्रत्यक्षभेदभिन्नानि। लोकालो-कविलोकनलोलितसल्लोचनानि सदा ॥ १ ॥ अभिमुखनिय मितबोधनमाभिनिबोधिकमनिंद्रियेन्द्रियजम्। बह्वाद्यवग्र-हादिककृतषट्त्रिंशत् त्रिशतभेदम् ॥ २ ॥

कोष्ठस्फुटबीजपदानुसारिबुद्ध्यधिकं । संभिन्नश्रोतृतया सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे ॥ ३ ॥ श्रुतमपि जिनवरविहितं गणधररचितं द्व्यनेकभेदस्थम् । अङ्गाङ्गबाह्यभावितमनन्तविषयं नमस्यामि ॥ ४ ॥ पर्यायाक्षरपदसंघातप्रतिपत्तिकानुयोगविधीन् । प्राभृतकप्राभृतकं प्राभृतकं वस्तुपूर्वं च ॥५॥ तेषां समासतोऽपि च विंशति भेदान्समश्नुवानं तत् । वन्दे द्वादशधोक्तं गंभीरवरशास्त्रपद्धत्या ॥ ६ ॥ आचारांगं सूत्रकृतं स्थानं समवायनामधेयं च । व्याख्याप्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाध्ययने ॥ ७ ॥ वंदेऽन्तकृद्दशमनुत्तरोपपादिकदशं दशावस्थम् । प्रश्नव्याकरणं हि विपाकसूत्रं च विनमामि ॥ ८ ॥ परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोगपूर्वगते । सार्द्धं चूलिकयापि च पंचविधं दृष्टिवादं च ॥९॥ पूर्वगतं तु चतुर्दशधोदितमुत्पादपूर्वमाद्यमहम् । आग्रायणीयमीडे पुरुवीर्यानुप्रवादं च ॥ १० ॥ संततमहमभिवंदे तथास्तिनास्तिप्रवादपूर्वं च । ज्ञानप्रवादसत्यप्रवादमात्मप्रवादं च ॥ ११ ॥ कर्मप्रवादमीडेऽथ प्रत्याख्याननामधेयं च । दशमं विद्याधारं पृथुविद्यानुप्रवादं ॥ १२ ॥ कल्याणनामधेयं प्राणावायं क्रियाविशालं च । अथ लोकबिंदुसारं वंदे लोकाग्रसारपदं ॥ १३ ॥ दश चतुर्दश चाष्टावष्टादशद्वयोर्द्विषट्कं च । षोडशविंशतिं च त्रिंशतमपि पंचदश च तथा ॥ १४ ॥ वस्तूनि दश दशान्येष्वनुपूर्वं भापि-

तानि पूर्वाणाम् । प्रतिवस्तु प्राभृतकानि विंशति विंशति
नौमि ॥ १५ ॥
पूर्वांतं ह्यपरांतं ध्रुवमध्रुव च्यवन लब्धि नामानि ।
अध्रुव संप्रणिधिं चाप्यर्थं भौमावयाद्यं च ॥१६॥
सर्वार्थकल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालं ।
सिद्धिमुपाध्यं च तथा चतुर्दशवस्तूनि द्वितीयस्य ॥१७॥
पंचम वस्तु चतुर्थ प्राभृत कस्यानुयोग नामानि
कृति वेदने तथैव स्पर्शन कर्म प्रकृति मेव । १८
बंधननिबंधन प्रक्रमानुप क्रममथाभ्युदयमोक्षौ,
संक्रम लेश्ये च तथा लेश्यायाः कर्म परिणामौ
सातमसातं दीर्घं ह्रस्वं भवधारणीय संज्ञं च
पुरु पुद्गलात्म नाम च निधत्तम निधत्तम भिनौमि २०
सनिकाचित मनिकाचित मथकर्म स्थितिक पश्चिम स्कंधौ
अल्पबहुत्वं च यजे तद्वाराणां चतुर्विंशम् २१
कोटीनां द्वादशशत मष्टा पंचाशतं सकेसहस्राणां
लक्षत्र्यशीतिमेव च पंच च वंदे श्रुत पदानि २२
षोडशशतं चतुस्त्रिंशत्कोटीनां त्र्यशीति लक्षाणि
शत संख्याष्टा सप्ततिमष्टा शीतिंच पदं वर्णान् २
सामायिक चतुर्विंशति स्तवं वंदना प्रतिक्रमणम्
वैनयिकं कृति कर्म च पृथुदशवै कालिकंच तथा २४

वरमुत्तराध्ययनमपि कल्प व्यवहार मेवमभिवंदे
कल्पाकल्पं स्तौमि महा कल्पं पुण्डरीकं च २५
परिपाट्या प्रणिपतितोस्म्यहं महा पुण्डरीकना मैव
निपुणान्य शीतिकंच प्रकीर्णकान्यंग बाह्यानि २६
पुद्गल मर्यादोक्तं प्रत्यक्षं सप्रभेदमवधिंचं।
देशावधि परमावधि सर्वावधि मेदमभिवंदे २७
परमनसिस्थितमर्थं मनसा परिविद्य मन्त्र महितगुणम्
ऋजु विपुल मति विकल्पं स्तौमि मनः पर्यय ज्ञानम् २८
क्षायिकमनन्त भेदं त्रिकाल सर्वार्थ युगपदवभासं
सकल सुखधाम सततं वंदेहं केवल ज्ञानं २९
एवमभिष्टुवतोमे ज्ञानानि समस्त लोक चक्षूंषि
लघुभवताज्ज्ञानर्द्धि ज्ञानफलं सौख्यमच्यवनम् ३०

इच्छामि भंते! सुदभत्ति काओ सग्गो कओ तस्सा
लोचेउं अंगोवंग पइण्णए पाहुडय परियम्मसुत्त पढमाणि
ओगे पुव्वगय चूलिया चेव सुत्तत्थय थुइ धम्म कहाइयं
णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ
कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ गमणं समाहिमरणं जिणगुण
संपत्ति होउ मज्झं

अथ पौर्वाह्णिक ···पंच गुरुभक्ति कायोत्सर्गं करो-
म्यहं।

(पूर्वोक्तं सामायिक दंडकं चतुर्विंशति स्तवं पंचगुरू भक्ति च कुर्यात्)

पंच गुरू भक्ति

श्रीमदमरेन्द्रमुकुट प्रघटित मणि किरण वारि धाराभिः
प्रक्षालितपद युगलान्प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या १

अष्ट गुणैः समुपेतान् प्रणष्ट दुष्टाष्ट कर्मरिपु समितीन्
सिद्धान्सतत मनंतांन्नमस्करोमीष्ट तुष्टि संसिद्ध्यै ।२।

साचारश्रुतजलधीन्प्रतीर्य शुद्धोरुचरणनिरतानाम् ।
आचार्याणां पदयुगकलानि दधे शिरसि मेऽहम् ।३।

मिथ्यावादिमदोग्रध्वान्तप्रध्वंसिवचनसंदर्भान् ।
उपदेशकान्प्रपद्ये मम दुरितारि प्रणाशाय । ४ ।

सम्यग्दर्शनदीपप्रकाशका मेयबोधसंभूताः ।
भूरिचरित्रपताकास्ते साधुगणास्तु मां पान्तु । ५ ।

जिन सिद्धसूरिदेशकसाधुवरानमलगुणगणोपेतान् ।
पंचनमस्कारपदैस्त्रिसंध्यमभिनौमि मोक्षलाभाय ।६।

एष पंचनमस्कारः सर्वपापप्रणाशनः ।
मङ्गलानां च सर्वेषां प्रथमं मंगलं भवेत् । ७ ।

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायाः सर्वसाधवः ।
कुर्वन्तु मंगलाः सर्वे निर्वाणपरमश्रियम् । ८ ।

सर्वान् जिनेन्द्रचन्द्रान्सिद्धानाचार्यपाठकान् साधून् ।
रत्नत्रयं च वंदे रत्नत्रयसिद्धये भक्त्या । ९ ।
पान्तु श्रीपादपद्मानि पञ्चानां परमेष्ठिनाम् ।
लालितानि सुराधीशचूडामणिमरीचिभिः । १० ।
प्रातिहार्यैर्जिनान् सिद्धान् गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः ।
पाठकान् विनयैः साधून् योगांगैरष्टभिः स्तुवे । ११ ।

अंचलिका

इच्छामि भंते । पंचमहा गुरुभत्ति काओ सग्गो कओ तस्स आलोचेउं अट्ठमहापाडिहेर संजुत्ताणं अरहंताणं अट्ठ गुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं अट्ठपवयणमउ संजुत्ताणं आइरियाणं आयारादि सुदणाणो वदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयण गुणपाल णरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउमज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्

(पूर्वोक्तं सामायिक दंडकं कायोत्सर्गं चतुर्विंशति स्तवं च कुर्यात्)

अथ शांतिभक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः ।
हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्ण भूमंडलो ।
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥१॥
क्रुद्धशीर्विषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो ।
विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा ॥
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् ।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः २
सन्तप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते ।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
उद्यद्भास्कारविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिताः ।
नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥३॥
त्रैलोक्येश्वरभंगलब्धविजयादत्यंतरौद्रात्मकान् ।
नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानलात् ।
स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ।४॥
लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानकमूर्त्ते विभो ।
नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रयः ॥

त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः ।
दर्पाध्मातमृगेंद्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुंजराः ॥५॥
दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे ।
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहरप्राणीष्टभामण्डलं ॥
अव्याबाधमचिन्त्यसारमतुलंत्यक्तोपमं शाश्वतं ।
सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्यैव संप्यते ॥६।
यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं ।
स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ॥
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदयः ।
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥७॥
शांतिं शांतिजिनेन्द्रशांतमनसस्त्वत्पापद्मश्रयात् ।
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शांत्यष्टकं भक्तितः ॥८॥
शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रम् ॥९॥
पंचममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शांति करं गणशांतिममीप्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि १०
दिव्यतरुसुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ॥
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ११

तं जगदर्चितंशान्तिजिनेंद्रंशान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च ।१२।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः ।
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ॥

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः ।
तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥१३॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्रः

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां मास्म भूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥१५॥

इच्छामि भन्ते सन्तिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सा-लोचेउं पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेवेंदमणिमउड-मत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअण-गारोवगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिम-मङ्गलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ.........सिद्ध-चैत्य-श्रुत-पंचगुरु-शान्तिभक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि दोष विशुद्धयर्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पूर्ववद् दण्डकादिकं विधाय "शास्त्राभ्यासोजिनपति" इत्यादिकं पठेत् ।

यहां चतुर्दशी क्रिया दो मतों के अनुसार है । उसमें कोई भी एक करें ।

चतुर्दशी क्रिया धर्म व्यासङ्गादि वशान्न चेत् ।
कर्तुं पार्येत पर्वान्ते तर्हि कार्याष्टमी क्रिया ॥ ४६ ॥

अर्थ—यदि कदाचित् धर्म व्यासंगादि कारण वश चतुर्दशी के दिन चतुर्दशी की क्रिया न कर सकें तो अमावस्या व पूर्णिमा को अष्टमी क्रिया (श्रुतभक्ति रहित) करे ।

स्यात्सिद्ध श्रुत चारित्र शांति भक्त्याष्टमी क्रिया ।
पक्षांते चाश्रुता वृत्तं स्तुत्वा लोच्यं यथायथम् ॥४७॥

अर्थ—सिद्धभक्ति श्रुत भक्ति चारित्रभक्ति शांतिभक्तिके द्वारा अष्टमी क्रिया होती है तथा यही श्रुतभक्ति रहित अर्थात् सिद्ध, चारित्र शांतिभक्ति पूर्वक पाक्षिकी क्रिया होती है तथा इसी अष्टमी क्रिया को संस्कृत क्रिया काण्ड मतानुसार कहते है, कि—

सिद्धश्रुतसु चारित्र चैत्य पंचगुरु स्तुतिः ।
शांतिभक्तिश्च षष्ठीयं क्रिया स्यादष्टमी तिथौ ॥

सिद्ध चारित्र चैत्येषु भक्ति पंचगुरु ष्वपि।
शांतिभक्ति श्चपक्षान्ते जिने तीर्थे च जन्मनि ॥

अर्थ—सिद्ध श्रुत चारित्र चैत्य पंचगुरु व शांतिभक्ति ये छः भक्तियां अष्टमी के दिन करनी चाहिए व पक्ष के अन्त में अर्थात् अमावस्या व पौर्णिमासी को सिद्ध चारित्र चैत्य पंचगुरु व शांतिभक्ति करनी चाहिए तथा तीर्थंकर भगवान् के जन्म दिन भी इन भक्तियों को करना चाहिए इसमें अष्टमी व चतुर्दशी की क्रियानित्य देव वंदना युक्त भी होती है श्रूयते तन्नित्य देव वंदना युक्तयो रेते [illegible] नयुक्त मिति वृद्ध संप्रदाय ।:

(अष्टमी क्रिया प्रयोग विधि)

यह क्रिया देव वंदना करने के बाद प्रेश्य करें। यदि देव वंदना में ही क्रिया करनी होतो चारित्रभक्ति के नंतर चैत्य पंचगुरू भक्ति करके शांतिभक्ति कर।

अथ अष्टमी पर्वक्रियायां ⋯⋯ सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(दंडकादि विधान पूर्वक सिद्धभक्ति को करे)

अथ अष्टमी क्रियायां ⋯⋯ श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(दंडकादि विधान पूर्वक श्रुतभक्ति पढ़ें।)

नमोऽस्तु अष्टमी पर्व क्रियायां.....सालोचना चारित्र भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

"णमो अरहंताणं" इत्यादि कायोत्सर्ग विधि पूर्ववत्।

चारित्र भक्ति

येनेन्द्रान्भुवनत्रयस्य विलसत्केयूरहारांगदान्,
भास्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्तुङ्गोत्तमाङ्गान्नतान्।
स्वेषां पादपयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा,
वंदे पञ्चतयं तमद्य निगदन्नाचरमभ्यर्चितम्।
अर्थव्यंजनतद्द्वयाविकलताकालोपधाप्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपन्हवो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम्।
श्रीमज्ज्ञातिकुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचाररमहं त्रिधा प्रणिपताम्म्युयुद्धूतयेकर्मणाम्।२।
शंकादृष्टि-विमोहकांक्षणविधिव्यावृत्तिसन्नद्धतां,
वात्सल्यं विचिकित्सनादुपरतिं, धर्मोपबृंहक्रियां।
शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्भ्रष्टस्य संस्थापनं,
वंदे दर्शनगोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात्।३।
एकान्ते शयनोपवेशनकृतिः संतापनं तानवम्,
संख्यावृत्तिनिबन्धनामनशनं विष्वाणमर्द्धोदरम्।

त्यागं चेन्द्रियदन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्याद्विशम्,
षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगतिप्राप्त्यभ्युपायं तपः । ४ ।
स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यथा ।
कायोत्सर्जनसत्क्रिया विनयइत्येवं तपः षड्विधं,
वंदेऽभ्यंतरमन्तरंगबलवद्विद्वेषिविध्वंसनम् । ५ ।
सम्यग्ज्ञानविलोचनस्य दधतः श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं वंदे सतामर्चितम् । ६ ।
तस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनोभाषानिमित्तोदयाः,
पंचेर्यादिसमाश्रयाः समितयः पंचव्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं पूर्वं न दृष्टं परैः,
राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीरं नमामो वयम् ।७।
आचारं सह पंचभेदमुदितं तीर्थं वरं मंगलं,
निर्ग्रंथानपि सच्चरित्रमहतो वंदे समग्रान्यतीन् ।
आत्माधीनसुखोदयामनुपमां लक्ष्मीमविध्वंसिनीं,
मिच्छन्केवल दर्शनाव गमन प्राज्य प्रकाशोज्ज्वलाम् ।८।
अज्ञानद्य द्वीभूतं नियमिनोऽवर्ष्यिहं चान्यथा ।
तस्मिन्नर्जित मस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वंति ॥

वृत्तेः सप्ततयीं निधिं सुतपसा मृद्धि नयत्यद्भुतम् ।
तन्मिथ्या गुरु दुष्कृतं भवतुमे स्वं निंदितो निंदितं ॥ ९ ॥
संसार व्यसनाहति प्रचलिता नित्योदय प्रार्थिनः ।
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ॥
मोक्षस्यैव कृतं विशाल मतुलं सोपान मुच्चैस्तरां ।
आरोहन्तु चरित्र मुत्तमभिदं जैनेन्द्रमोजस्विनः ॥ १० ॥

आलोचना—

इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं, अट्ठण्हं दिव सागं अट्ठण्हं राईणं अब्भंयंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो काले विणये उवहाणे बहुमाणे तहेव अणिण्हवणे विंजण अत्थ तदुभये चेदि णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदोसे अक्खरहीणं वा सरहीणं वा पदहीणं वा विंजणहीणं वा अत्थहीणं वा गंथहीणं वा थएसु वा थुईसु वा अत्थक्खाणेसु वा अणियोगेसु वा अणियोगद्दारेसु कदोवा वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो काले वा परिहावि दो अच्छा कारिदं मिच्छा मेलिदं आमेलिदं वा मेलिदं अण्णहादिण्णं अण्णहा पडिच्छिदं आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ १ ॥

दंसणायारो अट्ठविहो णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्वि-दिगिंछा अमूढदिट्ठी य उवगूहणठिदिकरणं वच्छल्ल पहावणा चेदि। अट्ठविहा परिहाविदो संकाए कंखाए विदिगिंच्छाए अण्णादिट्ठी पसंसणदाए परपाखंड पसंसण-दाए अणायदण सेवणदाए अवच्छलदाए अप्पहावणदाए तस्समिच्छा मे दुक्कडं ॥ २ ॥

तवायारो वारस विहो अब्भंतरो छव्विहो वाहिरो छव्विहो चेदि तत्थ वाहिरो अणसणं आमोदरियं वित्तिप-रिसंखा रसपरिच्चाओ सरीर परिच्चाओ विवित्त सयणा-सणं चेदि। अब्भंतरं बाहिरं वारसविहं तवो कम्मंण कदं णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वरवीरिय परि-क्कमेण जहुत्तमाणेण बलेण वीरिएण परिक्कमेण णिगू-हियं तवो कम्मंण कदं णिसण्णे पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ४ ॥

चरित्तायारो तेरसविहो पदो पंचमहव्वयाणि पंच सामिदीओ तिगुत्तीओ चेदि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा आउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा तेउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वाउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वणप्का

द्दिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया वीया अंकुरा छिण्णा भिण्णा तस्स उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवधादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुक्खिकिमि संख खुल्लय वराडय वाराडय अक्खरिट्ठ गंड वालसंवुक्क सिप्पि पुल विकाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो व कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तइंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुंथुद्देहिय विंछिय गोभिंद गोजूव मक्कुण पिपीलियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवधादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंसमसय मक्खिय पयंग कीड भमर महुयरि गोमक्खियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा अंडाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उब्भेदिमा उववा-

दिसा अवि चउरासीदि जोणि पमुहसद सहस्सेसु एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।१।

आहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा राएण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पमादेण वा पेम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादरेण वा केण विकारणेण जादेण वा सव्वो मुसावादादो भासिओ भासाविओ भासिज्जंतो विसमणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

आहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णदाणादो वेरमणं सेगामे वा णयरे वा खेडे वा कव्वडे वा मंडवे मंडले वा पट्टणे वा दोणमुहे वा घोसे वा आसमे वा सहाए वा संवाहे वा सण्णिवेसे वा तिणं वा कट्ठं वा वियडिं वा मणिं वा एवमाइयं अदत्तं गिण्हियं गेण्हावियं गेण्हिज्जंतं समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

आहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविसएसु वा माणुसिएसु वा तेरिच्छिएसु वा अचेयणिएसु वा मणुणामणुणेसु रूवेसु मणुणामणुणेसु सद्देसु मणुणाम-णुणेसु गन्धेसु मणुणामणुणेसु रसेसु मणुणामणुणेसे फासेसु चक्खिंदिय परिणामे सोदिंदिय परिणामे घाणि-

दिय परिणामे सोदिंदिय परिणामे जिब्भिंदिय परिणामे फासिंदिय परिणामे णोइंदिय परिणामे अगुत्तेण अगुत्ति-हिएण णवविहं बंभचरियं ण रक्खियं ण रक्खिज्जंतो विसमणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

आहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गाहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो णाणा वरणीयं दंसणावरणीयं वेयणीयं मोहणीयं आउग्गं णामं गोदं अन्तरायं चेदि अट्ठविहो तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरणं भण्डफलह पीठ कमंडलु संथार सेज्ज उवसेज्ज भत्त पाणादि भेएण अणेयविहो एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं वद्धं वद्धाविंयं वद्ध ज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥५॥

आहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइभोयणादो वेरमणं से असणं पाणं खादियं रसाइयं चेदि चउव्विहो आहारो से तित्तो वा कडुओ वा कसाइलो वा अमिलो वा महुरो वा लवणो वा दुच्चिंतिओ दुव्वभासिओ दुप्परिणामिओ दुस्सिमिणाओ रत्तीय भुत्तो भुंजावियो भुज्जिजंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा दुक्कडं ॥६॥

पंच समिदीओ इरियासमिदी भासा समिदी एसणा समिदी आदावण णिक्खेवण समिदी उच्चार पस्सवण खेल सिंहाणणं वियडिय पइट्ठावणासमिदी चेदि। तत्थ इरियासमिदी पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिस विदि-

गामु विहर माणेग जुगंतर दिट्ठिणा दिट्ठिव्वा डवडव चरियाए पमाद दोसेण पाण भूद-जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तत्थ भाषा समिदी कक्कसा कडुया परुसा णिट्ठुरा परकोहिणी मज्झं किसा अइमाणिणी अणयंकरा छेयंकरा भूयाण वहंकरा चेदि दसविहा भासा भासिया भासा विया भासिज्जंतो विसमणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ॥७॥

तत्थ एसणा समिदी आहा कम्मेण वा पच्छा कम्मेण वा पुरा कम्मेण वा उद्दिट्ठयडेण वा णिद्दिट्ठयडेण वा कीड- यडेण वा साइया रसाइया सइङ्गाला सधूमिया अइगिद्धीए अग्गिवछण्हं जीवणिकायाणं विराहणं काऊण अपरिसुद्धं भिक्खं अण्णं पाणं आहारादियं आहारियं आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

तत्थ आदावण णिक्खवण समिदी चक्कलं वा फलहं वा पोथयं वा कमण्डलुं वा वियडिं वा मणि वा फलहं वा एवमाइयं उवयरणं अप्पडिलहि ऊण गेण्हं तेण वा ठवंतेण वा पाण-भूद-जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

तत्थ उच्चार पस्सवण-खेल-सिंहाणय वियडि-पइट्ठावणिया समिदी रत्तीए वा वियाले वा अचक्खु विसये अवथंडिले अन्भोवयासेसणिद्धे सवीए सहरिए एवमाइएसु अप्पासुगट्ठाणेसु पइट्ठावन्ते तृणपाण भूद-जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

तिण्णि गुत्तीओ मण गुत्तीओ वचि गुत्तीओ काय गुत्तीओ चेदि, तत्थ मणगुत्ती अट्ठेझाणे रूट्ठे झाणे इहलोय सण्णाए परलोए सण्णाए आहार सण्णाए भय सण्णाए मेहुण सण्णाए परिग्गह सण्णाए एवमाइयासु जामण गुत्ती णं रक्खाविया ण रक्खिआण रक्खिज्जंतंपि समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥११॥

तत्थ वचिगुत्ती इत्थि कहाए भत्त कहाए राय कहाए चोर कहाए रेव कहाए परपासउ कहाए एवमाइयासु जा वचि गुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया ण रक्खिज्जंतो व समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१२॥

तत्थ काय गुत्ती चित्त कम्मेसु वा पोत्त कम्मेसु वा कट्ठ कम्मेसु वा लेप्प कम्मेसु वा एवमाइयासु जा काय गुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया ण रक्खिज्जंतो व समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१३॥

णवसु बम्भचेर गुत्तीसु चउसु सण्णासु चउसु पच्च-एसु दोसु अट्टरूद्दसंकिलेस परिणामेसु तीसु अप्पसत्थ संकि-लेस परिणामेसु मिच्छाणाण मिच्छा दंसण मिच्छा चरि-त्तेसु चउसे उवसग्गेसु पंचसु चारित्तेसु छसु जीवणिकाएसु छसु आवास एसु सत्तसुभयेसु अट्ठसुसुद्धीसु (णवसुबंभचरे गुत्तीसु) दससु समण धम्मेसु धम्मज्झाणेसु दससु मुण्डेसु वारसेसु संजमेसु वावीसाए परीसहेसु पणवीसाए भाव-णासु पणवीसाए किरियासु अट्ठारस सीलसहस्सेसु चउ-रासीदि गुण सय सहस्सेसु मूलगुणेसु उत्तर गुणेसु अट्ठमियम्मि अइक्कमोवदिक्कमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो जोतं पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्तमरण समाहि मरणं पंडियमरणं वीरिय-मरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्तिहोउ मज्झं ।

अथ अष्टमी क्रियायां······· शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(दण्डकादि शांतिभक्ति)

अथ अष्टमी क्रियायां·········सिद्ध-श्रुत-चारित्र शांतिभक्तिः कृत्वा तद्धीनाधिक दोष सुद्धयर्थं समाधि भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(दण्डक आव्यादि करके समाधि भक्ति पढे)

सिद्ध भक्त्यैकया सिद्ध प्रतिमायां क्रियामता ।
तीर्थकृज्जन्मनि जिन प्रतिमायां च पाक्षिकी ॥४८॥

अर्थ—सिद्ध प्रतिमा के सामने सिद्धभक्ति पढ़कर क्रिया करे व तीर्थंकर जन्म में और पूर्व जिन प्रतिमा के सामने पाक्षिकी (श्रुतभक्ति रहित अष्टमी) क्रिया को करे ।

नोट—बिहार करते करते छः महिने पहिले उसी प्रतिमा के पुनः दर्शन हों तो उसे पूर्व जिन चैत्य कहते है ।

विशेष—किसी भी क्रिया में इस क्रिया के लिए भक्ति करने हेतु इस ही प्रकार कृत्य विज्ञापना करें व बृहद् भक्तियों के अन्त में हीनाधिक दोष शुद्धि के लिए समाधिभक्तियों को पढ़ें ।

तद्यथा—अथ········क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा वंदना स्तव समेत···भक्ति कायोत्सर्गंकरोम्यहम् ।

दर्शन पूजा त्रिसमय वन्दन योगोष्टमी क्रियादिषु चेत् ।
प्राक्तर्हि शांतिभक्तेः प्रयोजयेत् चैत्य पंचगुरु भक्ती ॥४६॥

अर्थ—अष्टमी आदि क्रियाओं में यदि दर्शन पूजा अर्थात् अपूर्व चैत्य दर्शन और नित्य देव वन्दना का योग

हो जावे तो शांतिभक्ति के पहिले चैत्य पंच गुरुभक्ति का प्रयोग करे। अर्थात् सिद्ध श्रुत चारित्र चैत्य पंचगुरु शांनिभक्तियां क्रम से करे इसे अपूर्व जिन चैत्य बन्दना कहते हैं।

दृष्ट्वा सर्वाण्य पूर्वाणि चैत्यान्येकत्र कल्पयेत्।
क्रियां तेषां तु षष्ठेनु श्रूयतेमास्यऽपूर्वता ॥५०॥

अर्थ—अनेक अपूर्व जिन प्रतिमाओं को देखकर एक अभिसचित जिन प्रतिमा के सामने अपूर्व जिन चैत्य वन्दना क्रिया करे किसी प्रतिमा के एक बार दर्शन हो जाने पर छठे महिने पर पुनः दर्शन उसके होने पर वह प्रतिमा अपूर्व प्रतिमा कही जाती है।

त्रिमुहूर्ते यथार्क उदेत्यस्तमत्यथ।
स तिथिः सकलो ज्ञेयः प्रायो धर्म्येषु कर्मसु ॥५१॥

अर्थ—सूर्य के उदय होने पर छह घड़ी पर्यंत जो तिथी रहती है वह तिथी पूर्ण कहलाती है।

पाक्षिक प्रति क्रमण

पाक्षिक्यादि प्रति क्रन्तौ वंदेरन विधिवद्गुरुम्।
सिद्ध वृत्तस्तुती कुर्याद्गुर्वी चालोचनां गणी ॥ ५२॥
देवस्याग्रे परे सूरेः सिद्ध योगि स्तुती लघू।
सवृत्तालोचने कृत्वा प्रायश्चित्त मुपेत्य च ॥ ५३ ॥

वंदित्वाचार्यमाचार्यभक्त्या लघ्व्या ससूरयः । ॥
प्रतिक्रान्ति, स्तुतिं कुर्युः प्रतिक्रामेत्ततो गणी ॥ ५४ ॥
अथ वीर स्तुतिं शांति चतुर्विंशति कीर्तनाम ।
सवृत्ता लोचनां गुर्वीं सगुर्वालोचना यताः ॥ ५५ ॥
मध्यां सूरिनुतिं तां च लघ्वीं कुर्युः परे पुनः
प्रति क्रमा ब्रहन्मध्य सूरि भक्ति द्वयोज्झिता ॥ ५६ ॥

अर्थ—शिष्य और सधर्मा पाक्षिक चातुर्मासिक और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में लघु सिद्ध लघुआचार्य भक्ति पूवक गवासनसे आचार्य को वंदना करे यदि आचार्य सिद्धांत विद् है तो मध्यमें लघु श्रुतभक्ति भी पढ़े। अनन्तर आचार्य ओर संघस्थशिष्य सधर्मा सब मिलकर (इष्ट नमस्कार पूर्वक समता सर्व भूतेषु इत्यादि पढ़कर) अंचलिका सहितबृहत् सिद्धभक्ति और बृहद् आलोचना सहित चारित्रभक्ति अर्हत भट्टारक के आगे बोले। अनन्तर अकेला आचार्य (णमो अरहंताणं इत्यादि पंचपदों का उच्चारण कर कायोत्सर्ग व थोस्सामामि पढ़कर) लघु-सिद्धभक्ति अर्थात् तपसिद्ध इत्यादि को अंचलिका सहित पढ़कर फिर णमो अरहंताणं इन पंच पदों का उच्चारण कर कायोत्सर्ग कर थोस्सामि पढ़कर अंचलिका सहित लघु योगिभक्ति प्रावृट्काले सविद्युत् इत्यादि पढ़कर इच्छामि भंत्ते। चरित्तायारो तेरसविदो" इत्यादि पांच दंडक पढे

व वदसमिदिंदिय" इत्यादिसे लेकर "छेदोवट्ठाणं होउ मज्झं" तक तीन वार पढ़कर अर्हंतदेव के आगे अपने दोषों की आलोचना करे और दोषानुसार प्रायश्चित लेकर "पंचमहाव्रत" इत्यादि पाठको तीन वार पढ़कर योग्य शिष्यादिक को प्रायश्चित्त निवेदन कर देवको गुरुभक्ति देवे। अनंतर शिष्य सधर्मा आचार्य के आगे आचार्योक्त इसी पाठ को पढ़कर अर्थात् उसी क्रमसे लघुसिद्धभक्ति और लघु योगि भक्ति पढ़कर प्रायश्चित्त लेकर लघु आचार्य भक्ति द्वारा आचार्य की वन्दना करें। पुनः आचार्य सहित मिलकर प्रति क्रमण स्तुति करें अर्थात् कृत्य विज्ञापना पूर्वक "णमो अरहंताणं', इत्यादि दंडक पढ़कर कायोत्सर्ग करें अनन्तर केवल आचार्य "थोस्सामि" इत्यादिदंडक और गणधर वलय को पढ़कर प्रति क्रमण दंडक को पढ़े। तब तक शिष्य सधर्मा कायोत्सर्गसे स्थित हुये आचार्य मुखनिर्गतप्रति क्रमण दंडकों को सुने। अनंतर साधू वर्ग "थोस्सामि' इत्यादि दंडक को पढकर आचार्य सहित "वद समिदिंदिय रोधो' इत्यादि को पढ़कर वीर भक्ति को करें। पश्चात् शांति कीर्तन पूर्वक चतुर्विंशति जिन स्तुति लघु चारित्रालोचनायुक्त बृहदाचार्य भक्ति, बृहत आलोचना युक्त मध्याचार्य भक्ति, और लघु आलोचना सहित लघु आचार्य भक्ति पढ़े। और पुनः

सभी ही सर्व हीनाधिक दोष विशुद्ध्यर्थ समाधि भक्ति को करें। अनंतर साधु वर्ग पूर्ववत् लघु सिद्धादि भक्ति द्वारा आचार्य की वंदना करें। यह विधि पाक्षिक, चातुर्मासिक और वार्षिक के लिये है पुनः व्रतारोपणादि जो बृहत् प्रतिक्रमण है उनमें भक्त्यादि बृहदाचार्य भक्ति व मध्याचार्य भक्ति को छोड़कर येही भक्ति आदि करना चाहिये।

समयानुसार बृहत् प्रतिक्रमणों का स्पष्टी करण—

व्रतादाने च पक्षान्ते कार्तिके फाल्गुने शुचो।
स्यात्प्रति क्रमणा गुर्वो दोषे सन्यासने मृतौ ॥

अन्यच्च—व्रतारोपणी पाक्षिकी कार्तिकान्तचातुर्मासी फल्गुनान्तचातुर्मासी आषाढान्त सांवत्सरी सार्वातीचारी उत्तमार्थी चेति।

सर्वातीचारा दीक्षा ग्रहणात् प्रभृति सन्यास ग्रहण कालं यावत्कृता दोषाः सर्वातीचार प्रतिक्रमणा व्रतारोपण प्रति क्रमणा चोत्तमार्थ प्रति क्रमणायां गुरुत्वादन्तर्भवतः अतिचारी सार्वातीचार्यां त्रिविधाहारव्युत्सर्जनीचोत्तमार्थ प्रतिक्रमणायामंतर्भवतः। तथा पंच संवत्सरांते विधेया यौगांतीप्रतिक्रमणा संवत्सर प्रतिक्रमणायांन्तर्भवति।

अर्थ—व्रतारोपण, पाक्षिक चतुर्दशी अथाअमावस्या व पौर्णिमा को होने वाला कार्तिक की शुक्ला चतुर्दशी

अथवा पूर्णिमा को होने वाला चातुर्मासिक प्रतिक्रमण, तद्वत् फाल्गुनान्त में होने वाला चातुर्मासिक तथा आषाढ शुक्ला चतुर्दशी को होने वाला वार्षिक प्रतिक्रमण सर्वा तीचार अर्थात् दीक्षा ग्रहण कालसे लेकर सन्यास विधि काल तक किये गये दोषों का प्रतिक्रमण और उत्तमार्थं ये सात बृहद् प्रतिक्रमण माने है। तथा सर्वातीचार व व्रतारोपण प्रतिक्रमण उत्तमार्थ में अंतर्भूत हो जाते है। व अतीचार प्रतिक्रमण सर्वातीचार में त्रिविधाहार व्युत्सृजन उत्तमार्थमें तथा पंच वर्ष में होने वाला यौगिक प्रतिक्रमण सांवत्सरिक में ही गर्भित हो जाते है।

पाक्षिकादि प्रतिक्रमण

(शिष्य संधर्मा पाक्षिकादि प्रतिक्रमे लघ्वीभिः भक्तिभिः आचार्यं वन्देरन्)

अर्थ—शिष्य और सधर्मा पाक्षिकादि प्रतिक्रम में लघु भक्तिओं के द्वारा आचार्य की वन्दना करें।

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रातः

नमोऽस्तु प्रतिष्ठापन सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(जाप्य ९)

सम्मचणाण दंसण वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरुलहु मव्वा वाहंमट्ठ गुणा होंतिसिद्धाणं ॥१॥

तवसिद्धे णय सिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धेय ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

नमोऽस्तु प्रतिष्ठापन श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(जाप्य ६)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीति त्र्यधिकानि चैव
पंचाशदष्टौ च सहस्र संख्यमेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि ॥१॥
अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्ति जुत्तो सदणाण महोवयं सिरसा ॥२॥
नमोऽस्तु प्रतिष्ठापनाचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(जाप्य ६)

श्रुतजलधि पारगेभ्यः स्वपर मत विभावनापट्ट मतिभ्यः ।
सुचरित तपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥
छत्तीस गुण समग्गे पंचविहाचार करण संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह कुसले धम्माइरिये सदा वन्दे ॥२॥
गुरुभक्ति संजमेण य तरंति संसार सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठकम्मं जम्मणमरणं ण पावेंति ॥३॥
येनित्यं व्रतमन्त्रहोम निरता ध्यानाग्नि होत्रा कुलाः ।
षट् कर्माभिरतास्तपोधन धनाः साधु क्रिया साधवः ॥४॥
शील प्रावरणा गुण प्रहरणाश्चन्द्रार्क तेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वार कपाट पाटनभटाः प्रीणंतु मां साधवः ॥५॥

गुरवः पांतु नो नित्यं ज्ञान दर्शन नायकाः ।
चारित्रार्णवगम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥६॥

इसके बाद "इष्टदेवतानमस्कार पूर्वक" "समतासर्वं भूतेषु" इत्यादि पाठको पढ़कर शिष्य सधर्मासहित आचार्य "सिद्धानुद्धूत" आदि सिद्धभक्ति अंचलिका सहित व "येनेन्द्रान्" इत्यादि चारित्रभक्ति बृहदालोचना सहित अर्हद्भट्टारक के सामने पढ़ें। आचार्य और शिष्य सधर्मा साधुवर्गों की यह क्रिया समान है।

नमः श्री वर्धमानाय निर्धूतकलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥१॥

समता सर्व भूतेषु संयमे शुभ भावना ।
आर्त रौद्रपरित्याग स्तद्धि सामायिकं मतं ॥२॥

सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थं "पाक्षिक" प्रतिक्रमण क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा वन्दना स्तव समेतं सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। चातुर्मासिक में चातुर्मासिक व वार्षिक में वार्षिक शब्दों का प्रयोग करे।

(णमो अरहन्ताणं इत्यादि दंडक को पढ़कर कायोत्सर्ग करके थोस्सामिस्तव पढ़कर सिद्धभक्ति पढ़ें।

सिद्ध भक्ति

सिद्धानुद्धूत कर्म प्रकृति समुदयान्साधितात्मस्वभावान।
वंदे सिद्धि प्रसिद्धयै तमनुपमगुणप्रग्रहाकृष्टितुष्टः ॥
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धि प्रगुण गुणगणोच्छादि दोषापहारा
द्योग्योपादान युक्त्या दृषद इह यथाहेमभावोपलब्धिः
नाभावः सिद्धिरिष्टा नानिजगुण हति स्तत्तपो भिर्न युक्ते
रस्त्यात्मानादि बद्धः स्वकृतजफल भुक् तत्क्षयान्मोक्षभागि
ज्ञाता द्रष्टा स्वेदह प्रमिति रूप, समाहार विस्तार धर्मा।
ध्रौव्योत्पत्ति व्ययात्मा स्वगुण युत इतो नान्यथासाध्यसिद्धि
स त्वन्तर्बाह्यहेतु प्रभव विमल सद्दर्शन ज्ञानचर्या।
संपद्धेति प्रधात क्षत दुरिततया व्यञ्जिताचिंत्य सारैः ॥
कैवल्य ज्ञानदृष्टि प्रवर सुख महावीर्य सम्यक्त्व लब्धि।
ज्योति र्वातायनादि स्थिर परम गुणै रद्भुतै र्भासमान ॥
जानन्पश्यन्समस्त सममनुपरतं सम्प्रतृप्यन्वितन्वन्।
धुन्वन्ध्वातं नितांतं निचित मनुपमं प्रीणयन्नीश भावं ॥
कुर्वन्सर्व प्रजाना मपरम भिभवन् ज्योतिरात्मान मात्मा।
आत्मन्ये वात्मनासौक्षण मुपजयन्सत्स्वयंभू प्रवृत्त ॥४
छिंदन्शेषा नशेषा न्निगलबल कलीं स्तै रनंत स्वभावैः।
सूक्ष्म त्वाग्र्य वगाहा गुरुलघु क गुणैः क्षायिकैः शोभमानः
अन्यश्चान्य व्यपोह प्रवण विषय संप्राप्ति लब्धि प्रभावैः।
रुर्ध्वं ब्रज्या स्वभावा त्समय मुपगतो धाम्नि संन्तिष्ठतेऽग्रे

अन्याकाराप्ति हेतु र्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः ।
प्रागात्मोपात्तदेहप्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तिः ।
क्षुत्तृष्णाश्वासकासज्वरमरणजरानिष्टयोगप्रमोह—
व्यापत्त्याद्युग्रदुःखप्रभवभवहतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ६
आत्मोपादानसिद्धं स्वयमतिशयवद्वीतबाधं विशालं ।
वृद्धिह्रासव्यपेतं विषयविरहितं निःप्रतिद्वन्द्वभावम् ॥
अन्यद्रव्यानपेक्षं निरुपममिमितं शाश्वतं सर्वकालं ।
उत्कृष्टानन्तसारं परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥
नार्थः क्षुत्तृड्विनाशाद्विविधरसयुतैरन्नपानैरशुच्या ।
नास्पृष्टेर्गन्धमाल्यैर्नहि मृदुशयनै ग्लानि निद्राद्यभावात् ।
आतङ्कार्तेरभावे तदुपशमनसद्भेषजानर्थतावद् ।
दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगततिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥
तादृक्सम्पत्समेता विविधनयतपःसंयमज्ञानदृष्टि—
चर्यासिद्धाः समन्तात्प्रविततयशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।
भूता भव्या भवन्तः सकलजगति ये स्तूयमाना विशिष्टै ॥
स्तान्सर्वान्नौम्यनंतान्निजिगमिषुररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ९

अंचलिका—

इच्छामि भन्ते सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सा-
लोचेउं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचारित्तजुत्ताणं अट्ठ,–

विहकम्मविप्पमुक्काणं अट्ठगुण संपण्णाणं उड्ढलोयमत्थ यम्मि पइट्ठियाणं तव सिद्धाणं णयसिद्धाणं संजम सिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीताणागदवट्टमाण कालत्तय सिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सया णिच्च कालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थं आलोचना चारित्रभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(ऐसा उच्चारण करके "णमो अरहंताणं" इत्यादिक दंडक को पढ़कर कायोत्सर्ग करके थोस्सामिस्तव पढ़े।

चारित्र भक्ति

येनेन्द्रान्भुवनत्रयस्य विलसत्केयूरहारांगदान्,
भास्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्तुङ्गोत्तमाङ्गान्नतान्।
स्वेषां पादपयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा,
वंदे पञ्चतयं तमद्य निगदन्नाचारमभ्यर्चितम्।
अर्थव्यंजनतद्द्वयाविकलताकालोपधाप्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपन्हवो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम्।

श्रीमज्ज्ञातिकुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्म्युद्धूतयेकर्मणाम् ।२।
शंकादृष्टि-विमोहकांक्षणविधिव्यावृत्तिसन्नद्धतां,
वात्सल्यं विचिकित्सनादुपरतिं, धर्मोपबृंहक्रियां ।
शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्भ्रष्टस्य संस्थापनं,
वंदे दर्शनगोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् । ३ ।
एकान्ते शयनोपवेशनकृतिः संतापनं तानवम्,
संख्यावृत्तिनिबन्धनामनशनं विष्वाणमर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रियदन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगतिप्राप्त्यभ्युपायं तपः । ४ ।
स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ ।
कायोत्सर्जनसत्क्रिया विनयइत्येवं तपः षड्विधं,
वंदेऽभ्यंतरमन्तरंगबलवद्विद्वेषिविध्वंसनम् । ५ ।
सम्यग्ज्ञानविलोचनस्य दधतः श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं वंदे सतामर्चितम् । ६ ।

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनोभाषानिमित्तोदयाः,
पंचेर्य्यादिसमाश्रयाः समितयः पंचव्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं पूर्वं न दृष्टं परैं,
राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीरं नमामो वयम् ।७।
आचारं सह पंचभेदमुदितं तीर्थं परं मंगलं,
निर्ग्रंथानपि सच्चरित्रमहतो वंदे समग्रान्यतीन् ।
आत्माधीनसुखोदयामनुपमां लक्ष्मीमविध्वंसिनी,
मिच्छन्केवल दर्शनाव गमन प्राज्य प्रकाशोज्ज्वलाम् ।८।
अज्ञानद्य दवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा ।
तस्मिन्नर्जित मस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति ।।
वृत्तेः सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धि नयत्यद्भुतम् ।
तन्मिथ्या गुरु दुष्कृतं भवतु मे स्वं निंदितो निंदितं ।।६।।
संसार व्यसनाहति प्रचलिता नित्योदयप्रार्थिनः ।
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः
मोक्षस्यैव कृतं विशाल मतुलं सोपान मुच्चैस्तरां ।
आरोहन्तु चरित्र मुत्तममिदं जैनेन्द्रमोजस्विनः ।। १० ।।

आलोचना—(इस आलोचना को आठ दिन के प्रतिक्रमण में पढ़े)

इच्छामि भंते । अट्ठमियम्मि आलोचेउं अट्ठण्हं दिवसाणं अट्ठण्हं राईणं अब्भंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो दंमणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

इस आलोचना को पाक्षिक प्रतिक्रमण मे पढ़ें ।

इच्छामि भन्ते ! पक्खियम्मि आलोचेउं पण्णरसण्हं दिवसाणं पण्णरसण्हं राईणं अब्भंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो चरित्तायारो तवायारो वीरियायारो चेदि ।

इस आलोचना को चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में पढ़ें ।

इच्छामि भन्ते ! चाउमासयम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसय दिवसाणं वीसुत्तर-सयराईणं अब्भंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो चरित्तायारो तवायारो वीरियायारो चेदि ।

इस आलोचना को वार्षिक प्रतिक्रमण में पढ़ें ।

इच्छामि भन्ते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउ वारसण्हं मासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं तिण्हं छावट्ठिसयदिवसाणं, तिण्हं छावट्ठिसयराईणं अब्भंतरादो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो चरित्तायारो तवायारो वीरिया-यारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो काले विणये उवहाणे वहुमाणे तहेव अणिण्हवणे विंजण अत्थ तदुभये चेदि णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदोसे अक्खरहीणं वा सरहीणं वा पदहीणं वा विंजणहीणं वा अत्थहीणं वा गंथहीणं वा थयेसु वा थुईसु वा अत्थक्खाणेसु वा अणियोगेसु वा अणियोगद्दारेसु

वा अकाले सज्झाओ कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो काले वा परिहाविदो अच्छाकारिदं मिच्छामेलिदं आमेलिदं वा मेलिदं अण्णहादिण्णं अण्णहा पडिच्छिदं आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

दंसणायारो अट्ठविहो णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्विदिगिंछा अमूढदिट्ठी य उवगूहणठिदिकरणं वच्छल्ल पहावणा चेदि। अट्ठविहो परिहाविदो संकाए कंखाए विदिगिंच्छाए अण्णादिट्ठी पसंसणदाए परपाखंड पसंसणदाए अणायदणसेवणदाए अवच्छलदाए अप्पहावणदाए तस्समिच्छा मे दुक्कडं ॥ २ ॥

तवायारो वारस विहो अब्भंतरो छव्विहो वाहिरो छव्विहो चेदि तत्थ वाहिरो अणसणं आमोदरियं वित्तिपरिसंखा रसपरिच्चाओ सरीर परिच्चाओ विवित्त सयणासणं चेदि। तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्ते विणओ वेज्जावच्चं सज्झाओ झाणं विउस्सग्गो चेदि। अब्भंतरं बाहिरं बारसविहं तपो कम्मं ण कदं णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वरवीरिय परिक्कमेण जहुत्तमाणेणं बलेण वीरिएण परिक्कमेण णिगूहियं तवो कम्मं ण कदं णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ४ ॥

चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो पंचमहव्वयाणि पंच समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा आउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा तेउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वाउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता हरियां बीया अंकुरा छिण्णा भिण्णा तस्स उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

बेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुक्खिकिमि संख खुल्लय वराडय अक्खरिट्ठ वालसंबुक्क सिप्पि पुलविकाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुंथुद्देहिय विंछिय गोभिंद गोजूव मक्कुण पिपीलियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा दंसमसय मक्खिय पयंग कीड भमर महुयरि गोमक्खियाइया तेसिं

उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदोवा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा अंदाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उब्भेदिया उववादिमा अवि चउरासीदि जोणि पमुहसद सहस्सेसु एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।१।

आहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा राएण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पमादेण वा पेम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादरेण वा केण विकारणेण जादेण वा सव्वो मुसावादादो भासिओ भासाविओ भासिज्जंतो वि समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

आहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णदाणादो वेरमणं से गामे वा णयरे वा खेडे वा कव्वडे वा मंडवे वा मंडले वा पट्टणे वा दोणमुहे वा घोसे वा आसमे वा सहाए वा संवाहे वा सण्णिवेसे वा तिणं वा कट्ठं वा वियडिं वा मणिं वा एवमाइयं अदत्तं गिण्हियं गेण्हावियं गेण्हिज्जंतं समिणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

आहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविसएसु वा माणुसिएसु वा तेरिच्छिएसु वा अचेयणिएसु वा मणुणामणणेसु रूवेसु मणुणामणुणेसु सद्देसु मणुणा मणुणेसु गन्धेसु मणुणामणुणेसु रसेसु मणुणामणुणेसु फासेसु चक्खिंदिय परिणामे सोदिंदिय परिणामे घाणिंदिय परिणामे जिब्भिंदिय परिणामे फासिंदिय परिणामे णोइंदिय परिणामे अगुत्तेण अगुत्तिंदिएण णवविहं बंभचरियं ण रक्खियं ण रक्खावियं रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

आहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो णाणा-वरणीयं दंसणावरणीयं वेयणीयं मोहणीयं आउग्गं णामं गोदं अन्तरायं चेदि अट्ठविहो तत्थ वाहिरो परिग्गहो उवयरण भण्डफलह पीठ कमंडलु संथार सेज्ज उवसेज्ज भत्त पाणादि भेएण अणेयविहो एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं वद्धं वद्धावियं वद्धज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥५॥

आहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइभोयणादो वेरमणं से असणं पाणं खादियं रसाइयं चेदि चउव्विहो आहारो तित्तो वा कडुओ वा कसाइल्लो वा अमिलो वा महुरो वा लवणो वा दुच्चिंतिओ दुब्भासिओ दुप्परिणामिओ

दुस्सिमिणीओ रत्तीय भुत्तो भुंजावियो भुज्जिजंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा दुक्कडं ॥६॥

पंच समिदीओ ईरियासमिदी भासा समिदी एसणा समिदी आदावण णिक्खेवण समिदी उच्चार पस्सवण खेल सिंहाणणं वियडिय पइट्ठावणासमिदी चेदि। तत्थ ईरियासमिदी पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिस विदिसासु विहर माणेण जुगंत्तर दिट्ठिणा दिट्ठिव्वा डवडव चरियाए पमाद दोसेण पाण भूद-जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कारन्तो वा समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तत्थ भासा समिदी कक्कसा कडुया परुसा णिट्ठुरा परकोहिणी मज्झं किसा अइमाणिणी अणयंकरा छेयंकरा भूयाण वहंकरा चेदि दसविहा भासा भासिया भासाविया भासिज्जंतो वि समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

तत्थ एसणा समिदी आहाकम्मेण वा पच्छा कम्मेण वा पुरा कम्मेण वा उद्दिट्ठयडेण वा णिद्दिट्ठयडेण वा कीडयडेण वा साइया रसाइया सइङ्गाला सधूमिया अइगिद्धीए अग्गिवछ्गहं जीवणिकायाणं विराहणं काऊणं अपरिसुद्धं भिक्खं अण्णं पाणं आहारादियं आहारियं आहारिज्जंतं वि समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

तत्थ आदावण णिक्खवण समिदी चक्कलं वा फलहं वा पोथयं वा कमण्डलुं वा विपडिं वा मणिं वा फलहं वा एवमाइयं उवयरणं अप्पडिलेहिऊण गेण्हंतेण वा ठवंतेण वा पाण-भूद-जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमरिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

तत्थ उच्चार पस्सवण-खेल-सिंहाणय वियडि-पइट्ठावणिया समिदी रत्तीए वा वियाले वा अचक्खु विसये अवत्थंडिले अब्भोवयासेसणिद्धे सवीए सहरिए एवमाइएसु अप्पासुगट्ठाणेसु पइट्ठावन्ते तृणपाण भूद-जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

तिण्णि गुत्तीओ मण गुत्तीओ वचि गुत्तीओ काय गुत्तीओ चेदि, तत्थ मणगुत्ती अट्ठेझाणे रूट्ठे झाणे इहलोय सण्णाए परलोए सण्णाए आहार सण्णाए भय सण्णाए मेहुण सण्णाए परिग्गह सण्णाए एवमाइयासु जा मण गुत्ती ण रक्खिआ ण रक्खाविया ण रक्खिज्जंतंपि समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥११॥

तत्थ वचिगुत्ती इत्थि कहाए भत्त कहाए राय कहाए चोर कहाए वेर कहाए परपासंड कहाए एवमाइयासु जा

वचि गुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया ण रक्खिज्जंतो व समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१२॥

तत्थकाय गुत्ती, चित्त कम्मेसु वा पोत्त कम्मेसु वा कट्ठ कम्मेसु वा लेप्प कम्मेसु वा एवमाइयासु जा काय गुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया ण रक्खिज्जंतो व समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१३॥

णवसु बम्भचेर गुत्तीसु चउसु सण्णासु चउसु पच्च-एसु दोसु अट्टरूद्दसंकिलेस परिणामेसु तीसु अप्पसत्थ संकिलेस परिणामेसु मिच्छाणाण मिच्छा दंसण मिच्छा चरित्तेसु चउसे उवसग्गेसु पंचसु चारित्तेसु छसु जीवणिकाएसु छसु आवास-एसु सत्तसुभयेसु अट्ठसुसुद्धीसु (णवसुबंभचेर गुत्तीसु) दससु समण धम्मेसु धम्मज्झाणेसु दससु मुण्डेसु बारसेसु संजमेसुबावीसाए परीसहेसु पणवीसाए भाव-णासु पणवीसाए किरियासु अट्ठारस सीलसहस्सेसु चउ-रासीदि गुण सहस्सेसु मूलगुणेसु उत्तर गुणेसु अट्ठ-मियम्मि पक्खियम्मि (चाउमासियम्मि-संवच्छरियम्मि) अइक्कमो वदिक्कमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणा-भोगो जोतं पडिकमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं समाहिं मरणं पंडियमरणं वीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्तिहोउ मज्झं ।

अनंतर—केवल आचार्य "णमो अरहंताणं" इत्यादि पांच पदों का उच्चारण कर कायोत्सर्ग थोस्सामि करके "तवसिद्धे" इत्यादि गाथाको अंचलिका सहित पढकर पुनः दंडक कायोत्सर्ग स्तवादि विधि करके "प्रावृट्काले" इत्यादि योगि भक्ति को अञ्चलिका सहित पढे। अनंतर "इच्छामिभन्ते। चरित्तायरो" इत्यादि पांच दंडक को पढें।

केवल आचार्य

नमोऽस्तुसर्वातीचारविशुद्धयर्थं सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। "णमो अरहंताणं" इत्यादि पांच पदों का उच्चारण कर कायोत्सर्गकरके थोस्सामिस्तव पढें।

सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमंतहेवअवगहणं।
अगुरु लहु मव्वा वाहंअट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

तवसिद्धे णयसिद्धे संजम सिद्धे चरित सिद्धेय
णाणम्मि दंसणम्मिय सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते। सिद्ध भत्ति कओ सग्गो कओ तस्सा लोचेउं सम्म णाण सम्मदंसण संम्म चरित्तजुत्ताणंअ ट्ठ-विह कम्मविप्प मुक्काणं अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमत्थ यम्मि पइट्ठियाणं तव सिद्धाणं णयसिद्धाणं संजम सिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीताणागदवट्ट माण कालत्तय सिद्धाणं

सव्वसिद्धाणं सया णिच्च काले अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ गमणं समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

नमोऽस्तु सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थ मालोचना योगि भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(णमो अरहंताणं इत्यादि पंचपदो का उच्चारण कर कायोत्सर्ग करके थोस्सामि पढे)

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतितसलिले वृक्ष मूलाधिवासाः।
हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रति विगतभया काष्ट वत्त्यक्तदेहाः॥
ग्रीष्मे सूर्यांशुतप्ता गिरि शिखर गताः स्थान कूटान्तरस्था
स्ते मे धर्मं प्रदद्यु र्मुनिगणवृषभामोक्ष निःश्रेणिभूताः ॥१॥
गिम्हेगिरि सिहरत्था वरसा याले रुक्ख मूल रयणीसु
सिसिरे बाहिर सयणा तेसाहू वन्दिमो णिच्चं ॥२॥

गिरि कन्दर दुर्गेषु ये वसंति दिगम्बराः।
पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

इच्छामि भन्ते ! योगिभत्ति काओसग्गो कओतस्सालोचेउं अड्ढाइज्जदीवदो समुद्देसु पण्णारस कम्म भूमिसु आदावण रुक्खमूल अब्भोवास ठाणमोण वीरासणेक्क पास कुक्कुडासण चउत्थ पक्ख खवणादि जोग जुत्ताणं

सव्वसाहूणं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्कखओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगइगमणंसमाहिमरणं जिण गुण सम्पत्ति होउमज्झं ।

आलोचना

इच्छामिभन्ते ! चरित्तायारोतेरसविहो परिहाविदो पंच महव्वदाणि पंच समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थपढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा आउकाइया जीवा असंखेजासंखेजा तेउकाइयाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा वणफ्फादि काइयाजीवा अणंताणंता हरिथावीया अंकुरा छिण्णा भिण्णा एदेसिं उद्दावणंपरिदावणं विराहणं उवघादो कदोवा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

वेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुक्खि किम्मि संख खुल्लय वराडय अक्ख रिट्ठगंडवाल संवुक्क सिप्पि पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणु मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

तेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुंथे-देहिय-विंछिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण पिपीलियाइया एदेसिं उद्दा-

वणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।३।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा दंस-मसय-मक्खिय-पयंग कीडभमर महुयर गोमक्खियाइया एदसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदोवा कारिदो वा कीरन्तो वा समणु मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ४

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा अंदाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उन्सदिमा उववादिमा अविचउरासीदि जोणिय मुह सद सहस्सेसु एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु मणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ५

"वदसमिदिंदिय" आदि को "छेदोवट्ठावणंहोउमज्झं" तक तीनबार पढ़कर भगवानके सामने अपने दोषों की आलोचना करे, तथा दोषानुसार प्रायश्चित्त को ग्रहण करे।

वदसमिदिंदियरोधोलोचो आवासमसमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंत वणं ठिदिभोयण मेय भत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तोहं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होउमज्झं ॥ तीन-वार पढ़े ॥
प्रायश्चित्तशोधन रस परित्याग क्रियते ।

अनन्तर "पंचमहाव्रत" इत्यादि पाठ को तीन बार पढ़कर योग्य शिष्यादि को प्रायश्चित्त देकर भगवान को गुरुभक्ति प्रदान करे अर्थात् गुरुभक्ति पढ़े। अर्थात्— आचार्य के प्रायश्चित्त ग्रहण करने के बाद शिष्य और सधर्मा आचार्य के समान ही पूर्वोक्त लघुसिद्धभक्ति वा लघुयोगभक्ति पढ़कर व आलोचना "वदसमिदिंदिय" आदि को पढ़कर आचार्य के सामने अपने अपने दोषों का निवेदन करें व आचार्य भी "पंचमहाव्रत" आदि को तीनबार पढ़कर यथा योग्य शिष्यों को यथायोग्य प्राय-श्चित प्रदान करें। पुनः आचार्य भगवान के समीप लघुगुरुभक्ति पढ़ व शिष्य सधर्मा आचार्य को गुरु भक्ति पूर्वक वन्दना करें।

पंचमहाव्रत पंचसमिति पंचेन्द्रियरोधलोच षडावश्यक क्रियादयोऽष्टाविंशतिमूलगुणाः उत्तमक्षमा मार्दवार्जव शौच सत्य संयम तपस्त्यागा किंचन्य ब्रह्मचर्याणि दश-लाक्षणि को धर्मः अष्टदश शील सहस्राणि चतुरशीतिलक्ष गुणाः त्रयोदश विधं चारित्रं द्वादश विधं तपश्चेति सकलं सम्पूर्णं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु साक्षिकं सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रत समारूढं ते मे भवतु। तीनवार।

नमोऽस्तु निष्ठापनाचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

श्रुत जलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावना पटु मतिभ्यः ।
सुचरित तपो निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस गुण समग्गे पंचविहाचार करण संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे ॥२॥

गुरुभत्ति संजमेण य तरंति संसार सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ कम्मं जम्मण मरणं ण पावेंति ॥३॥

येनित्यं व्रतमंत्र होम निरता ध्यानाग्नि होत्राकुलाः ।
षट्कर्मा भिरतास्तपो धन धनाः साधु क्रियाः साधवः ।४।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्क तेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वार कवाटपाटनभटा प्रीणंतु मां साधवः ॥५॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शन नायकाः
चारित्रर्णव गम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥६॥

इच्छामिभन्ते ! पक्खियम्मि (चाउमासियम्मि-संवच्छरियम्मि) ।

(यथा योग्य स्थान मे यथा योग्य प्रयोग करे) ।

आलोचेउं पंच महव्वयाणि तत्थपढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं विदियं महव्वदं मुसावादादो-वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्ण दाणादो वेरमणं चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइभोयणादो वेरमणं, तिसु

गुत्तीसु णाणेसु दंसणेसु चरित्तेसु वावीसाए परीसहेसु पण-वीसाए किरियासु अट्ठारयसीलसहस्सेसु चउरासीदि गुण सद सहस्सेसु वारसण्हं संजमाणं तवाणं वारसण्हं संगाणं तेरसण्हं चरित्ताणं, चउदसण्हं पुव्वाणं एगासण्हं पडि-माणं दसविह मुण्डाणं दसविह समण धम्माणं दस विहधम्मज्झणाणं णवण्हं बंभचेरे गुत्तीणं णवण्हं णोक-सायाणं सोलसण्हं कसायाणं अट्ठहं कम्माणं अट्ठण्हं पवयणमाउयाणं सतण्हं भयाणं सत्तविहसंसाराणं छण्हं जीवणिकायाणं छण्हं आवासयाणं पंचण्हं इन्दियाणं पंचण्हंमहव्वयाणं पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्णं सण्णाणं चउण्हं पच्चयाणं चउण्हं उवसग्गाणं मूलगुणाणं उत्तर गुणाणं अट्ठण्हं सुद्धीणं दिट्ठियाए पुट्ठियाए पदो-सियाए परिदावणियाए से कोहेणवा माणेण वा मायेण वा लोहेण वा राएण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भयेण वा पदोसेण वा पमादेण वा पिम्मेण वा पिवा-सेण वा लज्जेण वा गारवेणवा एदेसिंअच्चासणदाए तिण्हं दंडाणं तिण्हं लेस्साणं तिण्हं गारवाणं तिण्हं अप्पसन्थंसंकिलेसपरिणामाणं दोण्हं अट्टरुद्दसंकिलेस परिणामाणं मिच्छ णाण-मिच्छा दंसण-मिच्छचारित्ताणं मिच्छत्तपाउग्गं पाउग्गं असंजम कसायपाउग्गं जोगपाउग्गं अपाउग्ग से वणदाए पाउग्गगरहणदाए इत्थ मे जो कोई दि

पक्खियम्मि (चउमा सियम्मि) (संवच्छरिम्मि) अइक्कमो वदिक्कमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो तस्स-भंत्ते ! पडिक्कामम्मि पडिक्कमंत्तस्स मे सम्मत्तमरणं समाहिमरणं पंडिग्रमरणं वीरयमरणं कम्मक्खओ वोहि-लाहो सुगइगमणंसमाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ।

वदसमिदिंदियरोधोलोचो आवासयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंत वणं ठिदि भोयण मेयभत्तं च ॥१॥
एदेखलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिंपण्णत्ता ।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होउमज्झं ॥

पंचमहाव्रत पंचसमिति पंचेन्द्रियरोध लोचषडावश्यकं क्रियादयो अष्टाविंशति मूलगुणाः उत्तमक्षमा मार्दवार्जव सत्य शौच संयम तप स्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्याणि दश-लक्षणिकोधर्मः, अष्टादशशील सहस्राणि चतुरशीतिलक्ष-गुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं द्वादशविधं तपश्चेति सकलं संपूर्णं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु साक्षिकं। सम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥ अनंतर आचार्य सभी शिष्य वर्गों के साथ साथ प्रतिक्रमण स्तुति को करें ।

प्रतिक्रमण भक्ति

सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थ पाक्षिक प्रतिक्रमणायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भावपूजा वंदना स्तव समेतं प्रतिक्रमणभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

चत्तारि मंगलं–अरहंत मंगलं सिद्धमंगलं साहु मंगलं केवलिपणत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारिलोगुत्तमा-अरंहत लोगुत्तमा सिद्धलोगुत्तमा साहुलोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंतसरणं पव्वज्जामि सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहुसरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणंपव्वज्जामि ।

अढ्ढाइज्ज दीवदो समुद्देसु पण्णारस कम्म भूमिसु जावि अरहंताणं भयवंताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं अंतयडाणं पारयडाणं धम्माइरियाणं धम्मदेसगाणं धम्म णायगाणं धम्म वर चाउरंग चक्क वट्टीणं देवाहिदेवाणं णाणाणं दंसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामायियं सव्वसावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचिया काएण करेमि

कारेमि कीरंतं विणा समणु मणाणि तस्स भंते । अइचारं पच्चक्खामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(सत्ताईसउच्छ्वास में नव जाप्य)

(पुनः केवल आचार्य थोस्सामि इत्यादि दंडक व गणधर वलय को पढकर प्रतिक्रमण दंडकों को पढ़े और सभी शिष्य सधर्मा तबतक कायोत्सर्ग से ही स्थित गुरु मुख निर्गत प्रतिक्रमण दंडकों को सुनते रहें ।

केवल आचार्य

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवलि अणंतजिणे ।
णर पवर लोय महिए विहुयर यमले महप्पणो ॥ १ ।
लोयस्सुज्जोय यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥ २ ॥

उसह मजियं च वन्दे संभव मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चन्दप्पहं वंदे ॥ ३ ॥
सुविहिं च पुष्फयंतं सीयलसेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥
कुंथुं च जिणवींदरं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं
वन्दामि रिट्ठणेमिं तहपासं वड्ढमाणं च ॥ ५ ॥

एवं मए आभेत्थुआ विहुयर यमला पहीण जरमरणा ।
चोवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥
कित्तियवंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग णाणलाहं दिंतु समाहिं च मे वोहिं ॥ ७ ॥
चंदेहिंणिम्मलयरा, आइच्येहिं अहियपयासंता ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धं मम दिसंतु ॥ ८ ॥

प्रतिक्रमण दण्डक

णमो अरंहताणं णमोसिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

णमो जिणाणं णमो ओहिजिणाणं णमोपरमोहिजिणाणं णमो :सव्वोहि जिणाणं णमो अणंतोहिजिणाणं :णमो कोट्ठबुद्धीणं णमो वीजबुद्धीणं णमो पादानु सारीणं णमो संभिन्न सोदाराणं णमो सेयंबुद्धाणं णमोपत्तेयबुद्धाणं णमो वोहियबुद्धाणं णमो उजु मदीणं णमो विउलमदीणं णमो दस पुव्वीणं णमो चउदस पुव्वीणं णमो अट्ठंगमहा णिमित्त कुसलाणं णमो विउव्व इट्ठिपत्ताणं णमो विज्जा-हराणं णमो चारणाणं णमो पण्ण समणाणं णमो आगास गामिणं णमो आसी विसाणं णमो दिट्ठिविसाणं णमो उग्गतवाणं णमो दित्ततवाणं णमो तत्ततवाणं महातवाणं णमो घोरतवाणं णमो घोरगुणाणं णमो घोरपरक्कमाणं

णमो घोरगुणबंभचारीणं णमो आमोसहिपत्ताणं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं णमो जल्लोसहिपत्ताणं णमो विप्पो-सहिपत्ताणं णमो सव्वोसहिपत्ताणं णमो मणवलीणं णमो वचिवलीणं णमो कायवलीणं णमो खीरसवीणं णमो सप्पिसवीणं णमो महुर सवीणं णमो अमियसवीणं णमो अक्खीणमहाणसाणं णमो वड्ढमाणाणं णमो सिद्धा-यदणाणं णमो भयवदो महदिमहावीर वड्ढमाण बुद्ध-रिसीणं चेदि ।

जस्संतियं धम्मपहं णियच्छे ।
तस्संतियं वेणायियं पउंजे ।
कायेणवाचामणसा विणिच्चं ।
सक्कारए तं सिरपंचमेण ॥ १ ॥

सुदं मे आउस्संतो ! इहखलु समणेण भयवदो महदि महावीरेण महाकस्सवेण सव्वण्हुणा सव्वलोग दरि सिणा सदेवासुरमाणुसस्स लोयस्स आगदि चवणोववादं बंधंमोक्खं इद्ठि ठिदिं जुदिं अणुभागं तक्कं कलं मणो माणसियं भूतं कयं पड़िसेवियं आदिकम्मं अरुह कम्मं सव्वलोए सव्व भावे सव्वं समं जाणंता पस्संता विहर माणेण समणाणं पंचमहव्वदाणि राई भोयणावेरमण छट्ठाणि सभावणाणि सभाउगपदाणि सउत्तर सदाण्णिम्मं

धम्मं उवदेसिदाणि । तंजहा—पढमे महव्वेद पाणादिवादा दो वेरमणं विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं तिदिये महव्वदे अदिएणादाणदो वेरमणं चउत्थे महव्वदे मेहुणा दो वेरमणं पंचमेमहव्वदे परिग्गहादो वेरमणं छट्ठे अणुव्वदे राइभोयणादो वेरमणं चेदि ।

तत्थपढमे महव्वदे सव्वं भन्ते । पाणादिवादं पचक्खा मि जावज्जीवं तिविहेणमणसा वचिया काएण से एइन्दिया वा वेइन्दिया वा तेइंदिया वा चउरिंदिया वा पंचिंदिया वा पुढविकाइए वा आउकाइये वा तेउकाइए वा वणप्फदि का इए वा तसकाइए वा अंदाइए वा पोदाइए वा रसाइए वा संसेदिमे वा सम्मुच्छिमे वा उमेदिमे वा उववादिमे वा तसे वा थावरे वा वादरे वा सुहुमे वा पाणे वा भूदे वा जीवे वा सत्तो वा पज्जत्तो वा अपज्जत्तो वा अवि चउरासी- दि जोणिपमुह सदसहस्सेसु रोव सयं पाणादि वादिज्ज णो अण्णेहि पाणे अदिवादावेज्ज अण्णहिं पाणे अदि वादिज्जंतो विण समणु मणेज्ज तस्स भंते । अइचारं पडि- क्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं वोस्सरामि पुर्व्विं चणं भंते । जंपिमए रागस्सवा दोसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण सयं पाणे अदिवाविदे अण्णेहिं पाणे आदिवा- दाविदे अण्णेहिं पाणे अदि वादिज्जंते वि समणुमणिदे तं पि इमस्स णिग्गंथस्स पावयणस्स अणुत्तरस्स केवलि-

यंस्स केवलि पणत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहिट्ठियस्स विणय मूलस्स खमाबलस्स अट्ठारम सील सहस्स परिमंडियस्स चउरासादि गुण सय सहस्सविहूसियस्स णववंभचेर गुत्तस्स नियति लक्खणस्स परिचाय फलस्स उवसम पहाणस्स खंतिमग्ग देसयस्स मुत्तिमग्ग पयासयस्स सिद्धि मग्ग पज्जवग्गा हणम्स*से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा अण्णाणेण वा वा अदंसणेण वा अविरिएण वा असंयमेण वा असमणेणवा अणहि गमणेणवा अभिमसि दाएण वा अवोहि दाएण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पदोसेण वा पमादेण वा पेम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादेरणा वा केण विकरणेण जाणेण वा आलसदाए कम्म भारिगदाए कम्म गुरु गदाए कम्म-दुच्चरि दाए कम्म पुरु वकडदाए तिगारव गुरु गदाए अवहुसुददाए अविदिदपरमट्ठदाए तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरिहामि आगामेसिंच अपच्चक्खियं पच्चक्खामि अणालोचियं आलोचेमि अणिंदियं णिंदामि अगरहियं गरहामि अपडिक्कंतं पडिक्कमामि विराहणं वोस्सरामि आराहणं अब्भुट्ठमि अण्णाणं

*आगे जो पाठ पुनः लेने के लिये जगह पर······ चिन्ह है वह पुनः यहीं से शुरू होता है।

वोस्सरामि सयणाणं अब्भुट्ठेमि कुदंसणं वोस्सरामि सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि कुचरियं वोस्सरामि सुचरियं अब्भुट्ठेमि कुतंव वोस्सरामि सुतपं अब्भुट्ठेमि अकरणिज्जं वोस्सरामि करणिज्जं अब्भुट्ठेमि अकिरियं वोस्सरामि किरियं अब्भुट्ठेमि पाणादि वादं वोस्सरामि अभयदाणं अब्भुट्ठेमि मोसं वोस्सरामि सच्चं अब्भुट्ठेमि अदत्ता दाणं, वोस्सरामि दिण्णं कप्प किज्जं अब्भुट्ठेमि अबंभे वोस्सरामिबंभ चरियंअब्भुट्ठेमि परिग्गहं वोस्सरामि अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि राईभोयण भोयणं वोस्सरामि दिवा भोयणमेग भत्तं पच्चुपण्णं फासुगं अब्भुट्ठेमि अट्टरुद्द-ज्भाणं वोस्सरामि धम्मसुक्कज्भाणं अब्भुट्ठेमिकिण्हणील काउलेस्सं वोस्सरामि तेउपम्म सुक्क लेस्सं अब्भुट्ठेमि आरंभं वोस्सरामि अणारंभं अब्भुट्ठेमि असंजमं वोस्सरामि संजमं अब्भुट्ठेमि सग्गंथं वोस्सरामि णिग्गंथं अब्भु ट्ठेमि सचेलं वोस्सरामि अचेलं अब्भुट्ठेमि अलोचं वोस्सरामि लोचं अब्भुट्ठेमि ण्हाणं वोस्सरामि अण्हाणं अब्भु-ट्ठेमि अखिदि सयणं वोस्सरामि खिदिसयणं अब्भुट्ठेमि दंतवणं वोस्सरामि अदंतवणं अब्भुट्ठेमि अट्ठिदि भोजणं वोस्सरामि ठिदि भोयण मेग भत्तं अब्भु ट्ठेमिअ पाणि पत्तं वोस्सरामि पयणिपत्तं अब्भुट्ठेमि कोहं वोस्सरामि खंति अब्भुट्ठेमि माणं वोस्सरामि मद्दवं

अब्भुट्ठेमि मायं वोस्सरामि अज्जवं अब्भुट्ठेमि लोहं वोस्सरामि संतोसं अब्भुट्ठेमि अतवं वोस्सरामि दुवादस विह तवो कम्मं अब्भुट्ठेमि मिच्छत्तं परिवज्जामि सम्मत्तंउवसंपज्जामि असीलं परिवज्जामि सुसीलं उवसंपज्जामि ससल्लं :परिवज्जामि णिसल्लं उवसंपज्जामि अविणयं परिवज्जामि विणयं उवसंपज्जामि अणाचारं परिवज्जामि आचारं उवसंपज्जामि उम्मग्गं परिज्जामि जिणमग्गंउवसंपज्जामि अखंतिं परिवज्जामि खंतिं उवसंपज्जामि अगुत्तिं परिवज्जामि गुत्तिं उवसंपज्जामि अमुत्तिं परिवज्जामि सुमुत्तिं उवसंपज्जामि असमाहिं परिवज्जामि सुसमाहिं उवसंपज्जामि ममत्तिं परिवज्जामि णिमत्तिं उवसंपज्जामि अभावियं भावेमि भावियं ण भावेमि इमं णिग्गंथं पव्वयणं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं णेगाइयं संसुद्धं सामाइयं सल्लघत्तणं सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं सेढिमग्गं खंति मग्गं मुत्तिमग्गं पमुत्ति मग्गं मोक्खमग्गं पमोक्ख मग्गं णिज्जाण मग्गं णिव्वाण मग्गं सव्व दुक्ख परिहाणिमग्गं सुचरिय परिणिव्वाण मग्गं जत्थ ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुंचंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति तं सद्दहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदे उत्तरं अण्णं णत्थि ण भूदं ण भवं ण भविस्सदि णाणे ण वा दंसणेण वा चरित्ते ण वा सुत्तेण

वा सीलेण वा गुणेण वा तवेण वा णियमेण वा वदेण वा विहारेण वा आलएण वा अज्जवेण वा लाहवेण वा अप्पणेण वा वीरिएण वा समणोमि संजदोमि उवरदोमि उवसंतोमि उवधि-णियडि-माण माया-मोस मूरण मिच्छा णाण मिच्छा दंसण मिच्छा चरित्तं चपडिविरदोमि सम्म णाण सम्म दंसण सम्म चरित्तं रोचेमि जंजिणवरेंहि पण्णत्तो जो मए देवसिय-राइय-पक्खिय (चाउम्मासिय-संवच्छरिय) इरिया वहि केसलोचाइ चारस्स संथारादि चारस्स पंथादि चारस्स सव्वादि चारस्स उत्तमट्ठस्स सम्म चरित्तं चरोचेमि। पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं उवट्ठावण मंडले महत्थे महागुणाणे महाणु भावे महाजसे महापुरिसाणुचिन्ने अरहंतसक्खियं सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्पसक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उत्तमट्ठम्हि इदं मेमहव्वदं सुव्वदं दढव्वदं होदु णित्थारयं पारयं तारयं आराहियं चावि ते मे भवतु।

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु। इसे तीनवार बोले।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥२ वार॥

आहावरे विदिए महव्वदे सव्वंभंते । मुसावादं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मनसा वचिया काएण से कोहेण माणेण वा माएण वा लोहेण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पदोसेण वा पमादेण वा पिम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादरेण वा केणवि कारणेण जादेण वा णेवसयंमोसंभासेज्ज ण अण्णेहिं मोसं भासाविज्ज अण्णहिं मोसं भासिज्जंतं पि ण समणुमणिज्जत तस्सभंते । अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं वोस्सरामि पुव्विंचणं भंते । जं पि मए रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण सयंमोसं भासियं अण्णेहिं मोसं भासावियं अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं समणुमणिणदं इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलि पण्णत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहियस्स वियणमूलस्स खमावलस्स अट्ठारस सीलसहस्स परिमंडियस्स चउरासीदि गुणरूव सहस्सविहूसियस्स णवसुवंभचेरगुत्तस्स णियदि लक्खगस्स परिचागकलस्स उवसमपहाणस्स खंतिमग्गदेसयस्स मुत्तिमग्ग पयासयस्स सिद्धिमग्गपज्जवसाहणस्स*'''सम्म णाण सम्म दंसण सम्मचरित्तं चरोचेमिजं जिणवरेहिं पण्णत्तो इत्थजो कोई मए देवसिय राइय पक्खिय चाउम्मासिय-संवच्छरिय

(यहां पीछे किये गये इसी चिन्ह से इसी चिन्ह तकपाठबोले)

इरियावहिकेसलोचाइचारस्स पंथादिचारस्स सव्वातिचारस्स उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तंच रोचेमि विदिए महव्वदे मुसावदादो वेरमणं उवट्ठाण मंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महापुरिसाणुचिण्णे अरहंत सक्खियं सिद्धसक्खियं साहूसक्खियं अप्पसक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उत्तमट्ठम्हि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दढव्वदं होदु णित्थारयं पारयंतारयं आराहियं ते मे भवतु ।

द्वितीयंमहाव्रत सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रत सुवतं समारूढं ते मे भवतु ॥ २ ॥

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ३ ॥

आहावरे तदिए महव्वदे सव्वंभन्ते ! अदत्तादाणं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण से देसे वा गामे वा णगरे वा खेडे वा कव्वडे वा मडंवे वा मंडले वा पट्टणे वा दोणमुहे वा घोसे वा आसणे वा सहाए वा संवाहे वा सण्णिवेसे वा तिणं वा कट्ठं वा वियडिं वा मणिं वा खेत्ते वा खले वा जले वा थले वा पहे वा उप्पहे वा रण्णे वा अरण्णे वा णट्ठं वा पमुट्ठं वा पडिदं वा अपडिदं वा सुणिहिदं वा दुण्णिहिदं वा अप्पं वा बहुं वा अणुयं वा थूलंवा सचित्तं वा अचित्तं वा मज्झत्थं वा बहित्थं वा अविदन्तं तर सोहण मित्तं

विणेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हा-
विज्ज अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं पिण समणुमणिज्ज
तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि णिदामि गरहामि
अप्पाणं वोस्सरामि पुव्विं चणं भंते ! जं मिमए रागस्स
वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण सयं अदत्तं गेण्हिदं
अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविदं अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं
पि समणुमणिदो तं पि इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स
अणुत्तारस्स केवलियस्स केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स
अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहिट्ठियस्स चउरासीदि गुणसय
सहस्सविहूसियस्स णवसु बंभचेरगुत्तस्स णियदिलक्खण-
स्स परिचाग फलस्स उव समप हाणस्स खंति मग्गदेसयस्स
मुत्ति मग्ग पयासयस्स सिद्धिमग्ग पज्जव साहणस्स······
सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचारित्तं च रोचेमि जंजिण
वरेहिं पण्णत्तो इत्थ जो मए देवसिय-राइय-पक्खिय
(चाउम्मासिय संवच्छरिय) इरिया वहि केसलोचाइ-
चारस्स संथारादि पंथादिचारस्स सव्वातिचारस्स उत्तम-
ट्ठस्स सम्मचरित्तं रोचेमि । तदिए महव्वे अदात्तादाणादो
वेरमणं उवट्ठावणमंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महा
जसे महापुरिसाणुचिण्णे अरहंतसक्खियं सिद्ध सक्खियं
साहुसक्खियं अप्प सक्खियं पर सक्खियं देवता
सक्खियं उत्तमट्ठमि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दढव्वदं होदु

णित्थारयं पारयं तरयं आराहियं चावि ते मे भवतु ।

तृतीयंच महाव्रत सर्वेषां व्रत धारिणां साम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३वार ॥

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमोउवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥ ३ ॥

आहावरे चउत्थे महव्वदे सव्वभंते । अबंभं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वच्चिया काएण से देविएसु वा माणुसिएसु वा तिरिच्छिएसुवा अचेयणिएसु वा कट्ठ-कम्मेसु वा चित्त कम्मेसु वा पोत्तकम्मेसुवा लेप्पकम्मेसु वा लयकम्मेसु वा सिल्ला कम्मेसु वा गिहकम्मेसु वा भित्तिकम्मेसुवा भेदकम्मेसु वा भंड कम्मेसु वा धादुकम्मेसु वा दंतकम्मेसु वा हत्थसंघटणदाए पादसंघटणदाए पुग्गलसंघटणदाए मणुणामणुणेसु सद्देसु मणुणामणुणेसु रुपेसु मणुणामणुणेसु.गंधेसु मणुणामणुणेसु रसेसु मणुणा-मणुणेसु फासेसु सोदिंदिय परिणामे चक्खिदिय परिणामे घाणिंदियपरिणामे जिब्भिदियपरिणामे फासिंदियपरिणामे णोइंदियपरिणामे अगुत्तेण अगुत्तींदिए णेव सयं अबंभं सेविज्ज णोअण्णेहिं अबंभं सेवाविज्ज णो अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं पि समणुमणिज्ज तस्सभन्ते। अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं वोस्सरामिपुव्वि चणं भंते । जंपि मए रागस्स वा दोसस्स वा वसंगदेस

सयं अबंभं सेवियं अण्णेहिं अबंभं सेवावियं अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं पि समणुमण्णिदं तंपि इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहिट्ठियस्स विणय मूलस्स खमाबलस्स अट्ठारस सीलसहस्स परिमंडियस्स चउरासीदि गुण सय सहस्स विहूसियस्स णवसु बंभचेर गुत्तस्स णियदि लक्खणस्स परिचागफलस्स उवसाम पहाणस्स खंतिमग्ग देसयस्स मुत्तिमग्ग पयासयस्स सिद्धिमग्ग पज्जव साहणस्स............सम्म णाण सम्मदसण सम्म चारित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्णत्तो इत्थ जो मए देवसिय राइय पक्खिय (चाउम्मासिय-संवच्छरिय) इरियावहिकेसलोचा इचारस्स संथारादि चारस्स पंथादि-चारस्स सव्वाइचारस्स उत्तमट्ठस्स सम्म चरित्तं च रोचेमि । चउत्थे महव्वदे अबंभादो वेरमणं उवट्ठावण मंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महापुरिसाणु चिण्णे अरहंत सक्खियं सिद्धसक्खियं साहु सक्खियं अप्पसक्खियं परसक्खियं देवता सक्खियं उत्तमट्ठम्हि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दिढव्वदं होदु णित्थारयं पारयं तारयं आराहियं चावि तं मे भवतु ।

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं तं मे भवतु ॥ २ ॥

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं

आहावरे पंचमे महव्वदे सव्वंभंते । दुविहं परिग्गहं पच्चक्खामि तिविहेण मणसा वचिया काएण । सो परिग्गहो दुविहो, अब्भिंतरो वाहिरो चेदि । तत्थ अब्भिंतरं परिग्गहं मिच्छत्त वेयराया तहेव हस्सादिया य छद्दोसा । चत्तारि तह कसाया चउदस अब्भंतरं गंथा । तत्थबाहिरं परिग्गहं से हिरण्णं वा सुवण्णं वा धणं वा खेत्तं वा खलं वा वत्थुं वा पवत्थुं वा कोसं वा कुठारं वा पुरं वा अंतउरं वा वलं वा वाहणं वा सयडं वा जाणं वा जयाणं वा जुगं वा गद्दियं वा रहंवा सदणं वा सिवियं वा दासी दास गो महिसगवेडयं मणि मोत्तिय संख सिप्पिपवालयं मणि भाजणंवा तंव भाजणं वा अंडजं वा वोडजं वा रोमजं वा वक्कजं वा वम्मजं वा अप्पं वा वहुं वा अणुं वा थूलं वा सचित्तंवा अचित्तं वा अमुत्थं वा वहित्थं वा अवि वालग्ग कोडि मित्तंपि णोगयं असमण पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्ज णो अण्णेहिं असमण पाउग्गं परिग्गहं गेण्हाविज्ज णो अण्णेहिं असमण पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्जंतंपि समणुमणिज्ज तस्स भंते । अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं वोस्सरा-मिपुव्विं चणं भंते । जं पि मए रागस्स वा दोसस्स वा

मोहस्स वा वसंगदेण सयं असमणं पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्जं अण्णेहिं असमण पाउग्गं परिग्गहं गेण्हाविय अण्णेहिं असमण पाउग्गं परिग्गहं गेण्हिज्जंतं पि समणुमण्णिदं तं पि इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहिट्ठियस्स विणयमूलस्स खमा बलस्स अट्ठारस सील सहस्स परिमंडियस्स चउरासीदि गुण सय सहस्स विहूसियस्स णवसु बंभचेर गुत्तस्स णियदि लक्खणस्स परिचाग फलस्स उवसम पहाणस्स खंतिमग्गय देसयस्स मुत्तिमग्ग पयासयस्स सिद्धिमग्ग पज्जव माहणस्स*...... सम्मणाण सम्मदंसण सम्म चरित्तं च रोचेमि। जं

जिणवरेहिंपण्णत्तो इत्थ जो मए देवसिय राइय पक्खिय [चाउम्मासिय संवच्छरिय] इरिया वहि वेसलोचाइचारस्स संथारादि चारस्स पंथादि चारस्स सव्वाइ चारस्स उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं रोचेमि पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं उवट्ठावणमंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महा जसे महा पुरिसाणुचिण्णे अरहंत सक्खियं सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्प सक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उत्तमट्ठम्हि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दिढव्वदं होदु णित्थारगं पारगं तारगं आराहियं चावि ते मे भवतु।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व पूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ वार ॥

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥ ३ वार ॥

आधावरे छट्ठे अणुव्वदे सव्वं भंते । राई भोयणं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचिया काएण से असणं वा पाणं वा खादियं वा सादियं वा कडुयं वा कसायं वा आमिलं वा महुरं वा लवणं वा अलवणं वा सचित्तं वा अचित्तं वा तं सव्वं चउव्विहं आहारं णेवसयं रत्तिं भुंजिज्जतं णो अण्णेहिंरत्ति भुंजाविज्ज णो अण्णेहिं रत्तिं भुंज्जिवज्जं पि समणु मणिज्ज तस्स भंत्ते । अइचारं पडिक्कमामि णिंदामिं गरहामि अप्पाणं वोस्स-रामि पुव्विंचणंभंत्ते । जं पि मए रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण चउव्विहो आहारो सयं रत्तिं भुत्तो अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविदो अण्णेहिं रत्ति भुंजिज्जं तो पि समणु मण्णिदो तं पि इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सच्चाहिट्ठियस्स विणय मूलस्स खमाबलस्स अट्ठा-रस सीलसहस्सा परिमंडियस्स चउरासीदि गुणसय सहस्स विहूसियस्स णवसु बंभचेर गुत्तस्स णियदिलक्खणस्स परि

चाग फलस्स उवसमपहाणस्स खंतिमग्ग देसयस्स मुत्ति मग्गपयासस्स सिद्धमग्गफलजयं सोहणस्स *···सम्मणाण सम्मदंसण सम्म चरित्तं च रोचेमि । जं जिण-वरेहिं पण्णत्तो इत्थजो-मए-देवसिय-राइय पक्खिय [चाउम्मासिय संवच्छरिय] इरिया वहि केसलोचाइ चारस्स संथारादि चारस्स पंथादि चारस्स सव्वाइ चार-स्स उत्तमट्ठस्स सम्म चरित्तं च रोचेमि । छट्ठे अणुव्वदे राई भोयणादो वेरमणं उवट्ठावण मंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महापुरिसाणुचिण्णे अरहंत सक्खिय सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं देवता सक्खियं इदंमे अणुव्व-दं सुव्वदं ढिढव्वदं होदु णित्थारगं पारयं तारगं आराहियं तेमे भवतु ।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढ-व्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु । ३ वार ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥ ३ वार ॥

चूलियंतु पवक्खामि भावणा पंचविंसदी ।

पंच पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ॥ १ ॥

मणगुत्तो वचिगुत्तो इरिया काय संयतो ।

एसणा समिदि संगुत्तो पढमं वद समस्सिदो ॥ २ ॥

अकोहणो अलोहोय भयहस्स विवज्जिदो ।
अणुवीचिभास कुसलो विदियंवद मस्सिदो ॥ ३ ॥
अदेहणं भावणं चावि उग्गह य परिग्गहे ।
संतुट्ठो भत्तपाणेसु तिदियं वदमस्सिदो ॥ ४ ॥
इत्थिकहाइत्थि संसग्ग हास खेल पलोयणे ।
णियमग्गि ट्ठिदो णियत्तोय चउत्थ वदमस्सिदो ॥ ५ ॥
सच्चित्ताचित्त दव्वेसु वज्झं भ्मतरसुय ।
परिग्गहादो विरदो पंचमं वदमस्सिदो ॥ ६ ॥
धिदिमंत्तो खमाजुत्तो झाणजोग पारेट्ठिदो ।
परीसहाणउरं देत्ता उत्तमं वदमस्सिदो ॥ ७ ॥
जो सारो सव्वसारसु सो सारोएस गोयम ।
सारं झाणंति णामेण सव्वबुद्धेहि देसिदं ॥ ८ ॥

इच्चेदाणि पंच महव्वयाणि राईभोयणादो वेरमण छट्ठाणि सभावणाणि समाउग्ग पदाणि सउत्तरपदाणि सम्मं धम्मं अणुपाल इत्ता समणा भयवंता णिग्गंथादो ओण सिज्झंति बुज्झंति मुचंति परिणि यंति सव्वदुक्खाणमंतं करेति परिविज्जाणंति । तं जहा—

पाणादि वादं चहि मोसगं च अदत्तमेहुण्ण परिग्गहं च वदाणि सम्मं अणुपाल इत्ता, णिव्वाण मग्गं विरदा उवेंनि जाणि काणि वि सल्लाणि गरहि दाणि जिण भासणे । ताणि सव्वाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सयामुणी २

उप्पण्णाणुप्पण्णा माया अणु पुव्वं सो णिहन्तव्वा ।
आलोयण पडिकमणं णिंदण गरहण दाए ॥ ३ ॥
अब्भुट्ठिदकरण दाए अभुट्ठिद दुक्कड णिराकरण दाए ।
भवं भाव पडिकमणं सेसा पुण दव्वदोभणिदा ॥ ४ ॥
एमो पडिक्कमण विही पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
संजमतवट्ठिदाणं णिग्गंथाणं महरिसीणं ॥ ५ ॥
अक्खर पयत्थ हीणं मत्ताहीणं च जं भवे एत्थ ।
तं खमउ णाण देवय ! देउ समाहिं च वोहिं च ॥ ६ ॥
काऊण णमोक्कारं अरहंताणं तहेव सिद्धाणं ।
आइरिय उवज्झायाणं लोयम्मि य सव्व साहूणं । ७ ।

इच्छामिभंते । पडिक्कमणमिदं सुत्तस्स मूल पदाणं उत्तर पदाणमच्चासणदाए । तं जहा—

णमोक्कार पदे अरहंत पदे सिद्धपदे आइरिय पदे उवज्झाय पदे साहु पदे मंगल पदे लोगोत्तम पदे सरण पदे सामाइय पदे चउवीसातित्थयर पदे वन्दण पदे पडिक्कमण पदे पच्चक्खाण पदे काउसग्ग पदे असीहिय पदे णिसीहिय पदे अंगंगेसु पुव्वंगेसु पइण्णएसु पाहुडेसु पाहुप्पाहुडेसु कदकम्मेसु वा भूदकम्मेसुवा णाणस्स अइक्कमणदाए दंसणस्सअइक्कमणदाए चरित्तस्स-अइक्कमणदाए तवस्स अइक्कमण दाए वीरियस्स अइक्कमण दाए से अक्खर हीणं वा पदहीणं वा सरहीणं

अडयंबर सत्थ धरा कउमंगद वद्धन उडकय सोहा ।
भागुर वर वोहि धरा देवाय महड्डिढया होंति ॥
उक्कस्सेण दोतिण्णि भवगहणाणि जहण्णे सत्तट्ठ भ
गहणाणि तदो सुमणुसुत्तादो सुदेवत्तं सुदेवत्तादोसुमाणु-
सत्तं तदो माइहत्था पच्छा णिग्गंथा होऊणसिज्झंति
मुचंति परिणिव्वा ायंति सव्व दुक्खाणमंतं करेंति । जाव
अरहंताणं भयवंताणं णमोकारं करमि पज्जुवासं करेमि
ताव कायं पावकम्मं दुच्चारियं वोस्सरामि एतावत् पाठ
आचार्य के कर चुकने कर—

(अनन्तरं श्रावकाः "थोस्सामि" इत्यादि दंडकं पठित्वा
सूरिणासहिताः "वदसमिदिंदियरोधो" इत्यादिकं चाथी-
त्यवीरस्तुतिं कुर्युः)

केवल शिष्य सधर्मा पढ़ें

थोस्सामिहं जिणवरे तित्थयरे केवलि अणंत जिणे ।
णरपवरलोयमहिये विहुयरयमले महप्पण्णे ॥ १ ॥
लोयस्सुज्जोययरे धम्मतित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं पि व्वेव केवलिणो ॥ २ ॥
उसह-मजिअं च वंदे संभव ममिणं दणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ ३ ॥
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयलसेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥

गारवाणं तिण्हं सल्लाणं चउण्हं सण्णाणं चउण्हं कसायाणं चउण्हं उवसग्गाणं पचण्हं महव्वयाणं पंचण्हं इंदियाणं पंचण्हं समिदीणं पंचण्हं चरित्ताणं छण्हं आवासयाणं सत्तण्हं भयाणं सत्तविहसंसाराणं अट्ठण्हं मयाणं अट्ठण्हं सुद्धीणं अट्ठण्हं कम्माणं अट्ठण्हं पवयणमाउयाणं णवण्हं बंभचेर गुत्तीणं णवण्हं णोकसायाणं दसविहमुंडाणं दसविह समण धम्माणं दसविह धम्मज्झाणाणं वारसण्हं संजमाणं वारसण्हं तवाणं वारसण्हं अंगाणं तेरसण्हं किरियाणं चउदसण्हं पुव्वाणं पण्णारसण्हं पमायाणं सोलसण्हं कसायाणं पयवीसाए किरियासु पणवीसाए भावणासु वावीसाए परीसहेसु अट्ठारस सीलसहस्सेसु चउरासीदि गुणसयसहस्सेसु मूलगुणेसु उत्तरगुणेसु अदिक्कमो वदिक्कमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो तस्सभंते। अइचारं पडिक्कमामि पडिक्कंतं कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदं तस्सभंते। अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं वोस्सरामि जावअरहंताणं भयवंताणं णमोक्कारं करेमि पज्जुवासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं॥ १॥

पडमंतावं सुदं मे आउस्संतो। इह खलु समणेण भयवदा महदिमहावीरेण महाकस्सवेण सव्वण्ह णाणेण सव्वलोयंदरसिणा सावयाणं सावियाणं खुड्डयाणं खुड्डीयाणं कारणेण पंचाणुव्वदाणि तिण्णिगुणव्वदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि बारस विहं धम्मं सम्मं उवदेसियाणि तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे अणुव्वदे थूलयडे पाणादिवादादो वेरमणं विदिए अणुव्वदे थूलयडे मुसावादादो वेरमणं तदिए अणुव्वदे थूलयडे अदत्तादाणादो वेरमणं चउत्थे अणुव्वदे थूलयडे सदारसंतोस परदारा गमण वेरमणं कस्स य पुणु सव्वदो विरदी; पंचमे अणुव्वदे थूलयडे इच्छाकद परिमाणं चेदि इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि।

तत्थ इमाणि तिण्णि गुणव्वदाणि, तत्थ पढमे गुणव्वदे दिसिविदिसि पच्चक्खाणं विदिए गुणव्वदे त्रिविध अणत्थदण्डादो वेरमणं तदिए गुणव्वदे भोगोपभोगपरिमंक्खाणं चेदि, इच्चेदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि।

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि तत्थ पढमे सामायियं विदिए पोसहोवासयं तदिए अतिथिसंविभागो चउत्थे सिक्खावदे पच्छिम सल्लेहणा मरणं तिदियं अब्भोवस्साणं चेदि।

व्रतसमुदयो मूलः संयमस्कंधबंधो ।
यमनियम पयोभिर्वर्धित शीलशाखः ।
समिति कलिकभारो गुप्तिगुप्त प्रवालो ।
गुण कुसुम सुगंधि सत्तपश्चित्रपत्रः ॥ ४ ॥

शिवसुखफलदायी यो दयाछाययौघः ।
शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः ।
दुरितरविजतापं प्रापयन्नंतभावं ।
सभवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्र वृक्षः ॥५॥

चारित्रसर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं चसर्वशिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पंच भेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥६॥

धर्मः सर्व सुखा करो हित करो धर्मं बुधाश्चिन्वते ।
धर्मेणैवसमाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ॥७॥
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृत् भवभृतां धर्मस्य मूलं दया ।
धर्मेचित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥८॥
धम्मो मंगलमुद्दिट्ठं अहिंसा संजमो तवो ।
देवावि तस्स पणमंत्ति जस्स धम्मे सयामणो ॥६ ॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचारलोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्त तव वीरियाचारेसु जम-णियम संजम सील मूलुत्तरगुणेसु सव्वमईचारं सावज्जोगं पडि-

वा वंजण हीणं वा अत्थहीणं वा गंथ हीणं वा थएसु वा थुई सु वा अट्ठक्खाखेसु वा अक्खियोगेसुवा अणियोग दारेसु वा जे भावा पण्णत्ता अरहंतेहिं भयवन्तेहिं तित्थयरेहिं-आइरियहिं तिलोग णाहेहिं तिलोग बुद्धेहिं तिलोगदरसीहिं ते सद्दहामि ते पत्तियामि ते रोचेमि ते फासेमिते सद्दहंतस्स ते पत्तभंतस्स ते रोचयंतस्स तेफासयंतस्स जो मए देवसिओ राईओ पक्खिओ (चउमासिओ-संवच्छरिओ) अदिक्कमो दिक्कमो अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो अकाले ज्झाओ कओ काले वा परिहाविदो अत्था कारिदं मिच्छा-मेलिदं वामेलिदं अण्णहादिण्णं अण्णहापडिच्छिदं आवा-सएसु पडिहीणदाए तस्समिच्छामेदुक्कडं ।

अह पडिवदाए बिदिए तदिए चउत्थीए पंचमीए छट्ठीए सत्तमीए अट्ठमीए णवमीए दसमीए एयारसीए बार-सीए तेरसीए चउदसीए पुण्णमासीए पण्णरसदिवसाणं पण्णरसराईणं [चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तर सयदिवसाणं वीसुत्तरसयराईणं (चातुर्मासिक मे) बारस-ण्हंमासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं तिण्हं छावट्ठिसयदिवसाणं तिण्हं छावट्ठिसयराईणं (वार्षिक-में) पंचवरिसादो परदो अब्भंतरदो वा (पंचवर्ष के यौगिक में)] दोण्हं अट्टरुद्द संकिलेस परिणामाणं तिण्हं अप्पसत्थ संकिलेस परिणामाणं तिण्हं दंडाणं तिण्हं लेस्साणं तिण्हं गुत्तीणं तिण्हं

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामि रिट्ठणेमि तह पास वड्ढमाणं च ॥ ५ ॥
एवं मए अभित्थुया विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगो त्तमा जिणा सिद्धा ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥

सर्व मिलकर

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयण मदंत वणं ठिदिभोयण मेय भत्तं च ॥ १ ॥
एदे खलुमूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थपमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥
छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं ।

पाक्षिक प्रतिक्रमण क्रिया

सर्वातिचार विशुद्धयर्थं पाक्षिकप्रतिक्रमण क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव - पूजावंदना स्तव समेतं निष्ठित करण वीरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं

("णमो अरहंताणं" इत्यादि दंडक को पढ़कर यथोक्त प्रमाण उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करें, अर्थात् पाक्षिक प्रतिक्रमण में ३०० उच्छ्वास १२ कायोत्सर्ग में होते हैं चातुर्मासिक में ४०० उच्छ्वास १६ कायोत्सर्गों में और वार्षिक में ५०० उच्छ्वास २० कायोत्सर्गों में होते हैं । अतः जो प्रतिक्रमण होवे उसके ही उच्छ्वास प्रमाण में

कायोत्सर्ग करके थोस्सामि इत्यादि दंडक को पढे।

चन्द्रप्रभं चन्द्र मरीचि गौरं, चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कांतं।
वंदेभिवंद्य महतामृषीन्द्रं, जिनंजितस्वान्त कषायबन्धम् १
यस्यांगलक्ष्मी परिवेषभिन्नं, तमस्तमोरेरिव रश्मिभिन्नम्।
ननाश बाह्यं बहु मानसंच, ध्यानप्रदीपातिशयेनभिन्नम् २
स्वपक्षसौस्थित्यमदावलिप्ता, वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्र गण्डा गजा यथाकेशरिणो निनादैः
यः सर्व लोके परमेष्ठितायाः, पदंबभूवाद्भु तकर्मतेजाः।
अनन्तधामाक्षरविश्वचक्षुः समस्त दुःखक्षयशासनश्च ॥४॥
सचन्द्रमा भव्यकुमुद्वतीनां, विपन्न दोषाभ्र कलंकलेपः।
व्याकोश वाङ्न्यायमयूखमालः पूयात्पवित्रो भगवान् मनोमे
यःसर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषांगुणान्।
पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वदा॥
जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते।
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय भक्त्या नमः॥ १ ॥
वीरः सर्वसुरासुरेन्द्र महितो वीरं बुधाः संश्रिता।
वीरेणाभिहतः स्वकर्म निचयो वीराय भक्त्या नमः॥
वीरात्तीर्थ मिदं प्रवृत्त मतुलं वीरस्य वीरं तपो।
वीरे श्री द्यु ति कांति कीर्ति धृतयो हे वीरभद्रं त्वयि॥२॥
ये वीरमादौ प्रणमंति नित्यं ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ता
ते वीतशोका हि भवंति लोके संसार दुर्गं विषमं तरंति।३।

से अभिमद जीवा जीव-उवलद्ध पुण्णपाव आसव संवर णिज्जर बंध मोक्खमहि कुसले धम्माणुरायरत्तो पिमाणुरागरत्तो अट्ठिमज्जाणुरायरत्तो पुच्छिदट्ठे गिहिदट्ठे विदिदट्ठे पालिदट्ठे सेविदट्ठे इणमेव णिग्गंथपावयणे अणुत्तरे से अट्ठे सेसे अणट्ठे—

णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्विदिगिंछीय अमूढदिट्ठीय ।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल पहावणा य ते अट्ठ ॥१॥

सव्व दाणि पंचाणुव्वदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि चत्तारि सिक्खा वदाणि बारसविहं गिहत्थधम्म मणुपालइत्ता

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्त राइभत्तय ।
बंभारम परिग्गह अणुमण मुद्दिट्ठ देसविरदोय ॥१॥

महु मंसमज्ज जूआ वेसासि विवज्जणसीलो ।
पंचाणुव्वयजुत्तो सत्तेहिं सिक्खावएहिं संपुण्णो ॥२॥

जो एदाइं वदाइं धरेइ सावया सावियाओ वा खुड्डय खुड्डियाओ वा अट्ठदह भवणवासिय वाण वितर जोइ सिय सोहम्मीसाण देवीओ वदिक्कमित्त उवरिम अण्णदर महड्ढिया सुदेवे सुउववज्जंति ।

तंजहा—सोहम्मीसाण सणक्कुमारमाहिंद बंभ बंभुत्तर लांतव कापिट्ठसुक्कमहासुक्क सतार सहस्सार आणत पाणत आरण अच्चुतकप्पेसुउववज्जंति ।

चिरदोमि असंखेज्जलोग अज्झवसाणठाणाणि अप्प सत्थ जोगसण्णिंदिय कसाय गारवकिरियासु मण वयण काय करण दुप्पणिहाणि परिचिंतियाणि किण्हणील काउले स्साओ विकहा पलि कुंचिएण उम्मग्गहस्सरदि अरदिसोग भय दुगंछ वेयणविजंभ जंभाईअणि अट्टरूद्द संकिलेस परिणामाणि परिणामिदाणि अणिहृदकर चरणमण वयण काय करणेण अविखत्त वहुलयरायणेण अपडिपुण्णेण वा सक्खरावय संघाय पडिवत्तिएण अच्छाकारिदं मिच्छा मेलिदं आमेलिदं वामोलिदं अण्णहादिण्णं अण्णहा पडि-च्छदं आवासएसु परिहीणदाए कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्समिच्छा मे दुक्कडं ।

वदसमिदिंदिय रोधो लोचोआवासय मचेलमण्हाणं ।
खिदिसयण मदंतवणं ठिदिभोयण मेयभत्तं च ।
एदेखलुमूलगुणा समणाणं जिणवेरहिं पण्णत्ता ।
एत्थपमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥
छेदोवट्ठाणं होउ मज्झं ।

शांति चतुर्विंशति स्तुति

सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक प्रतिक्रमणक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा वंदनास्तव समेतं शांति चतुर्विंशतितीर्थंकर भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(णमो अरहंताणं इत्यादि दंडक व कायोत्सर्ग तथा "थोस्सामि" स्तव को पढे)

विधायरक्षां परतः प्रजानां राजाचिरं योऽप्रतिमप्रतापः ।
व्यधात्पुरस्तात्स्वत एव शांतिमुनिर्दयामूर्तिरिवाघ शांतिम्
चक्रेण यः शत्रु भयंकरेण जित्वानृपः सर्वनरेन्द्र चक्रम् ।
समाधि चक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोह चक्रं ।२।
राजश्रिया राजसु राज सिंहो रराज यो राजसु भोगतंत्र ।
आर्हन्त्यलक्ष्म्या पुनरात्मतंत्रो देवासुरोदार सभेरराज ३
यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं मुनौदया दीधिति धर्मचक्रं ।
पूज्ये मुहुःप्राञ्जलि देवचक्रं ध्यानोन्मुखेध्वंसि कृतांतचक्रं
स्वदोपशान्त्या विहितात्मशांतिःशांतेर्विधाताशरणंगतानाम्
भूयाद्भव क्लेश भयोपशांत्यै शांतिर्जिनो मे भगवाञ्छरण्य:
चउवीसं तित्थयरे उसहाइ वीर पच्छिमे वंदे ।
सव्वेसिं गुणगणहर सिद्ध सिरसा णमस्सामि ॥१॥
ये लोकेऽष्ट सहस्र लक्षण धरा ज्ञेयार्णवांतर्गता ।
येसम्यग्भवजाल हेतु मथनाश्चन्द्रार्क तेजाधिकाः ॥
ये साध्विन्द्र सुराप्सरो गणशतैर्गीत प्रणुत्याचिता- ।
स्तान् देवान् वृषभादि वीर चरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम्
नाभेयं देव पूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकं प्रदीपं ।
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगण वृषभं नंदनं देव देवम् ॥

कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वर कमलनिभं पद्म पुष्पाभिगंधं ।
क्षांतं दांतं सुपार्श्वं सकल शशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ।३।
विख्यातं पुष्पदंतं भवभय मथनं शीतलं लोक नाथं ।
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवर नर गुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यं ।।
मुक्तं दांतेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंह सैन्यं मुनींद्रं ।
धर्मं सद्धर्म केतुं शमदम निलयं स्तौमिशांतिं शरण्यं ।४।
कुंथुं सिद्धालयस्थं श्रमण पतिमरं त्यक्त भोगेषुचक्रं ।
मल्लिं विख्यात गोत्रं खचर गणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिं ।।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्र भवांतं ।
पार्श्वं नागेन्द्र वंद्यं शरण महमितो वर्द्धमानं च भक्त्या।५।

अचलिका

इच्छामि भंत्ते । चउवीस तित्थयर भत्ति काओसग्गो कओतस्सालोचेउं पंचमहा कल्लाण संपण्णाणं अट्ठमहा-पाडिहेरसंजुत्ताणं चउतीसातिसय विसेस संजुत्ताणं वत्तीसदेविंद मणिमउड मत्थयमहियाणं वलदेव वासुदेव चक्कहर रिसिमुणिजइअणगारोवगूढाणं थुइसय सहस्स णिलयाणं उसहाइवीरपच्छिम मंगल महापुरिसाणं णिच्च-कालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मखओ वोहिलाओ सुगइ गमणं समाहि मरणं जिण-गुण संपत्ति होउमज्झं ।

वदसमिदिंदिय रोधो लोचो आवासय मचेलमण्हाणं
खिदि सयण मदंत वणंठिदि भोयणमेयभत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूल गुणा समणाणं जिण वरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थपमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥
छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं ।

चारित्रालोचनासहिता बृहदा चार्य भक्ति :—

सर्वातीचार विशुद्धयर्थं चारित्रालोच नाचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

("णमो अरहंताणं" इत्यादि दंडक को पढ़कर कायोत्सर्ग व "थोस्सामि" स्तव करे)

सिद्धगुणस्तुतिनिरतानुद्धूत रुषाग्नि जालबहुल विशेषान्
गुप्तिभिरभिसंपूर्णान् मुक्तियुतः सत्य वचन लक्षित भावान्
मुनि माहात्म्यविशेषाज्जिन शासन सत्प्रदीप भासुर मूर्तीन्
सिद्धिं प्रपित्सुमनसो बद्धरजो विपुलमूल घातन कुशलान्
गुण मणि विरचित वपुषः षड् द्रव्य विनिश्चितस्य धातॄ
सततम् ।
रहितप्रमादचर्यान्दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टिकरान् ॥३॥
मोहच्छिदुग्रतपसः प्रशस्त परिशुद्ध हृदय शोभन व्यवहारान्
प्रासुनिलयाननघानाशाविध्वंसि चेतसो हतकुपथान् ॥
धारितविलसन्मुण्डानवर्जित बहु दण्डपिण्ड मंडलनिकरान्
सकलपरीषहजयिनः क्रियाभिरनिशं प्रमादतः परिरहितान्

अचलान् व्यपेतनिद्रान् स्थानयुतान्कष्टदुष्टलेश्याहीनान् ।
विधिनानाश्रितवासा नलिप्त देहान्विनिर्जितेन्द्रिय करिणः
अतुलानुत्कुटि कायान् विविक्तचित्तानखण्डित स्वाध्यायान्
दक्षिण भावसमग्रान् व्यपगतमद राग लोभ शठ मात्सर्यान्
भिन्नार्तरौद्र पक्षान् संभावितधर्म शुक्ल निर्मल हृदयान् ।
नित्यं पिनद्ध कुगतीन् पुण्यान् गण्योदयान् विलीनगारव
चर्यान् ॥८॥

तरुमूलभोगयुक्तानवकाशा ताप योग राग सनाथान् ।
वहुजनहित कर चर्यान् भयाननघान्महानुभाव विधानान्
ईदृश गुण संपन्नान् युष्मान् भक्त्या विशालया स्थिरयोगान्
विधि नाना रत मघ्यान् मुकुली कृतहस्त कमल शोभित
शिरसा ॥ १० ॥

अभिनौमि सकल कलुष प्रभवोदय जन्म जरामरणबंधनमुक्तान्
शिवमचलमनघमक्षयमव्याहत मुक्ति सौख्य मस्त्वितिसततम्

लघु चारित्रालोचना—

इच्छामिभंते । चरित्तायारो ते रस विहो परिहाविदो पंच महव्वदाणि पंच समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि काइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा आउ काइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा तेउ काइयाजीवा असंखेज्जा संखेज्जा वाउ काइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वणप्फदि काइया जीवा

अणंताणंता हरिया बीया अंकुरा छिण्णाभिण्णा तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

बेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुक्खि-किमि संख खुल्लय—वराडय अक्ख—रिट्ठ—बाल—संवुक्क—सिप्पि पुलविकाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं

तेइंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुंथु-द्देहिय-विंछिया-गोभिंद-गोजूव-मक्कुण पिपीलियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा दंस-मसय मक्खिय-पयंग-कीड भमर—महुयर-गोमक्खियाइया तेसिं उद्दावणं-परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा अंडाइया पोदाइया-जराइया-रसाइया-संसेदिया-सम्मुच्छिमा-उब्भेदिमा-उववादिमा अवि चउरासीदिजोणिपमुह सद सहस्सेसु एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो

वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड।

इच्छमि भंते! आइरिय भत्ति काओसग्गो कओतस्सा लोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्त जुत्ताणं पंचविहा-चाराणं आइरियाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुण पालणरयाणं सव्व साहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि मरणं जिणगुण संपत्ति होउमज्झं।

वदसमिदिंदिय रोधो लोचो आवासय मचेल मण्हाणं।
खिदि सयण मदंतवणं ठिदि भोयण मेय भत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूल गुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥
छेदोवट्ठावण होउ मज्झं।

बृहदालोचना सहित मध्याचार्य भक्ति

सर्वातीचार विशुद्ध्यर्थं बृहदालोचनाचार्य भक्ति कयोत्सर्गंकरोम्यहं।

("णमो अरहंताणं" इत्यादि दंडक कायोत्सर्ग व "थोस्सामि" पढ़े)।

देस कुल जाइसुद्धा विसुद्धमण वयण कायसंजुत्ता।
तुम्हं पायपयोरुहमिह मंगलमत्थु मे णिच्चं ॥ १ ॥

सगपर समयत्तिदण्हूँ आगम हेदूहिं चाविजाणित्ता ।
सुसमत्था जिणवयणे विणये सत्ताणुरूवेण ॥ २ ॥
बालगुरुगुरु वृद्धसेहे गिलाणथेरेय खमण संजुत्ता ।
वट्टावयगा अण्णे दुस्सीले चाविजाणित्ता ॥ ३ ॥
वयसमिदि गुत्तिजुत्ता मुत्तिपदे ठाविया पुणो अण्णे ।
अज्झावयगुणणिलये साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥ ४ ॥
उत्तमखमाए पुढवी पसण्ण भावेण अच्छजलसरिसा ।
कम्मिंधण दहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥ ५ ॥
गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुणिवसहा ।
एरिसगुण णिलयाणं पायंपणमामि सुद्ध मणो ॥ ६ ॥
संसार काणणे पुण बंभम माणेहिं भव्वजीवेहिं ।
णिव्वाणस्स हु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥ ७ ॥
अवि सुद्धलेस्सादिया विसुद्ध लेस्साहि परिणदा सुद्धा ।
रुद्दट्टे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥ ८ ॥
उग्गहईहावाया धारण गुण संपदेहिं संजुत्ता ।
सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहिं वंदामि ॥ ९ ॥
तुम्हं गुणगण संथुदि अजाणमाणेण जो मया वुत्तो ।
देउ ममबोहि लाहं गुरु भत्ति जुदत्थ ओ णिच्चं ॥ १० ॥

बृहदालोचना

(इस दण्डक को पाक्षिक प्रतिक्रमण के समय पढ़े)

इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं पण्णरसण्हं दिवसाणं पण्णरसण्हं राईणं अब्भंतरदो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

इस दण्डक को चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में पढ़े ।

इच्छामि भंते । चउमासियम्मि आलोचेउं चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसयदिवसाणं वीसुत्तर सयराईणं अब्भंतरदो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

इस दंडक को वार्षिक प्रतिक्रमण में पढ़े ।

इच्छामि भंते । संवच्छरियम्मि आलोचेउं बारसण्हं मासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं तिण्णि छावट्ठि सयदिवसाणं तिण्णि छावट्ठि सयराईणं अब्भिंतरदो पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो तवायारो वीरियायारो चरित्ता-यारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो काले विणाउवहाणे बहुमाणे तहेव णिण्हवणे वंजण-अत्थ तदुभय चेदि, तत्थ णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो से अक्खरहीणं वा सरहीणं वा वंजणहीणं वा पदहीणं वा अत्थहीणं वा गंथहीणं वा थएसु

वा थुईसु वा अट्ठक्खाणेसु वा अणियोगेसु वा अणियोग-
द्दारेसु वा अकाले वा सज्झाओ कदो वा कारिदो वा कीरन्तो
वा समणु मण्णिदो काले वा परिहाविदो अत्थाकारिदं
मिच्छामेलिदं वा आमेलिदं वा वामेत्तिदं अण्णहा-
दिण्णं अण्णहापडिच्छदं आवासएसु परिहीणदाए तस्स
मिच्छा मे दुक्कडं ।

दंसणायारो अट्ठविहो णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्वि-
दिगिंछा अमूढदिट्ठीय उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल
पहावणा चेदि । अट्ठविहो परिहाविदो संकाए कंखाए
विदिगिंछाए अण्णदिट्ठिपसंसणदाए परपाखंडपसंसणदाए
अणायदणसेवणदाए अवच्छल्लदाए अप्पहावणदाए तस्स-
मिच्छा मे दुक्कडं ।

तवायारो वारस विहो अब्भंतरो छव्विहो वहिरो
छव्विहो चेदि । तत्थ वाहिरो अणसणं आमोदरिय वित्ति-
परिसंखा रसपरिच्चाओ सरीरपरिच्चाओ विवित्तसयणा-
सणं चेदि तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं विणयो वेज्जावच्चं
सज्झाओ झाणं विउस्सग्गो चेदि ।

अब्भंतरं वाहिरं वारसविहं तवोकम्मं ण कदं
णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वरवीरिय परिक्कमेण जहुत्त माणेण वलेण वीरिएण परिक्कमेण णिगूहियं तवोकम्मं ण कदं णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इच्छामिभंते! चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो पंचमहव्वदाणि पंचसमिदीओ तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादि वादादो वेरमणं से पुढविकाइया जीवा-असंखेज्जा संखेज्जा आउकाइया जीवाअसंखेज्जा संखेज्जा-तेउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा वाउकाइया जीवा-असंखेज्जा संखेज्जा वणफ्फदि काइया जीवाअणंताणंता हरिया वीया अंकुराछिण्णा भिण्णा तेसिंउद्दावणं परिदावणंविराहणं उवघादो कदोवा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वेइंदियाजीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुक्खि किमि संख खुल्लय वराडयअक्ख रिट्ठवाल संवुक्क सिप्पि पुढविकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मेदुक्कडं।

तेइंदियाजीवा असंखेज्जा संखेज्जा कुंथुद्देहिय विंछिय गोभिद गोजूव मक्कुण पिपीलियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदियाजीवा असंखेज्जा संखेज्जा दंसमसय मक्खिय पयंग-कीड भमर महुयर गोमक्खियाइया तेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदियाजीवा असंखेज्जा संखेज्जा अंदाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिया सम्मुच्छिमा उब्भेदिमा उववादिमा अवि चउरासीदि जोणिपमुहसद सहस्सेसु एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थपमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं।

क्षुल्लकालोचनासहिता क्षुल्लकाचार्य भक्तिः

सर्वातीचार विशुद्धयर्थं क्षुल्लकालोचनाचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। पूर्ववद् दंडक कायोत्सर्ग स्तव आदि।

प्राज्ञः प्राप्त समस्त शास्त्र हृदयः प्रव्यक्त लोकस्थितिः ।
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः ॥
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिंदया ।
ब्र याद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ॥१॥
श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्ति पर प्रति बोधने ।
परिणतिरु रुद्योगो मार्ग प्रवर्तन सद्विधौ ।
बुधिनुतिरनुत्सेको लोकज्ञतामृदुता स्पृहा ।
यति पति गुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ॥२॥

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपर मतविभावनापटुभ्यः ।
सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण गुरुभ्यः ॥ ३ ॥

छत्तीस गुणसमग्गे पंचविहाचार करण संदरिसे ।
सिस्साणुग्गहकुसले धम्माइरिये सदावंदे ॥ ४ ॥

गुरुभत्ति संजमेण य तरंति संसार सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ कम्मं जम्मण मरणं ण पावेंति ॥५॥

येनित्यं व्रतमंत्र होमनिरता ध्यानाग्नि होत्रा कुलाः ।
षट्कर्माभिरतास्तपोधन धनाः साधु क्रिया साधवः ॥६॥

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ।
मोक्ष द्वार कवाट पाटन भटा प्रीणंतु मां साधवः ॥ ७ ॥

गुरवः पांतुनोनित्यं ज्ञान दर्शन नायकाः ।
चारित्रार्णवगंभीरा मोक्ष मार्गोपदेशकाः ॥ ८ ॥

आलोचना

इच्छामिभंते ! आइरिय भत्तिकाओसग्गो कओ तस्सा लोचेउ, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्म चारित्त जुत्ताणं पंच विहाचाराणं आयरियाणं आयारादि सुदणाणोवेदसियाणं उवज्झायाणं तिरयण गुण पालणरयाणं सव्वसाहूणं सया णिच्च कालं अंचमिपूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि मरण जिण-गुण संपत्ति होउमज्झं।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासय मचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥

एदे खलु मूल गुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थपमादकदादो छेदो वट्ठावणं होउ मज्झं ॥ २ ॥

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

सर्वातीचार विशुद्धयर्थं सिद्ध-चारित्र-प्रतिक्रमण-निष्ठित करणवीरशांति चतुर्विंशति तीर्थंकर-चारित्रालोचनाचार्य बृहदालोचनाचार्य-क्षुल्लकालोचनाचार्य भक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि दोष विशुद्धयर्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

पूर्ववद् दंडक कायोत्सर्ग व थोस्सामि स्तव को करके—

अथेष्ट प्रार्थना—प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिनपति नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्म तत्त्वे।
संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥२॥
तवपादौ मम हृदये ममहृदयं तव पदद्वयं लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद् यावन्निर्वाण संप्राप्तिः ।३।
अक्खरपयत्थ हीणं मत्ता हीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाण, देवय मज्झवि दुक्ख क्खयं दिंतु ४

आलोचना

इच्छामि भंते समाहि भत्ति काओ सग्गो कओतस्सा लोचेउं रयणत्तयपरुप परमज्झाण लक्खणं समाहिभत्तीए णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिण गुण संपत्ति होउ मज्झं।

पुनः लघुसिद्ध-श्रुतभक्ति—आचार्यभक्ति के द्वारा पूर्व-वत् सभी साधु वर्ग मिलकर आचार्य की वंदना करें।

यति और श्रावकों की श्रुतपंचमी क्रिया प्रयोगविधि

बृहत्या श्रुतपंचम्यां भक्त्या सिद्ध श्रुतार्थया।
श्रुतस्कंधं प्रतिष्ठाप्य गृहीत्वा वाचनां बृहन् ॥ ५ ॥

तम्यो गृहीत्वा स्वाध्यायं कृत्वा शांतिं नुतिस्ततः ।
यमिनां गृहिणां सिद्धश्रुत शांतिस्तवाः पुनः ॥ ५८ ॥

अर्थ—श्रुतपंचमी के दिन मुनि बृहत्सिद्ध भक्ति और बृहत् श्रुत भक्ति पढकर श्रुतस्कंध की स्थापना कर श्रुतावतारका उपदेश देवे अनंतर बृहत श्रुतभक्ति व बृहत व आचार्य भक्ति पूर्वक स्वाध्याय को करें व बृहतश्रुत भक्ति पढ़कर स्वाध्याय का निष्ठापन करे अंतमें शांति भक्ति का पाठ करें । तथा स्वाध्याय को न ग्रहण करने वाले श्रावक सिद्धभक्ति श्रुतभक्ति और शांतिभक्ति करें । जिसकी प्रयोग विधिमें—श्रुतस्कंध प्रतिष्ठापन क्रियायां····सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमि । इस प्रकार कृत्यविज्ञापन पूर्वक श्रुतभक्ति करें । तथा स्वाध्याय प्रारंभसे भी स्वाध्याय प्रारंभक्रियायां इत्यादि का प्रयोगकरें ।

कल्प्यः क्रमोऽयंसिद्धांताचार वाचनयोरपि ।
एकैकार्थाधिकारान्ते व्युत्सर्गस्तन्मुखान्तयोः ॥५६॥
सिद्धश्रुतगणि स्तोत्रं व्युत्सर्गश्चातिभक्तये ।
द्वितीयादि दिने षट् षट् प्रदेया वाचनावनौ ॥६०॥

अर्थ—श्रुतपंचमी का जो क्रम है वही क्रम सिद्धांत वाचन व आचार वाचना में भी होता है । अर्थात् सिद्धांत शास्त्र व आचार शास्त्र की वाचना में भी बृहत्सिद्ध श्रुतभक्ति द्वारा प्रतिष्ठापन करें और बृहत्श्रुत आचार्य भक्ति द्वारा

स्वाध्याय को स्वीकार कर वाचना करे और बृहत् श्रुत भक्ति पढकर निष्ठापन करके अंतमें शांति भक्ति करे।

तथा सिद्धांतशास्त्र के एक अर्थाधिकार के प्रारंभ और समाप्ति में लघु सिद्ध श्रुत आचार्य भक्ति भी करें। तथा अत्यंत भक्तिके प्रदर्शित करनेके लिये दूसरे तीसरे आदि दिन में उस वाचना भूमि में षट् षट् कायोत्सर्ग करना चाहिये। प्रयोग विधि में केवल इतना ही अंतर है कि सिद्धांत वाचना प्रतिष्ठापन क्रियायां इत्यादि का प्रयोग करे

सन्यास क्रिया प्रयोग विधि

संन्यासस्य क्रियादौ सा शांति भक्त्या विनासह।
अन्येऽन्यदा बृहद्भक्त्या स्वाध्याय स्थापनोज्झने ॥६१॥
योगेऽपि शेयं तत्रात्त स्वाध्यायैः प्रतिचारकैं।
स्वाध्याया ग्राहिर्णा प्राग्वत् तदाद्यन्त दिनेक्रिया ॥६२॥

अर्थ—क्षपक के सन्यास के प्रारंभमे शान्तिभक्ति के विना श्रुतपंचमी की क्रिया करनी चाहिये अर्थात् श्रुतस्कंध की तरह सिद्धभक्ति और श्रुतभक्ति पूर्वक सन्यास प्रतिष्ठापन करना चाहिये। और संन्यासके अंतमें शांति भक्ति विना वही क्रिया करनी चाहिये अर्थात् क्षपकके स्वर्गवासी होजाने पर सिद्ध श्रुत और शांतिभक्ति पढकर सन्यास

क्रिया पूर्ण करना चहिये। प्रयोगविधि में सन्यास प्रारंभ क्रियायां इत्यादि प्रयोग करे तथा संन्यास प्रतिष्ठापन निष्ठापन के दिनों के सिवा अन्यदिनों में बड़ी श्रुत आचार्य भक्ति पूर्वक स्वाध्याय प्रतिष्ठापनकर बृहत् श्रुत भक्ति पूर्वक निष्ठापन करें। तथा जिन्होंने पहले दिन संन्यास वसति में स्वाध्याय प्रतिष्ठापना की है वे क्षपक की शुश्रूषा करने वाले परिचारक जन अन्यत्र भी यदि वर्षायोग व रात्रियोग ग्रहणकरलियाहो तो भी वहीं संन्यास की वसति में सोवे। तथा जिनने पहले दिन संन्यास वसति मे स्वाध्याय ग्रहणन किया हो ऐसे साधु जन व श्रावकों को संन्यास प्रारंभ व समाप्ति के दिन में सिद्ध श्रुत शांति भक्ति पूर्वक क्रिया करनी चाहिये।

आष्टान्हिक क्रिया प्रयोगविधि

कुर्वंतु सिद्ध नंदीश्वर गुरुशांति स्तैः क्रियामष्टौ।
शुच्यूर्ज तपस्यसिताष्टम्यादि दिनानि मध्यान्हे ॥६३॥

अर्थ—कुर्वंतु मिलित्वाचार्यादयोविदधतु संघके सभी साधु मिलकर आषाढ कार्तिक फाल्गुन की शुक्ला ष्टमी से लेकर पूर्णिमापर्यंत नंदीश्वर क्रियाकरें। अर्थात् पौर्वाण्हिक स्वाध्याय के अनंतर मध्याह्न में आचार्यादि भी सिद्ध नंदीश्वर पंचगुरु व शांतिभक्ति करें और उसमें नंदीश्वर

भक्ति को जिनचैत्य की तीन प्रदक्षिणा को करते हुये पढ़ें।

नंदीश्वर क्रिया

अथ—नंदीश्वर पर्व क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

णमोकार मंत्र दंडक कायोत्सर्ग व स्तवको करके सिद्धानुद्धूते त्यादि भक्तिका पाठ करे।

अथ—नंदीश्वरपर्व क्रियायां नंदीश्वरभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं। पूर्ववद् दंडकादि करके।

नंदीश्वर भक्ति

त्रिदशपति मुकुट तटगतिमणिगण करनिकर सलिलधाराधौत
क्रम कमलयुगलजिनपति रुचिरप्रतिबिंबविलयविरहितनिलयान्
निलयानह मिहमहसांसहसा प्रणिपतनपूर्वमवनौम्यवनौ।
त्र्य्यांशुद्ध्यां शुद्ध्या निसर्ग शुद्धान्विशुद्धये घनरजसाम्
भावनसुरभवनेषु द्वासप्ततिशतसहस्र संख्याभ्यधिकाः।
कोट्यः सप्तप्रोक्ता भवनानां भूरितेजसां भुवनानां ॥ ३ ॥
त्रिभुवनभूतविभूनां संख्यातीतान्यसंख्यगुण युक्तानि।
त्रिभुवनजन नयन मनः प्रियाणि भवनानि भौमविबुधयुतानि
यावंतिसंति कांत ज्योतिर्लोकाधिदेवताभिनुतानि।
कल्पेऽनेकविकल्पे कल्पातीते ऽहमिंद्रकल्पेऽनल्पे ॥५॥

विंशतिरथ त्रिसहिता सहस्र गुणिताच सप्तनवतिःप्रोक्ता
चतुरधिकाशीतिरतः पंचकशून्येन विनिहतान्यनघानि ॥
अष्टापंचाशदतश्चतुशतानीह मानुषे क्षेत्रे ।
लोकालोक विभाग प्रलाकनालोक संयुजां जयभाजां ॥७॥
नवनव चतुशतानि च सप्त च नवतिः सहस्र गुणिता षट् च ।
पंचाशत्पंचवियत्प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौ प्रोक्ताः ।८।
एतावंत्येव सतामकृत्रिमाण्यथ जिनेशिनां भवनानि ।
भुवनत्रितये त्रिभुवन सुरसमिति समर्च्य मान सत्प्रतिमानि
वक्षार रुचक कुंडल रौप्य नगोत्तर कुलेषु कार नगेषु।
कुरुषु च जिन भवनानि त्रिशतान्यधिकानि तानिषड्विंशत्या
नंदीश्वर सद्दीपे नंदीश्वर जलधि परिवृते धृतशोभे ।
चन्द्रकर निकर संनिभ रुन्द्रयशो वितत दिङ्महीमंडलके
तत्रत्यांजनदधिमुखरतिकर पुरुनगवराख्य पर्वतमुख्याः ।
प्रतिदिशमेषामुपरि त्रयोदशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि ॥
आषाढ कार्तिकाख्ये फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।
आरभ्याष्ट दिनेषु च सौधर्म प्रमुख विबुधपतयो भक्त्या ।
तेषु महामहमुचितं प्रचुराक्षत गंधपुष्प धूपैर्दिव्यैः ।
सर्वज्ञ प्रतिमानामप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व हितम् । १४ ।
भेदेन वर्णना का सौधर्मः स्नपन कर्तृ नामापन्नः ।
परिचारकभावमिताः शेषेन्द्रा रुन्द्रचन्द्र निर्मलयशसः ॥

मंगल पात्राणि पुनस्तद्देव्यो बिभ्रतिस्म शुद्ध गुणाढ्याः ।
अप्सरसो नर्तक्यः शेषसुरास्तत्र लोकनाव्यग्रधियः ।।१६।

वाचस्पति वाचामपि गोचरतां संव्यतीत्ययत्क्रममाणम् ।
विबुधपति विहित विभवं मानुषमात्रस्य शक्तिःस्तोतुम् ।।

निष्ठापितजिनपूजाश्चूर्णस्नपनेन दृष्टविकृत विशेषाः ।
सुरपतयो नंदीश्वर जिनभवनानि प्रदक्षिणी कृत्य पुनः ।।

पंचसुमंदर गिरिषु श्री भद्रसाल नंदन सौमनसम् ।
पांडुकवनमिति तेषु प्रत्येक जिन गृहाणि चत्वार्येव ।१६।

तान्यथ परीत्य तानि च नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि ।
स्वास्पदमीयुः सर्वे स्वास्पद मूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य ।२०।

सहतोरण सद्वेदी परीत वन याग वृक्षमानस्तंभ— ।
ध्वजपंक्ति दशक गोपुर चतुष्टय त्रितय शाल मंडपवर्यैः ।

अभिषेक प्रेक्षणिक्रा क्रीडन संगीतनाटकालोकगृहैः ।
शिल्पिविकल्पित कल्पन संकल्पातीत कल्पनैः समुपेतैः

वापीसत्पुष्करिणी सुदीर्घिकाद्यंबु संसृतैः समुपेतैः ।
विवसित जलरुहकुसुमै र्नभस्य मानैः शशि ग्रहर्क्षैः शरदि ।।

भृंगाराब्दक कलशाद्युपकरणैरष्टशतक परिसंख्यानैः ।
प्रत्येकंचित्रगुणैः कृतझणझण निनद वितत घंटाजालैः ।।

भ्राजंते नित्यं हिरण्मयानीश्वरेशिनां भवनानि
गंधकुटी गतमृगपति विष्टर रुचिराणि विविध विभवयुतानि

येषु जिनानां प्रतिमाः पंचशत शरासनो च्छ्रिताः मत्प्रतिमाः
मणि कनक रजत विकृता दिनकर कोटि प्रभाधिक प्रभदेहाः
तानि सदावंदेऽहं भानु प्रतिमानि यानि च तानि ।
यशसां महसां प्रति दिशमतिशय शोभा विभांजि पाप विभंजि
सप्त्यधिक शतप्रिय धर्म क्षेत्रगत तीर्थकर वर वृषभान् ।
भूतभविष्यत्संप्रति काल भवान्भवविहानयें विनतोऽस्मि २८
अस्यामवसर्पिण्यां वृषभजिनः प्रथम तीर्थ कर्ता भर्ता ।
अष्टापद गिरि मस्तक गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ॥
श्रीवासुपूज्य भगवान् शिवासुपूजासु पूजित स्त्रिदशान्तं ।
चंपायां दुरितहरः परमपदं प्रापदा पदामंतगतः ॥ ३० ॥
मुदितमति बलमुरारि प्रपूजितो जितकषायरिपुरथ जातः ।
बृहदूर्जयंतशिखरे शिखामणिस्त्रिभुवनस्य नेमिर्भगवान् ॥
पावापुर वर सरसां मध्यगतः सिद्धिवृद्धितपसां महसां ।
वीरो नीरदनादो भूरि गुणश्चारु शोभमास्पदमगमत् ३२
सम्मद करिवन परिवृत सम्मेद गिरीन्द्रमस्तके विस्तीर्णे ।
शेषा ये तीर्थकराः कीर्ति भृतः प्रार्थितार्थ सिद्धमवापन् ३३
शेषाणां केवलिनां अशेषमतवेदिगणभृतां साधूनां ।
गिरि तलविवर दरी सरिदुपवन तरु विटपि जलधिद-
हनशिखासु ॥ ३४ ॥
मोक्ष गतिहेतु भूत स्थानानि सुरेन्द्ररुन्द्र भक्ति नुतानि ॥
मंगल भूतान्येतान्यंगी कृत धम कर्मणामस्माकम् ॥

जिनपतयस्तत्प्रतिमास्तदालयास्तन्निषद्यका स्थानानि ।
तेताश्च ते च तानि च भवंतु भवघात हेतवो भव्यानाम् ३६
संध्यासु तिसृषु नित्यं पठेद्यदि स्तोत्रमेतदुत्तम यशसां ।
सर्वज्ञानां सार्वं लघु लभते श्रुतधरेडितं पदममितम् ।३७।
नित्यं निः स्वेदत्वं निर्मलतक्षीर गौर रुधिरत्त्वं च ।
स्वाद्याकृतिसंहनने सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम् ॥३८॥
अप्रमितवीर्यता च प्रियहित वादित्व मन्य दमित गुणस्य
प्रथिता दश विख्याता स्वतिशय धर्माः स्वयंभुवो देहस्य ॥
गव्यूतिशत चतुष्टय सुभिक्षतागगन गमनमप्राणि बंधः
भुक्त्युपसर्गाभावश्चतुरास्यत्वं च सर्व विद्येश्वरता ।४०।
अच्छायत्वमपक्ष्म पंदश्च समप्रसिद्ध नखकेशत्वं ।
स्वतिशय गुणाभगवतो घाति क्षयजा भवंति तेपि दशैव॥
सार्वार्धमागधीया भाषामैत्री च सर्व जनता विषया ।
सर्वर्तु फलस्तवक प्रवालकुसुमोपशोभित तरु परिणामा ॥
आदर्शतल प्रतिमारत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा ।
विहरणमन्वेत्यनिलः परमानंदश्च भवति सर्व जनस्य ॥
मरुतोऽपि सुरभि गंध व्यामिश्रा योजनांतर भूभागं ।
व्युपशमितधूलि कंटक तृणकीटक शर्करोपलं प्रकुर्वंति ४४
तदनुस्तनित कुमारा विद्युन्माला विलास हास विभूषाः
प्रकिरन्तिसुरभिगंधिं गंधोदक वृष्टिमाज्ञया त्रिदशपतेः ॥

वरपद्मराग केसर मतुल सुख स्पर्श हेममयदलनिचयम् ।
पादन्यासे पद्मं सप्त पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवंति ॥४६॥

फलभारनम्रशालिव्रीह्यादि समस्त सस्यधृतरोमाञ्चा ।
परिहर्षिते व च भूमिस्त्रिभुवननाथस्य वैभवं पश्यंती ॥

शरदुदयविमल सलिलं सर इव गगनं विराजते विगतमलं
जहति च दिशस्तिमिरिकां विगतरजः प्रभृति जिह्मता भावं
सद्यः ॥४८॥

एतेतेति त्वरितं ज्योतिर्व्यन्तर दिवौकसाममृतभुजः ।
कुलिशभृदाज्ञापनया कुर्वन्त्यन्ये समं ततो व्याह्वानम् ।४६।

स्फुरदर सहस्ररुचिरं विमलमहारत्न किरणनिकरपरीतम् ।
प्रहसित किरण सहस्रद्युतिमंडलमग्र गामि धर्मसुचक्रम् ५०

इत्यष्ट मंगलं च स्वादर्शप्रभृतिभक्तिरागपरीतैः ।
उपकल्प्यंते त्रिदशैरेतेऽपि निरूपाति विशेषाः ॥ ५१ ॥

वैडूर्य रुचिर विटप प्रवाल मृदुपल्लवोपशोभितशाखः ।
श्रीमानशोकवृक्षो वरमरकत पत्र गहन बहल च्छायः ।५२।

मंदार कुन्दकुवलय नीलोत्पल कमल मालती वकुलाद्यैः ।
समदभ्रमर परीतै र्व्यामिश्रापततिकुसुमवृष्टि र्नभसः ।५३।

कटक कटि सूत्रकुण्डल केयूर प्रभृतिभूषितांगौ स्वंगौ ।
यक्षौ कमल दलाक्षौ परिनिक्षिपतः सलील चामरयुगलम् ।

आकस्मिक मिवयुगपद्दिवस करसहस्रमपगत व्यवधानम्
भामंडलमविभावित रात्रिदिवभेदमतितरामाभाति ॥५५॥

प्रचलपवनाभिघात प्रक्षुभित समुद्र घोष मन्द्रध्वानम्।
दंध्वन्यते सुवीणा वंशादि दुंदुभिस्तालसमम् । ५६ ॥
त्रिभुवनपतितालांछन मिंदुत्रय तुल्यमतुलमुक्ताजालं ।
छत्रत्रयचसुवृहद् वैडूर्यविक्लृप्तमधिकमनोज्ञं ॥५७॥
ध्वनिरपियोजनमेकं प्रजायते श्रोत्रहृदयहारि गंभीरः ।
ससलिल जलधर पटलध्वनितमिव प्रवितितान्तराशावलयम्
स्फुरितांशुरत्नदीधिति परिविच्छुरितामरेन्द्र चापच्छायम्।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः स्फटिकशिलाघटितसिंहविष्टरमतुलम्
यस्येह चतुस्त्रिंशत्प्रवरगुणा प्रातिहार्यलक्ष्म्यश्चाष्टौ ।
तस्मै नमोभगवते त्रिभुवनपरमेश्वरार्हते गुणमहते ।६०॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! णंदीसरभत्ति काओसग्गोकओ तस्सालोचेउं णंदीसरदीवम्मि चउदिस विदिसासु अंजणदधिमुहरदिकर पुरुणगवरेसु जाणि जिण चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसुवि लोएसु भवणयवासिय वाणविंतर जोइसिय कप्पवासियत्ति चउविहादेवा सपरिवारा दिव्वेहि गंधेहि दिव्वेहि पुप्फेहि दिव्वेहि धूवेहि दिव्वेहि चुण्णेहि दिव्वेहि वासेहि दिव्वेहि ण्हाणेहि आषाढ कत्तिय फागुण मासाणं अट्ठमिमाइं काऊण जाव पुण्णिमंत्ति णिच्चकालं अंचंति पूजंति वंदंति णमस्संति णंदीसर महाकल्लाणपुज्जं

करंति अहमवि इह संतो तत्थसंताइ णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि लाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं

अथ—नंदीश्वरपर्व क्रियायां···पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्ववत् दंडकादि करके श्रीमदमेन्द्रेत्यादि भक्ति पढे।

अथ—नंदीश्वर पर्वक्रियायां···शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं पूर्ववत् दंडकादि व नस्नेहाच्छरणमित्यादि भक्ति पढे।

अथ—नंदीश्वर क्रियायां सिद्ध नंदीश्वर पंचगुरु शांति भक्ती कृत्वा तद्धीनाधिकदोषशुद्ध्यर्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। दंडकादि व शास्त्राभ्यास इत्यादि भक्ति पढे।

अभिषेक वंदना व मंगल गोचर मध्याह्नवंदनाक्रिया प्रयोग विधि—

सानंदीश्वर पदकृत चैत्यात्वभिषेक वंदनास्तितथा।
मंगलगोचर मध्याह्न वंदना योग योजनोज्झनयोः ॥६४॥

अर्थ—यही नंदीश्वर क्रिया ही नंदीश्वर भक्तिके स्थान पर चैत्यभक्तिके करनेसे 'अभिषेक वंदना' अर्थात् जिनमहा स्नपनदिवस में वंदना होती है। तथा यह अभिषेकवंदना ही वर्षा योग ग्रहण और मोचन में मंगल गोचर मध्याह्न

वन्दना होती है प्रयोगविधि में अभिषेक वंदनाक्रियायां तथा मंगल गोचर भक्त प्रत्याख्यान क्रियायां इत्यादि को बोलना चाहिये।

अर्थात् वर्षायोग प्रतिष्ठापन में मध्यान्ह कालमें सर्व साधुजन मिलकर बृहत्सिद्ध चैत्य पंचगुरु शांतिभक्ति पूर्वकमध्यान्ह वंदना करें। इसे ही मंगलगोचर मध्याह्न वंदना कहते हैं। इसी प्रकार वर्षा योग निष्ठापन में भी करें। और पुनः मंगल गोचर बृहत्प्रत्याख्यान की क्रियाको करें। अर्थात्—

लात्वाबृहत्सिद्ध योगिस्तुत्या मंगलगोचर।
प्रत्याख्यानं बृहत्सूरि शांतिभक्तीः प्रयुञ्जताम् ॥६५॥

अर्थ—पुनः आचार्यादि सभी साधुवर्ग बृहत्सिद्ध योगि भक्ति पढकर मंगलगोचर में प्रत्याख्यानं को ग्रहण कर बृहत् आचार्यभक्ति व शांति भक्ति को करें।

प्रयोगविधि में मंगलगोचर भक्त प्रत्याख्यान क्रियायां इत्यादि प्रयोग करें। यह क्रिया त्रयोदशी को होती है।

वर्षा योग प्रतिष्ठापन प्रयोग विधि

ततश्चतुर्दशी पूर्व रात्रे सिद्धमुनिस्तुती।
चतुर्दिक्षुपरीत्याल्पाश्चैत्यभक्ति गुरुस्तुतिम् ॥ ६६ ॥

शांतिभक्तिं च कुर्वाणैर्वर्षायोगस्तु गृह्यताम् ।
ऊर्जकृष्ण चतुर्दश्यां पश्चा द्रात्रौ च मुच्यताम् ॥६७॥

अर्थ—उपर्युक्त प्रत्याख्यान प्रयोगविधि के अनतर आचार्यादि सभी साधुवर्ग आषाढ शुक्ला चतुर्दशी की पूर्वरात्रि में सिद्धभक्ति योगिभक्ति करके चारोंही दिशाओ मे प्रदक्षिणा पूर्वक एक एक दिशाम लघुचैत्यभक्ति पढते हुये अर्थात् पूर्वादि दिशाओं म मुख करके चतुर्दिक्चै-त्यालय वंदना करे अथवा भाव से ही प्रदक्षिणा करनी चाहिये और तत्रस्थ जनों को योग तंदुल भी प्रक्षेपणकरना चाहिये ऐसा वृद्धव्यवहार है अथात् पूर्व परंपरागत प्रथा है और पंचगुरु भक्ति व शांतिभक्ति पढकर वर्षायोग ग्रहण करे । तथा कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की पश्चिमरात्रि में एतद्विधि के अनुसार ही वर्षायोग निष्ठापन करना चाहिये ।

वर्षा योग स्थापना

अथ—वर्षा योग प्रतिष्ठापन क्रियायां सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

“णमो अरहंताण” मित्यादि दंडक कायोत्सर्ग-व थोस्सामि स्तवपढे ।

सिद्धानुद्धूतेत्यादि सिद्ध भक्ति पढ़ें ।

अथ—वर्षा योगप्रतिष्ठापन क्रियायां योग भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं । पूर्व वद्दंडकादि करके जाति जरो रू रोगमरण इत्यादि योगिभक्ति को पढे ।

पुनः चतुर्दिशाओं में मुखकरके अथवा भावों सेही पूर्वादिक वन्दना करें पूर्वदि दिक्चैत्यालय वंदना ।

यावंति जिनचैत्यानि विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिः परीत्य नमाम्यहं ॥

स्वयंभुवा भूतहितेन भूतले समंज सज्ञान विभूति चक्षुषा ।
विराजितं येनविधुन्वतातमः क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः १

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषूः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः
प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः
विहाय यः सागरवारि वाससं वधूमिवेमां वसुधा वधूं सतीम्
मुमुक्षुरिक्ष्वाकुकुलादिरात्मवान् प्रभुःप्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः
स्वदोष मूलं स्व समाधि तेजसा निनाय यो निर्दय भस्म-
सात्क्रियाम् ।

जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा बभूव च ब्रह्म पदामृतेश्वरः
सविश्वचक्षुर्वृषभोऽर्चितः सताम् समग्र विद्यात्मवपुर्निरंजनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनंदनोजिनो जितक्षुल्लक वादि-
शासनः ॥ ५ ॥

इति वृषभजिन स्तोत्रम् ।

यस्य प्रभावात् त्रिदिव च्युतस्य क्रीडास्वपि क्षीवमुखारविंदः
अजेय शक्तिर्भुवि बंधु वर्गश्चकार नामाजित इत्यबन्ध्यम् १
अद्यापि यस्याजित शासनस्य सतां प्रणेतुः प्रति मंगलार्थम्
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं स्वसिद्धि कामेन जनेन लोके
यः प्रादुरासीत प्रभु शक्ति भूम्ना भव्याशया लीन कलंक-
शान्त्यै ।
महामुनिर्मुक्त घनोपदेहो यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ॥
येन प्रणीतं पृथुधर्मतीर्थं ज्येष्ठं जना प्राप्य जयन्ति दुःखम्
गांगं हृदं चन्दन पंक शीतं गज प्रवेका इव धर्म तप्ताः ४
स ब्रह्मनिष्ठः सममित्र शत्रु र्विद्याविनि र्वान्त कषाय दोषः
लब्धात्मलक्ष्मीरजितो जितात्मा जिनः श्रियं मे भगवान्-
विधत्ताम् ॥ ५ ॥

इत्यजितजिनस्तोत्रम् ।

अथ वर्षा योग प्रतिष्ठापन क्रियायां चैत्यभक्ति
कायोत्सर्गं करोम्यहं ।
णमो अरहंताणमित्यादि दंडकादि करके
वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु नंदीश्वरे यानि च मंदिरेषु ।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम्
अवनितल गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां ।
वन भवन गतानां दिव्य वैमानिकानां ॥

इह मनुज कृतानां देव राजार्चितानां ।
जिनवर निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ २ ॥
जंबू धातकि पुष्करार्ध वसुधा क्षेत्रत्रये ये भवा—
श्चन्द्राम्भोज शिखंडिकंठ कनक प्रावृड् घना भाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञान चरित्र लक्षण धरा दग्धाष्ट कर्मेन्धना ।
भूतानागत वर्तमान समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ३ ॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबु वृक्षे ।
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर रुचके कुंडले मानुषांके ॥
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके ।
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥
द्वौ कुंदेन्दु तुषार हार धवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ ।
द्वौ बंधूक सम प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगु प्रभौ ॥
शेषाः षोडश जन्म मृत्यु रहिताः संतप्त हेम प्रभा—
स्ते सज्ज्ञान दिवाकरा सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।४।

अंचलिका

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति काओ सग्गो कओ तस्सा लोचेउं अहलोय-तिरिलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणिजाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसुवि लोएसु भवण वासिय वाण विंतर-जोइसिय-कप्प वासियत्ति चउ-विहा-देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण

सहाणेण णिच्चकालं अंचंति पुज्जंति वंदंति णमंस्संति अहमवि इह संतो तत्थ संताई णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहि मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

इति पूर्वदिक् वंदना

अथ दक्षिणदिक् चैत्यालय वंदना

यावंति जिन चैत्यानिविद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिः परीत्यनमाम्यहं ॥

त्वं शंभवः संभव तर्षरोगैः संतप्यमानस्यजनस्यलोके ।
आसीदिहाकस्मिक एव वैद्यो वैद्योयथा नाथ रुजां प्रशांत्यै ।
अनित्यमत्राणमहंक्रियाभिः प्रसक्तमिथ्याध्यवसायदोषम् ।
इदं जगज्जन्मजरान्तकार्त्तं निरञ्जनांशांतिमजीगमस्त्वं ।
शतह्रदोन्मेष चलंहिसौख्यं तृष्णामयाप्यायन मात्रहेतुः ।
तृष्णाभि वृद्धिश्च तपत्यजस्त्रं तापस्तदायासयतीत्यवादीः
बंधश्चमोक्षश्चतयोश्चहेतुः बद्धश्च मुक्तश्चफलं च मुक्तेः ।
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं नैकान्तदृष्टे स्त्वमतोऽसिशास्ता
शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः स्तुत्यां प्रवृत्तः किमुमादृशोऽज्ञः
तथापि भक्त्या स्तुतिपादपद्मो ममार्य देयाः शिवतातिमुच्चैः

इति संभव जिनस्तोत्रम् ।

गुणाभिनन्दादभिनंदनो भवान् दयावधूंक्षान्तिसखीमशिश्रियत्
समाधि तंत्रस्तदुपोपपत्तये द्वयेननैर्ग्रंथ्यगुणेन चायुजत् ।

अचेतने तत्कृत बंधजेऽपि ममेद मित्याभिनिवेशक ग्रहात् ।
प्रभंगुरे स्थावर निश्चयेन च क्षतंजगत्तत्त्व मजिग्रहद् भवान्
क्षुदादिदुःख प्रतिकारतः स्थिति र्नचेन्द्रियार्थप्रभवाल्पसौख्यतः
ततोगुणोनास्ति च देहदेहिनोरितीदमित्थं भगवान्व्यजिज्ञपत् ।
जनोऽतिलोलोप्यनुबंधदोषतो भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते
इहाप्यमुत्राप्यनुबंधदोषवित् कथंसुखेसंसजतीतिचाब्रवीत् ।
सचानुबंधस्य जनस्य तापकृत् तृषोऽभिवृद्धिःसुखतोनच स्थितिः
इति प्रभो लोकहितं यतोमतंततोभवानेव गतिः सतांमतः

अथ—वर्षायोग प्रतिष्ठापन क्रियायां चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं पूर्ववत् दंडकादिकरके कायोत्सर्गं व थोस्सामि स्तव पढ़ ।

पुनः वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु इत्यादि जिणगुण संपत्तिहोउ मज्झं पर्यंतं पढ़े ।

पश्चिम दिक्चैत्य वंदना

यावंति जिनचैत्यानि विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिः परीत्य नमाम्यहं ।।
अन्वर्थ संज्ञःसुमतिर्मुनिस्त्वं स्वयंमतं येन सुयुक्ति नीतम् ।
यतश्च शेषेसु मतेषु नास्ति सर्वक्रियाकारक तत्त्वसिद्धिः ।१।
अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं भेदान्वयज्ञानमिदं हि सत्यं ।
मृषोपचारोऽयतरस्यलोपे तच्छेष लोपोऽपिततोऽनुपाख्यम्
सतः कथंचित्तदसत्त्वशक्तिः खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धं ।

सर्वस्वभावच्युतमप्रमाणं स्ववाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत्
न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति न च क्रिया कारकमत्र युक्तं ।
नैवासतो जन्म सतो न नाशो दीपस्तमःपुद्गलभावतोऽस्ति
विधिर्निषेधश्च कथंचिदिष्टौ विवक्षया मुख्यगुणव्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं मतिप्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ५

इति सुमतिजिन स्तोत्रम् ।

पद्मप्रभः पद्मपलाशलेश्यः पद्मालयालिंगितचारुमूर्तिः ।
बभौ भवान्भव्यपयोरुहाणां पद्माकराणामिव पद्मबंधुः ॥१॥
बभार पद्मां च सरस्वतीं च भवान्पुरस्तात्प्रतिमुक्तिलक्ष्म्याः
सरस्वतीमेव समग्रशोभां सर्वज्ञलक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः २
शरीररश्मिप्रसरः प्रभोस्ते बालार्करश्मिच्छविरालिलेप ।
नरामराकीर्णसभां प्रभावच्छैलस्य पद्माभमणेः स्वसानुम् ।
नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं सहस्रपत्रांबुजगर्भचारैः ।
पादाम्बुजैः पातितमोहदर्पो भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै ४
गुणाम्बुधेर्विप्रुषमप्यजस्रं नाखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः ।
प्रागेव मादृक्किमुतातिभक्तिर्मां बालमालापयतीदमित्थं ५

इति पद्मप्रभजिनस्तोत्रम् ।

अथ वर्णांगोगप्रतिष्ठापन क्रियायां चैत्यभक्ति कायो-त्सर्गं करोम्यहं पूर्ववत् दंडकादि करके—"येषु वर्णान्तर" इत्यादि पढ़े ।

उत्तर दिक् चैत्य वंदना

यावंति जिनचैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावंति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहं।

स्वास्थ्यं यदात्यंतिकमेष पुंसां स्वार्थो न भोगः परिभंगुरात्मा।
तृषोऽनुसंगान्न च तापशांतिरितीदमाख्यद् भगवान् सुपार्श्वः॥ १॥

अजंगमं जंगमनेययंत्रं यथा तथा जीवधृतं शरीरं।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः

अलंघ्यशक्तिर्भवितव्यतेयं हेतुद्वयाविष्कृतकार्यलिंगा।
अनीश्वरो जंतुरहं क्रियार्त्तः संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः॥ ३॥

बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो नित्यं शिवं वांछति नास्य लाभः।
तथापि बालो भयकामवश्यो वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता मातेव बालस्य हितानुशास्ता।
गुणावलोकस्य जनस्य नेता मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य

इति सुपार्श्व जिनस्तोत्रम्।

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कांतं।
वंदेऽभिवंद्यं महतामृषीन्द्रं जिनं जितस्वांतकषायबंधम्॥

यस्यांग लक्ष्मी परिवेषभिन्नं तमस्तमोरेरिव रश्मि भिन्नं ।
ननाश बाह्यं बहु मानसं च ध्यान प्रदीपातिशयेन भिन्नं
स्वपक्ष सौस्थित्य मदावलिप्ता वाक्तसिंह नादैर्विमदा-
बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्यमदार्द्र गण्डा गजा यथा केशरिणो-
निनादैः ॥ ३॥
यः सर्व लोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाद्भुत कर्मतेजाः ।
अनंतधामाक्षर विश्वचक्षुः समन्त दुःख क्षयशासनश्च ॥४॥
सचन्द्रमा भव्य कुमुद्वतीनां विपन्न दोषाभ्रकलंक लेपः ।
व्याकोशवाङ् न्यायमयूख मालः पूयात्पवित्रो भगवा-
न्मनो मे ॥ ५ ॥

इति चन्द्रप्रभजिनस्तोत्रम्

अथ वर्षा योग प्रतिष्ठापन क्रियायां चैत्यभक्ति कायो-
त्सर्गं करोम्यहं ।

पूर्ववद् डकादि करके "वर्षेषु वर्षान्तर" इत्यादि भक्ति
को पढ़ें ।

इति चतुर्दिग्वंदना

अथ वर्षा योग प्रतिष्ठापनक्रियायां·····पंचगुरुभक्ति-
कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

पूर्ववद् डकादिक करके——श्रीमदमरेन्द्रमुकुट इत्यादि पंच-
महा गुरुभक्ति को पढ़े ।

अथ वर्षा योग प्रतिष्ठापन क्रियायां...शांतिभक्तिका-योत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्ववद्दंडकादि करके—न स्नेहाच्छरणं प्रयांति इत्यादि-शांतिभक्ति पुनः सर्व दोष शुद्धयर्थं समाधिभक्ति करनी चाहिये।

इसी प्रकार वर्षायोगनिष्ठापन में भी अन्तर केवल इतना है कि "वर्षा योग प्रतिष्ठापन के स्थान पर वर्षा योगनिष्ठापन पाठ का उच्चारण करें।

मासं वासोऽन्यदैकत्र योगक्षेत्रं शुचौ व्रजेत्।
मार्गेऽतीते त्यजे च्चार्थ वशादपि न लंघयेत् ॥६॥
नभश्चतुर्थीं तद्याने कृष्णां शुक्लोर्ज पंचमी।
यावन्न गच्छेत्तच्छेदे कथं चिच्छेदमाचरेत् ॥ ६६ ॥

अर्थ—चतुर्मास के अतिरिक्त मुनि गण किसी एक नगरादि स्थानों में एक महीने तक ठहर सकते हैं। अषाढ-के महीने में वह श्रमण संघ वर्षा योग को चलाजावे। और मगसिर का महीना बीतते ही उस वर्षा योग स्थान को छोड देवें। यदि अषाढ के महीने में वर्षा योग स्थान में न पहुंच सके तो कारणवश भी श्रावणवदी चतुर्थी का उलंघन न करें।

तथा कार्तिक शुक्ला पंचमी के पहले प्रयोजन वश भी उस स्थान को छोड़ कर स्थानांतर न करे यदि कदा

चित् दुर्निवार उपसर्ग आदि के कारण यथोक्त प्रयोग समय का उलंघन करें तो प्रायश्चित्त ग्रहण करे।

तथा बारह योजन के अंतर्गत किसी साधुकी समाधि का प्रसंग हो तो जा भी सकते हैं।

अथ वीरनिर्वाण क्रिया

योगान्तेऽर्कोदये सिद्ध निर्वाण गुरु शांतयः।
प्रणुत्या वीर निर्वाणे कृत्यातो नित्यवंदना ॥७०॥

अर्थ—रात्रि के चतुर्थ प्रहरमें वर्षा योग निष्ठापन करके (रात्रि प्रतिक्रमण करके) सूर्योदय के समय सभी साधु मिलकर सिद्ध निर्वाण पंचगुरु-शांतिभक्ति पूर्वक निर्वाण क्रिया करे। नंतर साधु वर्ग तथा श्रावक जन भी "नित्य देव" वंदना करें।

प्रयोगविधिः

अथ वीरनिर्वाण क्रियायां.....सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

णमो "अरहंताणं" इत्यादि दंडक कायोत्सर्ग व थोस्सामि स्तव पढे।

सिद्धानुद्धूतकर्मप्रकृति इत्यादि सिद्धभक्ति को पढें।

अथ वीर निर्वाण क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण.....निर्वाणभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्ववत् दंडकादि करके—

वीर प्रभु की तीन प्रदक्षिणा करते हुये निर्वाणभक्ति पढ़ें।

निर्वाणभक्तिः

विबुधपतिखगपतिनरपतिधनदोरगभूतयक्षपतिमहितम्।
अतुलसुखविमलनिरुपमशिवमचलमनामयं हि संप्राप्तम्
कल्याणैः संस्तोष्ये पंचभिरनघं त्रिलोकपरमगुरुम्।
भव्यजनतुष्टिजननैर्दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या ॥ २ ॥

आषाढसुसितषष्ठ्यां हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते शशिनि।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः ॥ ३ ॥

सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेह कुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान्संप्रदर्श्य विभुः ॥४॥

चैत्रसितपक्षफाल्गुनिशशांकयोगे दिने त्रयोदश्यां।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ॥५॥

हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशी दिवसे।
पूर्वाण्हे रत्न घटैं विंबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम् ॥ ६ ॥

भुक्त्वा कुमारकाले त्रिंशद् वर्षाण्यनंतगुणराशिः।
अमरोपनीतभोगान्सहसाभिनिबोधितोऽन्येद्युः ॥ ७ ॥

नानाविधरूपचितां विचित्रकूटोच्छ्रितां मणिविभूषाम्।
चन्द्रप्रभाख्यशिबिकामारुह्य पुराद्विनिष्क्रान्तः ॥८॥

मार्गशिर कृष्ण दशमी हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे।
षष्ठेन त्वपराण्हे भक्तेन जिनःप्रवव्राज ॥ ९ ॥
ग्राम पुरखेट कर्वट मटंब·घोषाकरा न्प्रविजहार।
उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादशवर्षाण्यमरपूज्यः ॥ १० ॥
ऋजुकूलायास्तीरे शाल द्रुम संश्रिते शिलापट्टे।
अपराण्हे षष्ठेनास्थितस्य खलु जृंभिकाग्रामे ॥ ११ ॥
वैशाखसित दशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते चन्द्रे।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञान्नं ॥ १२ ॥
अथभगवान् संप्रापद्दिव्यं वैभार पर्वतं रम्यं।
चातुर्वर्ण्ये सुसंघस्तत्राभूद्‌गौतम प्रभृति ॥ १३ ॥
छत्राशोकौ घोषं सिंहासनन्दुन्दुभी कुसुमवृष्टिं।
वरचामर भामंडल दिव्यान्यन्यानि चावापत् ॥ १४ ॥
दशविधमनगाराणामेकादशधोत्तरंतथा धर्मं।
देशयमानो व्यवहरंस्त्रिशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः ॥१५॥
पद्म वनदीर्घिकाकुल विविध द्रुमखण्ड मंडितेरम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ॥१६॥
कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद् व्यजरामर मक्षयं सौख्यं ॥ १७ ॥
परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं ज्ञात्वाविबुधा ह्यथाशु चागम्य।
देवतरु रक्त चन्दन कालागुरु सुरभि गोशीर्षैः ॥१८॥

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः ।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गता दिवं खं च वनभवने ॥१६॥

इत्येवं भगवति वर्धमानचन्द्रे यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि
सोऽनंतसुखं नृदेवलोके भुक्त्वांते शिवपदमक्षयं प्रयाति २०

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां
निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम् ।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः
संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥ २१ ॥

कैलाशशैलशिखरे परिनिर्वृतोऽसौ ।
शैल्येशि भावमुपपद्य वृषो महात्मा ।
चंपापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान् ।
सिद्धिं परामुपगतो गतरागबंधः ॥ २२ ॥

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः ।
पाखंडिभिश्च परमार्थगवेषशीलैः ।
नष्टाष्टकर्मसमये यदरिष्टनेमिः ।
संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयंते ॥२३॥

पावापुरस्य वहिरुन्नतभूमिदेशे ।
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्रीवर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो ।
निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा ॥२४॥

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला
ज्ञानार्कभूरिकिरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारितसौख्यनिष्ठं
सम्मेदपर्वततले समवापुरीशाः ॥२५॥

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्तयोगः
षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिनवर्द्धमानः ।
शेषा विधूतघनकर्मनिबद्धपाशा
मासेन ते यतिवरास्त्वभवन्वियोगाः ॥ २६ ॥

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धा-
न्यादाय मानसकरैरभितः किरंतः ।
पर्येमि आदृतियुता भगवन् निषद्याः
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥ २७ ॥

शत्रुंजये नगवरे दमितारिपक्षाः
पंडोःसुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा
नद्यास्तटे जितरिपुश्च सुवर्णभद्रः ॥ २८ ॥

द्रोणीमति प्रबल कुंडल मेढ्रके च
वैभार पर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रि बलाहके च
विंध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च ॥ २९ ॥

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन् ॥ ३० ॥

इक्षोर्विकाररसपृक्तगुणेन लोके
पिष्टोऽधिकां मधुरतामुपयाति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥ ३१ ॥

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृतिभूमिदेशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शांता
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्यसौख्याम् ॥ ३२ ॥

अंचलिका

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए आउट्ठमासहीणे वास चउक्कम्मि सेस कालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्-सिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदो महदिमहा-वीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो तीसुवि लोएसु भवणवासिय वाणविंतर जोयसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण

धूवेण दिव्वेण चुरणेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अंचंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति परिणिव्वाण महाकल्लाणपुज्जं करेंति, अहमवि इह संतो तत्थ संताईं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्ख-क्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि-मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अथ वीर निर्वाण क्रियायां········पंचगुरु भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्ववद् डकादि करके "श्रीमदमरेन्द्र इत्यादि भक्ति" अथ वीरनिर्वाण क्रियायां शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करो-म्यहं। पूर्ववद् डकादि करके 'न स्नेहाच्छरणं' इत्यादि शांतिभक्ति अथ वीरनिर्वाणक्रियायां सिद्ध-निर्वाण-पंचगुरु शांतिभक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकदोषशुद्ध्यर्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्वचद् डक कायोत्सर्गादि "शास्त्राभ्यासो जिन इत्यादि"

कल्याण पंचक क्रिया प्रयोगविधि

साद्यन्तसिद्ध शांतिस्तुति जिनगर्भ–जनुषोःस्तुयाद् वृत्तं।
निष्क्रमणे योग्यंतं विदि श्रुताद्यपि शिवे शिवान्तमपि ७१

अर्थ–जिनेन्द्र भगवानकी गर्भ जन्म कल्याणक क्रिया में सिद्ध चारित्र शांति भक्ति, तपः कल्याणक क्रियामें

सिद्ध चारित्र योगि शांतिभक्ति, केवलज्ञान कल्याणक क्रियामे सिद्ध श्रुत चारित्र योगि शांति भक्ति तथा निर्वाण क्षेत्रकी वंदनामें व निर्वाण कल्याण क्रियामे सिद्ध श्रुत चारित्र योगि निर्वाण शांतिभक्ति पूर्वक क्रिया करें।

जन्म कल्याण क्रिया विधि पूर्व में कहचुके हैं परन्तु यहां पांचों की विधिमें पुनः कह दिया है कि पांचों क्रियाओं का एक स्थान में ज्ञान सहज ही होवे।

प्रयोगविधि—अथ जिन गर्भकल्याणक क्रियायां तथा इसी प्रकार "जन्म कल्याणक क्रियायां" इत्यादि पांचों में समझलेना चाहिये। विशेष यही है कि निर्वाण भक्ति का पाठ करते हुये जिनेन्द्र भगवान की व निषद्यास्थान की तीन तीन प्रदक्षिणा देते जावें।

समाधि मरण के अनन्तर साधुके शरीर की व निषद्यास्थान की क्रिया

वपुषि ऋषेः स्तौतु ऋषीन् निषेधिकायां च सिद्धशांत्यन्तः सिद्धांतिनः श्रुतादीन् वृत्तादीनुत्तर व्रतिनः ॥ ७२ ॥

द्वियुजः श्रुतवृत्तादीन् गणिनोऽन्त गुरून् श्रुतादिकानपि तान् समयविदोऽपि यमादींस्तनु क्लिशो द्वयमुखानपि द्वियुजः ॥ ७३ ॥ युग्मम्।

अर्थ—सामान्य मुनिके मृतशरीर की और निषद्या भूमि की वंदनामें सिद्ध योगि शांतिभक्ति, २ उत्तर गुण धारी सामान्य मुनि की मृतशरीर वंदना व निषद्या क्रिया में सिद्ध चारित्र योगि शांति भक्ति, ३ सिद्धांतवेत्ता सामान्यमुनि की निषद्याभूमि व शरीर वंदनामें सिद्ध श्रुत योगि शांति भक्ति, ४ उत्तर व्रती और सिद्धान्तविद् भी हो उनमुनि की उपर्युक्त क्रियामें सिद्ध श्रुत चारित्र योगि शांति भक्ति, ५ आचार्य की निषद्या भूमि व मृतशरीर वंदना में सिद्ध योगि आचार्य शांति भक्ति, ६ अगर वह आचार्य कायक्लेशी हैं तो उपर्युक्त क्रियामें सिद्ध चारित्र योगि आचार्य शांति भक्ति, ७ यदि सिद्धांतविद् हों तो सिद्ध श्रुत योगि आचार्य शांतिभक्ति ८, तथा यदि सिद्धांत विद् व कायक्लेशी भी आचार्य होवें तो सिद्ध श्रुत चारित्र योगि आचार्य शांति भक्ति पूर्वक यथाविधि वंदना करें।

प्रयोग विधि

"अथ ऋषि शरीर वंदनायां पूर्वाचार्यानु" इत्यादि तथा निषद्या भूमि की वंदना में "ऋषि निषद्या वंदनायां" इत्यादि शब्दों का प्रयोग करना चाहिये।

चलाचल बिम्बप्रतिष्ठा व चतुर्थ स्थापनक्रिया प्रयोगविधी।

स्यात्सिद्धशांतिभक्ती स्थिरचलजिनबिम्बयोः प्रतिष्ठायाम्।
अभिषेक वंदना चलतुर्यस्नानेऽस्तु पाक्षिकी त्वपरे ॥७४॥

अर्थ—चलजिनबिम्ब की और अचल जिन बिम्ब की प्रतिष्ठा में सिद्ध भक्ति और शांति भक्ति होती है। तथा चल जिन बिम्ब के चतुर्थदिवस के अवभृत स्नानमें अभिषेक बंदना अर्थात् सिद्ध चैत्य पंचगुरु शांति भक्ति व अचल जिनविम्ब के चतुर्थ स्नानमें सिद्ध चारित्र भक्ति वड़ी चारित्रालोचना और शांति-भक्ति करना चाहिये। प्रयोग विधि में "चलजिनविम्बप्रतिष्ठा क्रियायां" इत्यादि

आचार्यपदप्रतिष्ठापन क्रियाविधिः

सिद्धाचार्यस्तुती कृत्वा सुलग्ने गुर्वनुज्ञया।
लात्वाचार्यपदं शांतिं स्तुयात्साधुः स्फुरद्गुणः ॥७५॥

अर्थ—जिसके गुण संघमें स्फुरायमान हो रहें हैं ऐसा साधु शुभलग्नमें गुरु आज्ञा पूर्वक सिद्ध आचार्य भक्ति करके आचार्य पद को ग्रहण कर शांति भक्ति करे। प्रयोगविधि "पूर्ववद्" आचार्यपद प्रतिष्ठापन क्रियायामित्यादि भक्तिद्वय पठित्वा अद्य प्रभृति भवता रहस्यशास्त्राध्ययनदीक्षादानादिक आचार्यकार्यमाचर्यमिति गणसमक्षं भापमाणेन गुरुणा समर्प्यमाण पिच्छिग्रहणलक्षणमाचार्यपदं गृण्हीयात्। पश्चाद् शांतिभक्तिं कुर्यात्।

प्रतिमायोगिमुनिक्रिया विधि

लघीयसोऽपि प्रतिमायोगिनः योगिनः क्रियाम्।
कुर्युः सर्वेऽपि सिद्धर्पिशांतिभक्तिभिरादरात् ॥ ८२ ॥

अर्थ–दीक्षामें अत्यन्त लघु भी प्रतिमायोग धारण करने वाले मुनि की सभी साधु मिलकर बड़े आदर से सिद्ध भक्ति योगि भक्ति व शांति भक्ति पूर्वक वंदना करें प्रयोग में प्रतिमायोगिमुनिवंदनायां इत्यादि ।

दीक्षा ग्रहण क्रियाविधि

सिद्ध योगि बृहद्भक्ति पूर्वकं लिंगमर्प्यताम् ।
लुन्चाख्या नाग्न्य पिच्छात्म क्षम्यतां सिद्धभक्तितः ॥८३॥

अर्थ–बृहत्सिद्ध बृहद्योगि भक्ति पूर्वक लोचकरण नामकरण नग्नताप्रदान और पिच्छि प्रदान रूप लिंग अर्पण करें और सिद्धभक्ति पढ़कर क्रिया की समाप्ति करें । प्रयोगमें "दीक्षा दान क्रियायां" इत्यादि

दीक्षादानोत्तरं कर्तव्यं ।

व्रतसमितीन्द्रियरोधाः पञ्च पृथक् क्षितिशयो रदाघर्षः ।
स्थिति सकृदशने लुंचावश्यकषट्के विचेलताऽस्नानम् ८४
इत्यष्टाविंशति मूलगुणान् निक्षिप्य दीक्षिते ।
संक्षेपेण सशीलान् गणी कुर्यात्प्रतिक्रमम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–उस दीक्षित साधुमें पांच महाव्रत पंचसमिति पांच इन्द्रियरोध क्षितिशयन अदंतधावन स्थिति भोजन सकृद्भुक्ति लोंच षडावश्यक, अचेलता और अस्नान इन अट्ठाइस मूलगुणोंको संक्षेप से चौरासी लाख गुण व

अठारह हजार शीलों के साथ साथ स्थापित करें । पुनः—आचार्य उसी दिन व्रतारोपण प्रतिक्रमण करे । यदि लग्न ठीक न हो तो कुछ दिनानंतर भी प्रतिक्रमण कर सक्ते है । पाक्षिक प्रतिक्रमणमें लक्षण में, बताया है कि-परे पुनर्व्रतारोपणादिविपयाश्चत्वारः प्रतिक्रमणाः स्युः किंविशिष्टाः ! बृहन्मध्यसूरिभक्तिद्वयोज्झिताः ।

अर्थात् व्रतारोपणादि चार प्रतिक्रमणों में, बृहदाचार्य "सिद्धगुणस्तुतिनिरता' से लेकर मध्याचार्यभक्ति 'देस कुल जाइसुद्धा' सहित छेदोवट्ठापणं होउ मज्झं पर्यंत दो भक्तियों को छोड कर शेष सब पाक्षिक प्रतिक्रमणविधि ही करे । अंतर केवल इतना ही है कि—प्रयोग विधि में—पाक्षिक प्रतिक्रमण क्रियायां के स्थान में व्रतारोपण प्रतिक्रमण क्रियायां इत्यादि का प्रयोग करें तथा वीरभक्ति मे कायोत्सर्ग का भी १०८ प्रमाण उच्छ्वासों में ही ३६ जाप्य देवें ।

तद्यथा-या व्रतारोपणी सार्वातीचारिक्यातिचारिकी ।
औत्तमार्थी प्रतिक्रान्तिः सोच्छ्वासैराह्निकी समा ॥
(अनगार)

अर्थ—व्रतारोपणी सार्वातिचारी आतिचारिकी औत्तमार्थी प्रतिक्रमणाओ में दैवसिक प्रमाण १०८ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग होता है ।

विशेष—पाक्षिक प्रतिक्रमण प्रयोग विधि में मध्य मध्य में पक्खियम्मि आलोचेउं पक्खिओ चउमासिओ संवच्छरिओ आदि जो प्रयोग है वह मर्यादित काल की अपेक्षा से है परन्तु यहां पर पक्ष चारमास आदि कुछ दिन की मर्यादा न होकर चारों ही प्रतिक्रमण अपने सार्थक नाम से संबंधित है अतः जो प्रतिक्रमण हो उसके प्रयोग के मध्य मध्य में भी इन शब्दो के स्थानोंमें भी परिवर्तन कर देवें। अर्थात्—पक्खियम्मि आलोचेउं के स्थान······ पक्खिओ·········इत्यादि रूप से प्रयोग करना चाहिये।

महाव्रत दीक्षादानविधि मे तत्पक्ष अथवा द्वितीयपक्ष में पाक्षिक प्रतिक्रमण पाठ करते हुए मध्य में "वदसमिदि को बोलकर पुनः व्रतारोपण करे तभी सर्वसाधु-प्रतिवंदना करें" ऐसा जो विधान है वही व्रतारोपण प्रतिक्रमण है।

यद्यपि यहां पर स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि उस में "व्रतारोपण प्रतिक्रमण क्रियायां" एसा प्रयोग करे पक्ष आदि की मर्यादा के दोपों की शुद्धि का हेतु न लेकर के मात्र व्रतारोपण का हेतु है अतएव ऐसा प्रयोग करना ही उचित मालूम पडता है विद्वानों को और भी विचार निर्णय कर लेना चाहिये।

दीक्षा के बाद अन्यकाल मे लोच का विधान करते है ।

लोचो द्वित्रिचतुर्मासैर्वरो मध्योऽधमः क्रमात् ।
लघुप्राग्भक्तिभिः कार्यः सोपवासः प्रतिक्रमः ।।९६।।

अर्थ–दो महिने से उत्तम, तीन महिने से मध्यम व चार महिने से लोच करना जघन्य कहलाता है । उपवास और प्रतिक्रमण सहित लघु सिद्ध व लघु योगि भक्ति पूर्वक लोच करके पुनः लघु सिद्ध भक्ति पूर्वक निष्ठापन करना चाहिये । अर्थात्– जहां तक बने वहां तक चतुर्दशी प्रति क्रमण के दिन ही लोच करें यदि अन्य दिन में करें तो लुञ्च संबंधी प्रतिक्रमण को करना चाहिये । दैवसिक प्रतिक्रमण क्रिया ही लुञ्च प्रतिक्रमण में बताई है क्योंकि गोचार और लोच प्रतिक्रमण दैवसिक में ही गर्भित होते है ऐसा वचन है (अतः पृथक् रूप से लुञ्च प्रतिक्रमण करे ही ऐसे नियम की प्रतीति तो नहीं होती है) ।

लोच प्रयोग विधि में–"लुञ्च प्रतिष्ठापन क्रियायां" इत्यादि रूप से दोनों भक्ति पढकर "स्वहस्तेन परहस्तेन वा लोचः कार्यः" लोच करके लघुसिद्ध भक्ति पूर्वक 'लुञ्च निष्ठापन क्रियायां' इति प्रयोग विधि से निष्ठापन करे ।

वृहद्दीक्षाविधिः

पूर्वदिने भोजनसमये भाजनतिरस्कारविधिं विधाय आहारं गृहीत्वा चैत्यालये आगच्छेत् ततो वृहत्प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापने सिद्ध, योगभक्ती पठित्वा गुरुपार्श्वे प्रत्याख्यानं सोपवासं गृहीत्वा आचार्य-शांति-समाधि भक्तीः पठित्वा गुरोः प्रणामं कुर्यात् ।

अर्थात्—दीक्षा के पहले दिन श्रावक पात्र का तिर- कर अर्थात् पात्र रहित करपात्रमे आहार करके चैत्यालयमें आये और गुरुके पासमें सिद्ध, योगि, भक्ति, पढकर वृहत्प्रत्याख्यान का प्रतिष्ठापन करे अर्थात् 'अथ वृहत् प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनक्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वंदना स्तवसमेतं सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं । इति प्रतिज्ञाप्य

णमो अरंहताणमित्यादि दंडक पढकर कायोत्सर्ग करें व थोस्सामि दंडक पढे । "पुनः सिद्धानुद्धूते" त्यादि अथवा "तवसिद्धे णयसिद्धे" इत्यादि सिद्ध भक्ति पढे ।

अथ वृहत्प्रत्याख्यानतिष्ठापनायां योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

णमो अरहंताणं इत्यादि दंडक पढ कायोत्सर्ग स्तव को करे ।

"जाति जरोरुरोग" अथवा "प्रावृट्काले" इत्यादि योगि भक्ति पढे। इन दोनों भक्तिओं को करके गुरुके पास मे उपवास सहित प्रत्याख्यान को ग्रहण करके आचार्य शांति समाधि भक्ति पढकर गुरुको नमस्कार करें। तथा--

नमोऽस्तु आचार्य वंदनायां·····आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं पूर्ववद्दंडकादि करके आचार्य भक्ति पढे।

नंतर नमोऽस्तु आचार्यवंदनायां········शांति क्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

पूर्ववद्दंडकादि करके 'न स्नेहाच्छरणं प्रयांति भग-' इत्यादि शांति भक्ति को पढे। नंतर

नमोऽस्तु आचार्य वंदनायां आचार्य शांति भक्ती वा तद्धीनाधिक दोषशुद्ध्यर्थं समाधि भक्ति कायोत्सर्गं रोम्यहं।

पूर्ववद्दंडकादि करके समाधि भक्ति को पढकर को नमस्कार करे। यह दीक्षाके एकदिन पूर्व की ने है।

अथ दीक्षादाने दीक्षादातृजनः शांतिक-गणधर वलय दिकं यथाशक्ति कारयेत्। अथ दाता तं स्नानादिकं येत्वा यथायोग्यालंकारयुक्तं महामहोत्सवेन चैत्या-

लये समानयेत् । स देव शास्त्र गुरु पूजां विधाय वैराग्य भावनापरः सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे तिष्ठेत् ।

ततो गुरोरग्रे संघस्याग्रे च दीक्षार्थं याञ्चां कृत्वा तदाज्ञया सौभाग्यवतीस्त्रीविहितस्वस्तिकस्योपरि श्वेत-वस्त्रं प्रच्छाद्य तत्र पूर्वदिशाभिमुखः पर्यंकासनं कृत्वा आसते, गुरुश्चोत्तराभिमुखो भूत्वा संघाष्टकं संघं च परिपृच्छ्य लोचं कुर्यात् । अथ तद्विधिः—बृहद्दीक्षायां लोचस्वीकारक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण............ सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

णमो अरहंताणं इत्यादि दंडक कायोत्सर्ग व थोस्सामि करके सिद्ध भक्ति का पाठ करें ।

बृहद्दीक्षायां लोचस्वीकारक्रियायां.....योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं—

पूर्ववद् डकादि करके-योगिभक्ति का पाठकरे । नंतर-

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्य-तेजोमूर्त्तये नमः श्रीशांतिनाथाय शान्तिकराय सर्वपाप प्रणाशनाय सर्वविघ्नविनाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विना-शनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्व क्षाम डामर विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा (अमुकस्य) सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

इस मंत्रसे गंधोदकादि को ३ वार मंत्रित कर मस्तक पर क्षेपण करे। और तीन वार गंधोदक सिंचन कर बाये हाथ से मस्तक का स्पर्श करे पुनः दधि अक्षत गोमय दूर्वांकुरों को मस्तक पर "वर्धमान मंत्र" पढकर क्षेपण करे-

ॐ भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा थंभणे वा रणांगणे वा रायंगणे वा मोहणे वा सव्वजीव सत्ताणं अपराजिदो भवदु रक्ख रक्ख स्वाहा। वर्धमान मंत्रः। ततः पवित्र भस्म पात्रं गृहीत्वा-

ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्रीकृतोत्तमांगाय ज्योतिर्मयाय मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानाय असिआउसा स्वाहा। इसमंत्र को पढकर मस्तक पर कपूर मिश्रित भस्मको डालकर "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा स्वाहा इस मंत्र को बोलकर प्रथम केशोत्पाटन करके पश्चात्-

ॐ ह्रां अर्हद्भ्यो नमः ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः ॐ ह्रूं सूरिभ्यो नमः ॐ ह्रौं पाठकेभ्यो नमः ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः इन पांचो मंत्रों का उच्चारण करते हुये गुरु अपने हाथ से पांचवार केशों को उपाडें। पश्चात् अन्य कोई भी लोच कर सक्ते हैं लोचके पूर्ण होने पर 'बृहद्दीक्षायां लोच-

निष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्या·····सिद्ध भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहं।

पूर्ववद्दंडकादि करके सिद्ध भक्तिका पाठ करे। नंतर मस्तक प्रक्षालनकर शिष्य गुरुभक्तिपूर्वक आचार्य को नमस्कार करके वस्त्राभरण यज्ञोपवीतादि को त्यागकर के वहीं स्थित होकर दीक्षा की याचना करें। नंतर गुरु मस्तक पर श्री कार "श्री" लिखकर ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा ह्रीं स्वाहा इस मंत्र को १०८ वार जाप्य देवें। पश्चात् गुरु उसकी अंजलि में केशर कपूर श्रीखंडसे "श्री" वर्ण लिखे और श्रीकार के चारो ही तरफ

रयणत्तयं च वंदे चउवीसजिणं तहा वंदे।
पंचगुरूणं वंदे चारण जुगलं तहा वंदे ॥२४॥

इस श्लोक को पढते हुये श्री वर्ण के पूर्व में ३ दक्षिण में २४ पश्चिम में ५ उत्तर मे ४ इस तरह अंकों को लिखे। पुनः "सम्यग्दर्शनाय नमः सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्यक्चारित्राय नमः" इस मंत्र को पढते हुये तंडुलोंसे अंजलि को भर देवे, और ऊपर नारियल और सुपारी को रखकर सिद्ध, चारित्र, योगि भक्ति को पढकर, व्रतादि प्रदान करे। तथा

बृहद्दीक्षायां व्रतादानक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण··· सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

दंडकादि करके सिद्ध भक्ति पढ़े।

बृहद्दीक्षायां व्रतादानक्रियायां.........चारित्रभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

दंडकादि करके चारित्र भक्ति पढ़े।

बृहद्दीक्षायां व्रतादानक्रियायां.........योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं। दंडकादि करके योगि भक्ति को पढ़े।

पुनः—वदसमिदिंदियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं

खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च॥

इस श्लोक को पढ़कर अट्ठाईस मूलगुणों का संक्षिप्त लक्षण समझाकर पंच महाव्रत पंचसमिति पंचेन्द्रिय-रोध लोच षडावश्यकक्रियादयोऽष्टाविंशतिमूलगुणाः उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः अष्टादश शीलसहस्राणि चतुरशीतिलक्ष गुणाः त्रयोदशविधं चारित्रं द्वादशविधं तपश्चेति अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु साक्षिकं सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते भवतु। इस पाठका तीनबार उच्चारण करके व्रतों को देवे। नंतर शांति भक्ति का पाठ करे (यहां पर किस हेतुक शांति भक्ति है वह स्पष्ट नही हुआ)

वृहद्दीक्षायां......परमशांत्यर्थं शांति भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

"दण्डक कायोत्सर्ग, थोस्मामि स्तव करे-शांति भक्ति का पाठ करे।

पश्चात्—आशीः श्लोक को पढकर अंजलिके चावलों को दाता को दिला देवे ।

आशीः श्लोकः—

श्रीशांतिरस्तु शिवमस्तु जयोऽस्तु नित्य-
मारोग्यमस्तु तव पुष्टिसमृद्धिरस्तु ॥
कल्याणमस्त्वभिमतस्तव वृद्धिरस्तु
दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनं सदास्तु ॥

अथ षोडश संस्कारारोपणं

(१) अयं सम्यग्दर्शन संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
(२) अयं सम्यग्ज्ञान संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ॥
(३) अयं सम्यक् चारित्र संस्कार इह मुनौ स्फुरतु
(४) अयं बाह्याभ्यंतर तपः संस्कार इह मुनौ स्फुरतु
(५) अयं चतुरंग वीर्य संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
(६) अयं अष्ट मातृ मण्डल संस्कार इह मुनौ स्फुरतु
(७) अयं शुद्ध्यष्टकावष्टम्भ संस्कार इह मुनौ स्फुरतु
(८) अयं अशेष परीषहजय संस्कार इह मुनौ स्फुरतु

(९) अयं त्रियोगासंगमनिवृत्तिशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१०) अयं त्रिकरणासंयमनिवृत्तिसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(११) अयं दशासंयमनिवृत्तिशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१२) अयं चतुः संज्ञा निग्रह शीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१३) अयं पंचेन्द्रियजयशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१४) अयं दशधर्मधारणशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१५) अयं अष्टादशसहस्रशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

(१६) अयं चतुरशीतिलक्षणसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु

इन एक एक मंत्रों का उच्चारण क्रमसे कर मस्तक पर लवंग पुष्प क्षेपण करे । पुनः—

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ परम हंसाय परमेष्ठिने हं स हं स हं हां ह्रूं ह्रौं ह्रीं ह्रें ह्रः जिनाय नमः जिनं स्थापयामि संवौषट् ॥

इस मंत्र को पढ़ कर पुनः पुष्पादि मस्तक पर क्षेपण करे।

नंतर गुर्वावली पढ़कर अमुकके अमुक नामा तुम शिष्य हो। ऐसा कह कर

"अथाद्ये जंबू द्वीपे भरत क्षेत्रे आर्य खण्डे......... देशे......ग्रामे श्रीवीर निर्वाण संवत्सरे २४......मासोत्तममासे......पक्षे......तिथौ......वासरे मूल संघस्थ नंदी संघे सरस्वती गच्छे बलात्कारगणे श्री कुंद कुंदाचार्य परंपरायां आचार्यवर्य श्रीशांतिसागरस्तत्शिष्य आचार्य श्री वीरसागरस्तत्शिष्य आचार्य श्रीशिवसागरोऽहं मे अमुकनामधेयस्त्वं शिष्योऽसि" उपकरणादि प्रदान करे।

ॐ णमो अरहंताणं भो अंतेवासिन्! षड्जीवनिकाय रक्षणाय मार्दवादि गुणोपेतमिदं पिच्छिकोपकरणं गृहाण गृहाण।

यह बोलकर पिच्छी प्रदान करे। शिष्य दोनों हाथों से लेवे।

ॐ णमो अरहंताणं मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवल ज्ञानाय द्वादशांगश्रुताय नमः। भो अंतेवासिन्! इदं ज्ञानोपकरणं गृहाण गृहाण, शास्त्र देवे। शिष्य दोनो हाथों में लेकर मस्तक पर चढ़ावे।

ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्रीकरणांगाय बा-

ह्याभ्यंतरमलशुद्धाय नमः। भो अंतेवासिन्! इदं शौचो-पकरणं गृहाण गृहाण।

गुरु बायें हाथ से उठाकर कमंडलु देवे। (शिष्य भी बायें हाथ से लेवे)

अनंतर समाधि भक्ति करें।

अथ बृहद्दीक्षाक्रियानिष्ठापनायां सिद्धभक्त्यादिकं कृत्वा हीनाधिकदोषशुद्ध्यर्थं समाधि भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

दंडकादि करके—समाधि भक्ति का पाठ करे।

अनंतर नव दीक्षित मुनि गुरु भक्ति पूर्वक गुरुको नमस्कार करके अन्य मुनियों को भी नमस्कार करके बैठे। यावत् व्रतारोपण न होवे तावत्पर्यंत अन्य मुनिजन प्रति-वंदना न करें और दाता आदि प्रमुख जन उत्तम फलों को सन्मुख रख कर नमोऽस्तु कहकर नमस्कार करें।

पश्चाद्—उसी पक्ष में अथवा द्वितीय पक्ष में शुभ मुहूर्त में व्रतारोपण करें। तब रत्नत्रय पूजा कराके पाक्षिक प्रतिक्रमण पाठ पढ़ना चाहिये और पाक्षिक नियम ग्रहण समय के पूर्व ही जब वदसमिदिंदिय इत्यादि पाठ पढा जाता है तब पूर्व के समान ही व्रतादि देवे। अर्थात् जहां वदसमिदिंदिय इत्यादि पढकर प्रायश्चित्त देने का विधान है वहीं पर वदसमिदिंदिय आदि को तीन बार बोलकर

व्रतादि देवे जैसे पूर्व में इस श्लोक को पढकर मूलगुणों का वर्णन करनेके नंतर पंचमहाव्रतपंचसमिती इत्यादि को तीन वार पढ व्रत प्रदान किये थे तद्वत् इस समय भी करे। और नियम ग्रहण के समय पर ही यथायोग्य कोई पल्य विधानादि एकतप (व्रत) भी देवे । तथा दाता प्रमुख श्रावक आदि को भी कोई न कोई एक एक तप (व्रत) देवे । तत्पश्चात् सभी मुनिगण प्रतिवंदना करें ।

अथ मुख शुद्धि मुक्त करण विधिः—

त्रयोदश पांच अथवा तीन कटोरियों में लवंग इलायची—सुपाड़ी—आदि को डालकर वह कटोरियां गुरु के सामने स्थापित करे । और अथ मुखशुद्धिमुक्तकरण पाठ क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भाव-पूजावंदनास्तवसमेतं सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

णमो अरहंताणं इत्यादि दंडक कायोत्सर्ग थोस्सामि स्तव पढे सिद्धो सुद्धत आदि सिद्ध भक्ति का पाठ करे।

अथ मुखशुद्धिमुक्तकरणपाठक्रियायां······योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

पूर्ववंदडकादि करके—योगि भक्ति पढे ।

अथ मुख······आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(दंडकादि करके—आचार्य भक्ति पढे)

अथ मुख शुद्धि···शांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

(दंडकादि करके—शांति भक्ति पढे)।

अथ मुख शुद्धि मुक्त करण पाठ क्रियायां पूर्वा सिद्ध-योगि-आचार्य—शांति भक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिक दोषं शुद्धयर्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं।

(दंडकादि करके—समाधि भक्ति पढे)

पश्चात् मुख शुद्धि ग्रहण करे।

अर्थात् इससे एसा समझ में आता है कि श्रावक जब तक दीक्षित नहीं होता आचमन स्नानादिक से शुद्धि करता रहता है। दीक्षा के अनंतर आचमनादि से होने वाली शुद्धि को ही छोडते हुये (मुक्त करण) ऐसी विधि करता है पुनः उसे मुख शुद्धि (आचमन मंत्रादि के द्वारा व जलादि के द्वारा) करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

इति महाव्रतदीक्षाविधिः

विशेष—यद्यपि सभी भक्तियों में यहां पर कृत्यविज्ञापना का उल्लेख स्पष्ट नहीं है तो भी लोच के स्थान में देने योग्य भक्ति पाठ के पूर्व तत्तज्जन्य विषय विज्ञापना की आज्ञा है अतः सभी में ही कृत्य विज्ञापन प्रयोग दिखाया है।

क्षुल्लक दीक्षा विधिः

अथ लघुदीक्षायां सिद्ध—योगि-शांति—समाधिभक्तीः

पठेत्। ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नमः अनेन मंत्रेण जाप्यं-वार २१ अथवा १०८ दीयते।

अन्यंच्च विस्तरेण लघुदीक्षाविधिः

अथ लघुनेतृजनः पुरुषः स्त्री वा दाता संस्थापयति। यथायोग्यमलंकृतं कृत्वा चैत्यालये समानयेत्, देवं वन्दित्वा सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे च दीक्षां याचयित्वा तदाज्ञया सौभाग्यवतीस्त्रीविहितस्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्रं प्रच्छाद्य तत्र पूर्वाभिमुखः पर्यंकासनो गुरुश्चोत्तराभिमुखः संघाष्टकं संघं च परिपृच्छ्य लोचं ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशकाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्व परकृत क्षुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्वक्षाम डामर विनाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य सर्वशांतिं कुरु २ स्वाहा अनेन मन्त्रेण गंधोदकादिकं त्रिवारं शिरसि निक्षिपेत्। शांतिमंत्रेण गंधोदकं त्रिःपरिषिच्य वामहस्तेन स्पृशेत्। ततो दध्यक्षतगोमयतद्भस्म दूर्वांकुरान् मस्तके वर्धमानमंत्रेण निक्षिपेत्, ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्सेत्यादि वर्धमानमंत्रः पूर्वं कथितः। लोचादिविधिं महाव्रतवद्विधाय सिद्धभक्तिं योगिभक्तिं पठित्वा व्रतं दद्यात्।

दंसणवयेत्यादि वारत्रयं पठित्वा व्याख्यां विधाय गुर्वावलीं पठेत्। ततः संयमाद्युपकरणं दद्यात्।

अर्थात् लोचक्रियामे पूर्ववत् सिद्ध योगिभक्ति को पढ़-कर, मस्तक पर मंत्र पूर्वक गंधोदकादि का सिंचन कर वर्ध-मान मन्त्र से दध्यक्षतादि क्षेपण करे व पवित्रभस्मसे मन्त्र पूर्वक ५ बार लोंच करके लोचनिष्ठापन में सिद्धभक्ति करके क्रिया करे व शिष्य गुरुभक्तिपूर्वक गुरु वंदना कर वस्त्राभरणादि त्यागकर दीक्षा याचना करे पश्चाद् गुरु मस्तक पर श्रीकार लिखकर पूर्ववद् जाप्यादि करके अंजलि भरदेवे। नंतर सिद्धभक्ति योगिभक्ति पूर्वोक्त विधि से करके व्रतप्रदान करे अनंतर—

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्तराइभत्ते य।
बंभारंभपरिग्गहअणुमणमुदिट्ठ देसविरदे दे॥

अरहंतसिद्धआइरियउवज्झायसव्वसाहु सक्खियं सम्मत्त पुव्वगं सुव्वदं दढव्वदं समारोहियं ते भवदु।

श्लोक मात्र को एक बार पढ़कर संक्षिप्त रूप लक्षण समझाकर पुनः "दंसण इत्यादि से ते भवदु" पर्यंत ३ बार पढ़कर व्रत प्रदान करे। नंतर गुर्वावलीको पढ़कर अमुकके तुम अमुक नामा शिष्य हो ऐसा कहकर मन्त्र पूर्वक उपकरण प्रदानकरे। विशेष—महाव्रत दीक्षामें व्रत देनेके बादमें शांति भक्ति का भी विधान है परन्तु यहां पर उल्लेख नहीं है।

ओं णमो अरहंताणं भो क्षुल्लक! (आर्य—ऐलक) क्षुल्लिके वा षट्जीवनिकायरक्षणाय मार्दवादिगुणोपेत-मिदं पिच्छोपकरणं गृहाण इत्यादि पूर्ववत्कमंडलु ज्ञानो-

पकरणादिकं च मन्त्रं पठित्वा दद्यात् । अन्तर केवल 'हे' मे ह अर्थात् क्षुल्लक, ऐलक, अथवा क्षुल्लिके, जो हो उसका संम्बोधन कर पूर्व के मंत्रों को ही बोलकर शास्त्र, कमंडलु प्रदान करें ।

इति लघुदीक्षाविधानं समाप्तम

अथोपाध्यायपददानविधिः

सुमूहूर्ते दाता गणधरवलयार्चनं द्वादशांगश्रुतार्चनं च कारयेत् । ततः श्रीखण्डादिना छटान् दत्वा तन्दुलैः स्वस्तिकं कृत्वा तदुपरि पट्टकं संस्थाप्य तत्र पूर्वाभिमुखं तमुपाध्यायपदयोग्यं मुनिमासयेत् । अथोपाध्यायपदस्थापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेइत्याद्युच्चार्य सिद्ध-श्रुतभक्ती पठेत् । तत आह्वाननादिमंत्रानुच्चार्य शिरसि लवंगपुष्पाक्षतं क्षिपेत् तद्यथा—ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् ! अत्र एहि एहि संवौषट् आह्वाननं स्थापनं सन्निधिकरणं ततश्च ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिने नमः इमं मंत्रं सहेंदुना चन्दनेन शिरसि न्यसेत् । ततश्च शांन्तिसमाधिभक्तीं पठेत् । ततः स उपाध्यायो गुरुभक्तिं दत्वा प्रणम्य दात्रे आशिषं दद्यादिति ।

इत्युपाध्यायपदस्थापनविधिः ।

अथाचार्यपदस्थापनविधिः

सुमुहूर्ते दाता शांतिकं गणधरवलयार्चनं च यथा—

शक्ति कारयेत् । ततः श्रीखंडादिना छटादिकं कृत्वा आचार्यपदयोग्यं मुनिमासयेत् । अथ आचार्यपदप्रतिष्ठापन क्रियायां इत्याद्युच्चार्य सिद्धाचार्यभक्ती पठेत्' । ओ ह्रूं परमसुरभिद्रव्यसन्दर्भपरिमलगर्भतीर्थाम्बुसम्पूर्णसुवर्णकलशपंचकतोयेन परिषेचयामीति स्वाहा इति पठित्वा कलशपंचकतोयेन पादोपरि सेचयेत् ततः पंडिताचार्यो "निर्वेदसौष्ठव इत्यादिमहर्षिस्तवनं पठन् पादौ समंतात्परामृश्य गुणारोपणं कुर्यात्" । ततः 'ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् ! अत्र एहि एहि संवौषट्' आह्वाननं, स्थापनं सन्निधीकरणं च, ततश्च ओं ह्रूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः अनेन मंत्रेण सहेन्दुना चन्दनेन पादयोर्द्वयोस्तिलकं दद्यात् । ततः शान्तिसमाधिभक्ती कृत्वा गुरुभक्त्या गुरुं प्रणम्योपविशति ततः उपासकास्तस्य पादयोरष्टतयीमिष्टिं कुर्वन्ति । यतयश्च गुरुभक्तिं दत्वा प्रणमन्ति । स उपासकेभ्य आशीर्वादं दद्यात् ।

इत्याचार्यपदप्रदानविधिः

ॐ ह्रां ह्रीं श्री अर्हं हं सः आचार्याय नमः आचार्यवाचानमंत्रः अन्यच्च–

ॐ ह्रीं श्री अर्हं हं सः आचार्याय नमः आचार्यमंत्रः।

दीक्षा–नक्षत्राणि

प्रणम्य शिरसा वीरं जिनेन्द्रममलव्रतम्

दीक्षा ऋक्षाणि वर्ज्यन्ते सतां शुभफलाप्तये ।१।
भरण्युत्तरफाल्गुन्यौ मघाचित्राविशाखिका: ।
पूर्वाभाद्रपदा भानि रेवती मुनि-दीक्षणे । २ ।
रोहिणी चोत्तराषाढा उत्तराभाद्रपत्तथा ।
स्वातिः कृत्तिकया सार्धं वर्ज्यंते मुनिदीक्षणे ।३।
अश्विनी-पूर्वाफाल्गुन्यौ हस्तस्वात्यनुराधिका: ।
मूलं तथोत्तराषाढा श्रवण: शतभिषक्तथा । ४ ।
उत्तराभाद्रपच्चापि दशेति विशदाशया:
आर्यिकाणां व्रते योग्यान्युषन्ति शुभहेतव: । ५ ।
भरण्यां कृत्तिकायां च पुष्ये श्लेषार्द्रयोस्तथा ।
पुनर्वसौ च नो दद्यु रार्यिकाव्रतमुत्तमा: ।६।
पूर्वाभाद्रपदा मूलं धनिष्ठा च विशाखिका ।
श्रवणश्चैषु दीक्ष्यन्ते क्षुल्लका: शल्यवर्जिता: ।७।

इति दीक्षानक्षत्रपटलं ।

इति नैमित्तिक क्रिया प्रयोग विधि:

सिद्ध भक्ति (प्राकृत)

अट्ठविहकम्ममुक्के अट्ठगुणड्ढे अणोवमे सिद्धे ।
अट्ठमपुढविणिविट्ठे णिट्ठियकज्जे य वंदिमो णिच्चं ।।१।।
तित्थयरेदरसिद्धे जल थल आयासणिव्वुदे सिद्धे ।
अंतयडेदरसिद्धे उक्कस्सजहण्णमज्झिमोगाहे ।।२।।

उढ्ढमहतिरियलोए छव्विहकाले य णिव्वुदे सिद्धे ।
उवसग्गणिरुवसग्गे दीवोदहिणिव्वुदे य वंदामि ॥३॥
पच्छायडे य सिद्धे दुगतिगचदुणाण पंचचदुरजमे ।
परिवडिदापरिवडदे संजमसम्मत्तणाणमादीहिं ॥४॥
साहरणासाहरणे सम्मुग्घादेदरेय णिव्वादे ।
ठिदपलियंकणिसण्णे विगयमलेपरमणाणगे वन्दे ॥५॥
पुंवेदं वेदंता जे पुरिसा खवगसेढिमारूढा ।
सेसोदयेण वि तहा ज्झाणुवजुत्ता य ते दु सिज्झंति ॥६॥
पत्तेयसयं बुद्धाबोहियबुद्धा य होंति ते सिद्धा ।
पत्तेयं पत्तेयं समये समयं पणिवदामि सदा ॥७॥
पण णव दु अट्ठवीसा चउ तियणवदीय दोण्णि पंचेव ।
बावण्णहीणवियसय पयडिविणासेण होंति ते सिद्धा ॥
अइसयमव्वाबाहं सोक्खमणंतं अणोवमं परमं ।
इन्दियविसयातीदं अप्पत्तं अच्चवं च ते पत्ता ॥६॥
लोयग्गमत्थयत्था चरमसरीरेण ते हु किंचूणा ।
गयसित्थमूसगब्भे जारिस आयार तारिसायारा ॥१०॥
जरमरणजम्मरहिया ते सिद्धा मम सुभत्तिजुत्तस्स ।
देंतु वरणाणलाहं बुहयणपरिपत्थणं परमसुद्धं ॥११॥
किच्चा काउसग्गं चउरट्ठय दोसविरहियं सुपरिसुद्धं ।
अइभत्तिसंपउत्तो जो वंदइ लहु लहइ परमसुहं ॥१२॥

अंचलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमत्थयम्मि पयट्ठिगाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं अतीताणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सया णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

श्रुतभक्ति (प्राकृत)

सिद्धवरसासणाणं सिद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं ।
काऊण णमुक्कारं भत्तीए णमामि अंगाइम् ॥१॥
आयारं सुद्दयडं ठाणं समवाय विहायपण्णत्ती ।
णाणाधम्मकहाओ उवासयाणं च अज्झयणं ॥२॥
वन्दे अंतयडसं अणुत्तरदसं च पण्हवायरणं ।
एयारसमं च तहा विवायसुत्तं णमंसामि ॥३॥
परियम्म सुत्तपढमाणुओय पुव्वगयचूलिया चेव ।
पवरवर दिट्ठिवादं तं पंचविहं पणिवदामि ॥४॥
उप्पाय पुव्वमग्गायणीय विरियत्थिणत्थियपवादं ।
णाणासच्चपवादं आदा कम्मप्पवादं च ॥५॥

पच्चक्खाणं विज्जाणुवाय कल्लाणणाम वरपुव्वं ।
पाणावायं किरियाविसालमथलोयविन्दुसारसुदं ॥६॥

दसचउदस अट्ठट्ठारस बारस तह य दोसु पुव्वेसु ।
सोलसवीसं तीसं दसमम्मिय पण्णरसवत्थू ॥७॥

ऐदेसिं पुव्वाणं जावदियो वत्थुसंगहो भणियो ।
सेसाणं पुव्वाणं दसदसवत्थू पणिवदामि ॥८॥

एक्केक्कम्मि य वत्थू वीसं वीसं च पाहुडा भणिया
विसमसमा वि य वत्थू सव्वे पुण पाहुडेहि समा ॥९॥

पुव्वाणं वत्थुसयं पंचाणवदी हवंति वत्थूओ ।
पाहुड तिण्णिसहस्सा णव य सया चउदसाणंपि ॥

एवमए सुदपवरा भत्तीरायेण संथुया तच्चा ।
सिग्घं मे सुदलाहं जिणवरवसहा पयच्छंतु ॥११॥

अचलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं अंगोवंगपइण्णए पाहुडयपरियम्मसुत्तपढमाणिओगपुव्वगयचूलिया चेव सुत्तत्थयथुइ धम्मकहाइयं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

चारित्र भक्ति (प्राकृत)

तिलोए सव्वजीवाणं हिदं धम्मोवदेसिणं ।
वड्ढमाणं महावीरं वन्दित्ता सव्ववेदिणं ॥१॥
घादिकम्मविघादत्थं घादिकम्मविणासिणा ।
भासियं भव्वजीवाणं चारित्तं पंचभेददो ॥२॥
सामाइयं तु चारित्तं छेदोवट्ठावणं तहा ।
तं परिहारविसुद्धिं च संजमं सुहुमं पुणो ॥३॥
जहाखादं तु चारित्तं तहाखादं तु तं पुणो ।
किच्चाहं पंचहाचारं मंगलं मलसोहणं ॥४॥
अहिंसादीणि उत्ताणि महव्वयाणि पंच य ।
समिदीओ तदो पंच पंच इन्दियणिग्गहो ॥५॥
छब्भेयावास भूसिज्जा अण्हाणत्तमचेलदा ।
लोयत्तं ठिदिभुत्तिं च अदंतधावणमेव य ॥६॥
एयभत्तेण संजुत्ता रिसि मूलगुणा तहा ।
दसधम्मा तिगुत्तीओ सीलाणि सयलाणि च ॥७॥
सव्वेवि य परीसहा उत्तुत्तरगुणा तहा ।
अण्णे वि भासिया संता तेसिं हाणि मए कया ॥८॥
जइ रायेण दोसेण मोहेणाणादरेण वा ।
वन्दिता सव्वसिद्धाणं संजदा सा मुमुक्खुणा ॥९॥
संजदेण मए सम्मं सव्वसंजमभाविणा ।
सव्वसंजमसिद्धीओ लब्भदे मुत्तिजं सुहं ॥१०॥

अंचलिका

इच्छामि भंते ! चारित्तभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहारस्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समया इव पवेसयस्स सम्मचारित्तस्स सया अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

योगि भक्ति (प्राकृत)

थोस्सामि गुणधराणं अणयाराणं गुणेहि तच्चेहिं ।
अंजलिमउलियहत्थो अभिवन्दंतो सविभवेण ॥१॥
सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहेव बोधव्वा ।
चइऊण मिच्छभावे सम्मम्मि उवट्ठिदे वन्दे ॥२॥
दोदोसविप्पमुक्के तिदंडविरद तिसल्लपरिसुद्दे ।
तिण्णियगारवरहिये तियरणसुद्दे णमंसामि ॥३॥
चउविहकसायमहणे चउगयसंसारगमणभयभीए ।
पंचासवपडिविरदे पंचेंदियणिज्जिदे वन्दे ॥४॥
छज्जीवदयावण्णे छडायदणविवज्जिदे समिदभावे ।
सत्त भयविप्पमुक्के सत्ताण सिवंकरे वन्दे ॥५॥

णट्ठट्ठमयट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठणट्ठ संसारे
परमट्ठणिट्ठियट्ठे अट्ठगुणड्ढीसरे वन्दे ॥६॥
णवबंभचेरगुत्ते णवणयसब्भावजाणगे वन्दे ।
दहविहधम्मट्ठाई दससंजमसंजदे वन्दे ॥७॥
एयारसंगसुदसायरपारगे वारसंगसुदणिउणे ।
वारसविहतवणिरदे तेरसकिरियादरे वन्दे ॥८॥
भूदेसु दयावण्णे चउदस चउदससुगंधपरिसुद्धे ।
चउदसपुव्वयगब्भे चउदसमलविवज्जिदे वन्दे ॥६।
वन्दे चउत्थभत्तादिजावछम्मासखवणपडिवण्णे ।
वन्दे आदावन्ते सूरस्स य अहिमुहट्ठिदे सूरे ॥१०॥
बहुविहपडिमट्ठाई णिसिज्जवीरासणेक्कवासीय ।
अणिट्ठीवकंडुवदीवे चत्तदेहे य वन्दामि ॥११॥
ठाणी मोणवदीगे अब्भोवासीय रुक्खमूलीय ।
धुवकेसमंसुलोमे णिप्पडियम्मे य वन्दामि ॥१२॥
जल्लमल्ललित्तगत्ते वन्दे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे ।
दीहणहमंसुलोमे तवसिरिभरिये णमंसामि ॥१३॥
णाणोदयाहिसित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगंधे ।
ववगयरायसुदड्ढे सिवगइपहणायगे वन्दे ॥१४॥
उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे य घोरतवे ।
वन्दामि तवमहन्ते तवसंजमइड्ढिसंजुत्ते ॥१५॥
आमोसहिये खेलोसहिये जल्लोसहिये तवसिद्धे ।

विप्पोसहीये सव्वोसहीये वन्दामि तिविहेण ॥१६॥
अमयमहुखीरसप्पिसवीयअक्खिणमहाणसे वन्दे ।
मणवलिवचणवलिकायवलिणो य वन्दामि तिविहेण
वरकुट्ठवीयबुद्धी पदाणुसारीय भिण्णसोदारं ।
उग्गहईहसमत्थे सुत्तत्थविसारदे वन्दे ॥१८॥
आभिणिवोहियसुदओहिणाणिमणणाणिसव्वणाणीय
वन्दे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीये ॥१६॥
आयासतंतुजलसेढिचारणे जङ्घचारणे वन्दे ।
विउवणइड्ढिपहाणे विज्जाहरपण्णसवणे य ॥२०॥
गइचउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वन्दे ।
अणुवमतवमहन्ते देवासुरवन्दिदे वन्दे ॥२१॥
जियभय जियउवसग्गे जियइंदियपरीसहे जियकसाए
जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमंसामि ॥२२॥
एवं मयेभित्थुया अणयारा रायदोसपरिसुद्धा ।
संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥२३॥

अंचलिका—आलोचना

इच्छामि भंते योगिभत्ति काउस्सग्गो कओतस्स आलोचेउं अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारसकम्मभूमिसु आदावणरुक्खमूलअब्भोवासठाणमोणविरासणेक्कपासकुक्कुडासण चउत्थपक्खखवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं

णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि वन्दामि, णमंसामि, दुक्ख-क्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

प्राकृत-निर्वाणभक्तिः।

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ २ ॥
सत्तेव य बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ ३ ॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ ४ ॥
णेमिसामी पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो।
बाहत्तरकोडीओ उज्जन्ते सत्तसया वंदे ॥ ५ ॥
रामसुआ बिण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ।
पावाए गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ ६ ॥
पंडुसुआ तिण्णि जणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
सित्तुंजे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ ७ ॥
रामहणूसुग्गीवो गवय गवक्खो य णील महणीलो।
णवणवदी कोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥

अंगाणंग कुमारा विक्खापंचद्धकोडिरिसि सहिया ।
सुवण्णगिरिमत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ ९ ॥
दहमुहरायस्स सुआ कोडी पंचद्धमुणिवरें सहिया ।
रेवा उहयम्मि तीरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १० ॥
रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूटे ।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥ ११ ॥
वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ।
इंदजिय कुंभयण्णो णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १२ ॥
पावागिरिवर सिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १३ ॥
फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे ।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १४॥
णायकुमार मुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया ।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १५ ॥
अच्चलपुरवरणयरे ईसाणभाए मेढगिरिसिहरे ।
आहुट्ठय कोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १६ ॥
वंसत्थलम्मि नयरे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे ।
कुलदेसभूषणमुणी णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १७ ॥
जसहररायस्स सुआ पंचसया कलिंगदेसम्मि ।
कोडिसिलाए कोडिमुणी णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१८॥
पासस्स समवसरणे गुरुदत्तवरदत्त पंचरिसि पमुहा ।

गिरिसिंदे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १९ ॥
जे जिणु जित्थु तत्था जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं तियरणसुद्धो णमंसामि ॥ २० ॥
सेसाणं तु रिसीणं णिव्वाणं जम्मि- जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वंदे सव्वे दुक्खक्खय कारणट्ठाए ॥ २१ ॥
पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारम्भे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥ १ ॥
बाहूबलि तह वंदमि पोदनपुर हत्थिनापुरे वंदे ।
संती कुंथुव अरिहो वाराणसीए सुपास पासं च ॥ २ ॥
महुराए अहिछित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जंबुमुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तोवि जंबुवणगहणे ॥ ३ ॥
पंचकल्लाण ठाणइ जाणिवि संजादमच्चलोयम्मि ।
मणवयणकायसुद्धो सव्वे सिरसा णमंसामि ॥ ४ ॥
अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवणकुंडली वंदे ।
पासं सिरिपुरि वंदमि लोहागिरिसंखदीवम्मि ॥ ५ ॥
गोम्मटदेवं वंदमि पंचसयं धणुहउच्चं तं ।
देवा कुणंति वुट्ठी केसर कुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥ ६
णिव्वाणठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसये सहिया ।
संजाद मिच्चलोए सव्वे सिरसा णमंसामि ॥ ७ ॥
जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णरसुर सुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ॥ ८ ॥

अंचलिका:—

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भाए आहुट्ठ मासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदो महदिमहावीरो वड्ढ-माणो सिद्धिं गदो, तिसुवि लोएसु भवण वासियवाणविंतर-जोयिसियकप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति, पूजंति वंदंति, णमंसंति, परिणिव्वाणमहाकल्लाण पुज्जं करंति अहमवि इह सन्तो तत्थ संताइं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

ईर्यापथ शुद्धि (दर्शनस्तोत्र)

निःसंगोहं जिनानां सदनमनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या
स्थित्वा गत्वा निषद्योच्चरणपरिणतोऽन्तःशनैर्हस्तयुग्मं ॥
भाले संस्थाप्य बुद्धया मम दुरितहरं कीर्तये शक्रवन्द्यं ।
निंदादूरं सदाप्तं क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम् ।१।

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनंतकल्पं
स्वायंभुवं सकलमंगलमादितीर्थं ।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानां,
त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥ २ ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जैनशासनं ॥ ३ ॥
श्रीमुखालोकनादेव श्रीमुखालोकनं भवेत् ।
आलोकनविहीनस्य तत्सुखावाप्तयः कुतः ॥ ४ ॥
अद्याभवत् सफलता नयन द्वयस्य,
देव ! त्वदीयचरणांबुजवीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक ! प्रतिभासते मे,
संसारवारिधिरयं चुलुकप्रमाणं ॥ ५ ॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते,
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥६॥

नमो नमः सत्त्वहितंकराय, वीराय भव्यांबुज--भास्कराय ।
अनंतलोकाय सुरार्चिताय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ।७।

नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय, विनष्टदोषाय गुणार्णवाय
विमुक्तमार्ग प्रतिबोधनाय देवाधिदेवाय नमो जिनाय ।८।

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !
सर्वज्ञ ! तीर्थंकर सिद्ध महानुभाव !
त्रैलोक्यनाथ ! जिनपुंगव ! वर्धमान
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरणद्वयं ते ।। ९ ।।

जितमदहर्षद्वेषा जितमोहपरीषहा जितकषायाः ।
जितजन्ममरणरोगा जितमात्सर्या जयंतु जिनाः ।।१०।।

जयतु जिनवर्धमानस्त्रिभुवनहितधर्मचक्रनीरजबंधुः ।
त्रिदशपतिमुकुटभासुरचूडामणिरश्मिरंजितारुणचरणः ।।

जय जय जय त्रैलोक्यकाण्डशोभिशिखामणे !
नुद नुद नुद स्वांतध्वांतं जगत्कमलार्क नः ।।
नय नय नय स्वामिन् शांतिं नितांतमनन्तिमा
नहि नहि नहि त्राता लोकैकमित्र भवत्परः ।। १२।।

चित्ते मुखे शिरसि पाणिपयोजयुग्मे,
भक्ति स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति ।
यश्चर्करीति तव देव ! स एव धन्यः ।। १३ ।।

जन्मान्मार्ग्य भजतु भवतः पादपद्मं न लभ्यं,
तच्चेत्स्वैरं चरत न च दुर्देवनां सेवतां मः ।।

अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्ते
क्षुद्व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षुः ॥१४॥
रूपं ते निरुपाधि सुन्दरमिदं पश्यन् सहस्रेक्षणः
प्रेक्षाकौतुककारि कोत्र भगवन्नोपेत्यवस्थांतरं ।
वाणीं गद्गदयन् वपुः पुलकयन् नेत्रद्वयं स्रावयन् ।
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकलयंश्चेतोपि निर्वापयन् ॥ १५ ॥
त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति त्राता त्रिलोक्या इति ।
श्रेयःसूतिरिति श्रियां निधिरिति श्रेष्ठः सुराणामिति ॥
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्यमगतिस्त्वां तत्त्यजोपेक्षणं ।
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन ! किं विज्ञापितैर्गोपितैः ॥१६॥
त्रिलोकराजेन्द्रकिरीटकोटि–
प्रभाभिरालीढपदारविंदं ।
निर्मूलमुन्मूलितकर्मवृक्षं–
जिनेन्द्रचन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ॥ १७ ॥
करचरणतनुविघातादटतो निहतः प्रमादतः प्राणी !
ईर्यापथमिति भीत्या मुञ्चे तद्दोषहान्यर्थं ॥
ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा–
देकेन्द्रियप्रमुखजीवनिकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगांतरेक्षा–
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ।

इति स्तोत्रम्

चारित्र भक्तिकी अंचलिका

इच्छामि भंते ! चारित्तभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं । सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्व-पहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहार-स्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजु-त्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समया इव पवेसयस्स सम्म-चारित्तस्स सया णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमं-सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

समाधिभक्तिः

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा ।
पश्यन् पश्यामि देव त्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥१॥
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः ।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे ।
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥
जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।
निष्कलंक विमलोक्तिभावनाः संभवं तु मम जन्मजन्मनि ॥
गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवार्धिसद्घोषे ।
मम भवतु जन्मजन्मनि सन्न्यासनसमन्वितं मरणं ॥४॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमार्जितम्।
जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवंदनात् ॥ ५ ॥
आबाल्याज्जिनदेवदेव ! भवतः श्रीपादयोः सेवया।
सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे।
त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ॥६॥
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥७॥
एकापि समर्थेयं जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुं।
पुण्यानि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ॥
पंच अरिंजयणामे पंच य मदिसायरे जिणे वन्दे।
पंच जसोयरणामे पंचम्मिय मंदरे वंदे ॥९॥
रयणत्तयं च वन्दे चव्वीसजिणे च सव्वदा वन्दे।
पंचगुरूणां वन्दे चारणचरणं सदा वन्दे ॥१०॥
अर्हमित्यक्षरब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणिदध्महे ॥११ :
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनं।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥१२॥
आकृष्टिं सुरसंपदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यता—
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम्।

स्तंभं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य संम्मोहनम् ।
पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधनादेवता ॥१३॥
अनंतानंतसंसारसंततिच्छेदकारणं ।
जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥१४॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥१५॥
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १७ ॥
याचेहं याचेऽहं जिन तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् ।
याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥
विघ्नौघाः प्रलयं यांति शाकिनी–भूत–पन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥ १९ ॥

अंचलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । रयणत्तयसरूवपरमप्पज्झाणलक्खणसमाहिभत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

इति समाधि भक्तिः

अथ कल्याणालोचना (संस्कृत छाया)

परमात्मानं वर्द्धितमतिं परमेष्ठिनं करोमि नमस्कारं
स्वकपरसिद्धिनिमित्तं कल्याणालोचनां वक्ष्ये ॥१॥
रे जीव अनंतभवे संसारे संसरता बहुवारं।
प्राप्तो न बोधिलाभः मिथ्यात्वविजृंभितप्रकृतिभिः ॥
संसारभ्रमणगमनं कुर्वन् आराधितो न जिनधर्मः।
तेन विना वरं दुःखं प्राप्तोऽसि अनंतवारम् ॥ ३ ॥
संसारे निवसन् अनंतमरणानि प्राप्तोऽसि त्वं।
केवलिना विना तेषां संख्यापर्याप्तिर्न भवति ॥४॥
त्रीणि शतानि षट्त्रिंशानि षट्षष्टिसहस्रवारमरणानि।
अंतर्मुहूर्तमध्ये प्राप्तोऽसि निगोदमध्ये ॥५॥
विकलेन्द्रिये अशीति षष्टिः चत्वारिंशत् एव जानीहि।
पंचेन्द्रिये चतुर्विंशति क्षुद्रभवान् अंतर्मुहूर्ते ॥६॥
अन्योन्यं क्रुध्यंतो जीवा प्राप्नुवंति दारुणं दुःखं।
न खलु तेषां पर्याप्तीः कथं प्राप्नोति धर्ममतिशून्यः ॥७॥
माता पिता कुटुम्बः स्वजनजनः कोपि नायाति सह।
एकाकी भ्रमति सदा न हि द्वितीयोऽस्ति संसारे ॥८॥
आयुःक्षयेपि प्राप्ते न समर्थः कोपि आयुर्दाने च।
देवेन्द्रो न नरेन्द्रो मण्यौषधमंत्रजालानि ॥९॥
संप्रति जिनवरधर्मं लब्धोऽसि त्वं विशुद्धयोगेन।

नो पूजा जिनचरणे न पात्रदानं न चेर्यागमनम्।
न कृता न भाविता मया मिथ्या मे दुष्कृतं भवतु ॥२१॥
बह्वारंभपरिग्रह सावद्यानि बहूनि प्रमाददोषेण।
जीवा विराधिताः खलु मिथ्या मे दुष्कृतं भवतु॥ २२ ॥
सप्ततिशतक्षेत्रभवाः अतीतानागतवर्तमानजिनाः।
ये ये विराधिताः खलु मिथ्या मे दुष्कृतं भवतु।२३।
अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायाः साधवः पंचपरमेष्ठिनः।
ये ये विराधिताः······ ॥२४॥
जिनवचनं धर्मः चैत्यं जिनप्रतिमा कृत्रिमा अकृत्रिमाः।
ये ये विराधिताः······ ॥२५॥
दर्शनज्ञानचारित्रे दोषा अष्टाष्टपंचभेदाः।
ये ये ······ ॥२६॥
मतिः श्रुतः अवधिः मनःपर्ययः तथा केवलं च पंचकं।
ये ये······ ॥ २७ ॥
आचारांगादीन्यङ्गानि पूर्वप्रकीर्णकानि जिनैः प्रणीतानि।
ये ये······ ॥ २८ ॥
पंचमहाव्रतयुक्ता अष्टादशसहस्रशीलकृतशोभाः।
ये ये······ ॥ २९ ॥
लोके पितृसमाना ऋद्धिप्रपन्ना महागणपतयः।
ये ये ······ ॥ ३० ॥
निर्ग्रन्था आर्यिकाः श्रावकाः श्राविकाश्च चतुर्विधः संघः।

ये ये ······ ॥३१॥

देवा असुरा मनुष्या नारकाः तिर्यग्योनिगतजीवाः ।

ये ये······ ॥ ३२ ॥

क्रोधो मानो माया लोभः एते रागद्वेषाः ।

अज्ञानेन येऽपि कृता मिथ्या मे दुष्कृतं भवतु ॥ ३३ ॥

परवस्त्रं परमहिला प्रमादयोगेनार्जितं पापं ।

अन्येऽपि अकरणीया मिथ्या मे दुष्कृतं भवतु ॥३४॥

एकः स्वभावसिद्धः स आत्मा विकल्पपरिमुक्तः ।

अन्यो न मम शरणं शरणं स एकः परमात्मा ॥३५॥

अरसः अरूपः अगंधोऽव्याबाधोनंतज्ञानमयः ।

अन्यो न मम शरणं······ ॥ ३६ ॥

ज्ञेयप्रमाणं ज्ञानं समयेन एकेन भवति स्वस्वभावे ।

अन्यो····· ॥ ३७ ॥

एकानेकविकल्पप्रसाधने स्वकस्वभावशुद्धगतिः ।

अन्यो··· ॥ ३८ ॥

देहप्रमाणो नित्यो लोकप्रमाणोऽपि धर्मतो भवतु ।

अन्यो······ ॥ ३९ ॥

केवलदर्शनज्ञाने समयेनैकेन द्वावुपयोगौ ।

अन्यो न मम··· ॥ ४० ॥

स्वकरूपसहजसिद्धो विभावगुणमुक्तकर्मव्यापारः ।

अन्यो··· ॥ ४१ ॥

शून्यो नैवाशून्यो नोकर्मकर्मवर्जितो ज्ञानं ।
अन्यो··· ॥ ४२ ॥

ज्ञानतो यो न भिन्नः विकल्पभिन्नः स्वभावसुखमयः
अन्यो न··· ॥ ४३ ॥

अच्छिन्नोऽवछिन्नः प्रमेयरूपत्वमगुरुलघुत्वं चैव ।
अन्यो न मम············ ॥ ४४ ॥

शुभाशुभभावविगतः शुद्धस्वभावेन तन्मयं प्राप्तः ।
अन्यो न······ ॥ ४५ ॥

न स्त्री न नपुंसको न पुमान् नैव पुण्यपापमयः ।
अन्यो ··· ४६ ॥

तव को न भवति स्वजनः त्वं कस्य न बंधुः स्वजनो वा ।
आत्मा भवेत् आत्मा एकाकी ज्ञायकः शुद्धः ॥ ४७ ॥

जिनदेवो भवतु सदा मतिः सुजिनशासने सदा भवतु ।
संन्यासेन च मरणं भवे भवे मम संपत् ॥ ४८ ॥

जिनो देवो जिनो देवो जिनो देवो जिनो जिनः ।
दयाधर्मो दयाधर्मो दयाधर्मो दया सदा ॥ ४९ ॥

महासाधवो महासाधवो महासाधवो दिगम्बराः ।
एवं तत्त्वं सदा भवतु यावन्न मुक्तिसंगमः ॥ ५० ॥

एवमेव गतः कालोऽनंतो दुःखसंगमे ।
जिनोपदिष्टसंन्यासे न [illegible] कृता ॥ ५१ ॥

संप्रति एव संप्राप्ताऽऽराधना जिनदेशिना ।

का का न जायते मम सिद्धिसंदोहसंपत्तिः ॥ ५२ ॥
अहो धर्मः अहो धर्मः अहो मे लब्धिर्निर्मला ।
संजाता सम्प्रति सारा येन सुखं अनुपमं ॥ ५३ ॥
एवमाराधयन् आलोचनावंदनाप्रतिक्रमणानि ।
प्राप्नोति फलं च तेषां निर्दिष्टमजितब्रह्मणा ॥ ५४ ॥

अथ सर्वदोषप्रायश्चित्तविधिः

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसात्रयस्त्रिंशदत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं अहिंसामहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।२। ॐ ह्रीं अर्हं सत्यमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं अचौर्यमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मचर्यमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।५। ॐ ह्रीं अर्हं अपरिग्रहमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥६ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं ईर्यासमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥७॥ ॐ ह्रीं अर्हं भाषासमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥८॥ ॐ ह्रीं अर्हं एषणासमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥९॥ ॐ ह्रीं अर्हं आदाननिक्षेपणसमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥१०॥ ॐ ह्रीं अर्हं उत्सर्गस-

मतेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ११ ॐ ह्रीं अर्हं मनोगुप्तेरत्यासादनात्यागायनुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः १२ ॐ ह्रीं अर्हं वचोगुप्तेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ॥१३॥ ॐ ह्रीं अर्हं कायगुप्तेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः १४ ॐ ह्रीं अर्हं जीवास्तिकायिकस्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ॥१५॥ ॐ ह्रीं अर्हं पुद्गलास्तिकायस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ।१६ ॐ ह्रीं अर्हं धर्मास्तिकायस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः १७ ॐ ह्रीं अर्हं अधर्मास्तिकायस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥१८॥ ॐ ह्री अर्हं आकाशास्तिकायस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥१६॥ ॐ ह्रीं अर्हं पृथिवीकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः २० ॐ ह्रीं अर्हं अप्कायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ॥२१॥ ॐ ह्रीं अर्हं तैजसकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधोद्योतनाय नमः ॥२२॥ ॐ ह्रीं अर्हं वायुकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ॐ ह्रीं अर्हं वनस्पतिकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२४॥ ॐ ह्रीं अर्हं त्रसकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोपधो-

द्योतनाय नमः । ॐ ह्रीं अर्हं जीवपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।२६। ॐ ह्रीं अर्हं अजीवपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः २७ ॐ ह्रीं अर्हं आस्रवपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२८।। ॐ ह्रीं अर्हं बंधपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।२९। ॐ ह्रीं अर्हं संवरपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३०।। ॐ ह्रीं अर्हं निर्जरापदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः । ३१ । ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३२। ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३३।। ॐ ह्रीं अर्हं पापपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३४।। ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्दर्शनाय नमः ।३५। ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्ज्ञानाय नमः ।।३६।। ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्चारित्राय नमः ।

इति सर्वदोषप्रायश्चित्त विधिः

अथ चतुर्दिग्वन्दना

प्राग्दिग्विदिगन्तरे केवलिजिनसिद्ध साधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धिसमृद्धा योगिगणास्तानऽहं वन्दे ।। १ ।।
दक्षिण दिग्विदिगन्तरे केवलिजिनसिद्धसाधुगणदेवाः ।

ये सर्वर्द्धिसमृद्धा योगिगणास्तानऽहं वन्दे ।। २ ।।
पश्चिमदिग्विदिगन्तरे केवलिजिनसिद्धसाधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धिसमृद्धा योगिगणास्तानऽहं वन्दे ।। ३ ।।
उत्तरदिग्विदिगन्तरे केवलिजिनसिद्ध साधुगणदेवाः ।
ये सर्वर्द्धिसमृद्धा योगिगणास्तानऽहं वन्दे ।। ४ ।।

इति चतुर्दिग्वंदना

सामायिक विधि का स्पष्टीकरण

त्रैकालिक देव वन्दना ही त्रैकालिक सामायिक नामसे आगममें कही गई है उसकी विधि बताते हैं । यथा

त्रिसंध्यं वन्दने युंज्याच्चैत्य—पंचगुरुस्तुती ।
प्रियभक्तिं वृहद्भक्तिष्वंते दोषविशुद्धये । १२ ।

अनागार०

अर्थ—तीनों संध्या सम्बन्धीं जिन वन्दना में चैत्यभक्ति और पंचगुरुभक्ति तथा वृहद्भक्ति के अन्त में हीनाधिक पाठ की शुद्धि के लिये प्रियभक्ति अर्थात् समाधिभक्ति करें। इस वन्दना में छह प्रकार का कृति कर्म होता है । यथा—

स्वाधीनता परीति स्त्रयीनिषद्या त्रिवारमावर्ताः
द्वादश चत्वारि शिरांस्येवं कृतिकर्म षोढेष्टम्

उक्तं च–वेदनाखण्डस्य सिद्धांत सूत्र–

आदाहीणं, पदाहीणं तिखुत्तं, तिऊणदं,
चदुस्सिरं, वारसावत्तं चेदि।

अर्थ–वन्दना करने वाले की स्वाधीनता (१) तीन प्रदक्षिणा (२) तीन निषद्या अर्थात् ईर्यापथ कायोत्सर्ग के अनन्तर बैठकर आलोचना करना और चैत्यभक्ति संबन्धी क्रिया विज्ञापना करना यह एक निषद्या (बैठना) हुई। चैत्यभक्ति के अन्त में बैठकर अञ्चलिका करना व पंच-गुरुभक्ति सम्बंधी क्रिया विज्ञापना करनी ये दो निषद्या हुई। पुनः पंचगुरुभक्ति के अंत में बैठकर अञ्चलिका करनी ये तीन निषद्या होती है। (३) चैत्यभक्ति पंच-गुरुभक्ति व समाधिभक्ति सम्बन्धी तीन कायोत्सर्ग (४) बारह आवर्त (५) और चार शिरोनति (६) यह छह कृतिकर्म है।

अथ कृति कर्म प्रयोग विधि।

योग्यकालासनस्थानमुद्रावर्तशिरोनतिः।
विनयेन यथाजातः कृतिकर्मामलं भजेत् ७८

अनागार०

अर्थ–योग्य काल, योग्य आसन, योग्य स्थान, योग्य मुद्रा, योग्य आवर्त, और योग्य शिर और योग्य नति ये

कृतिकर्म है यथाजात मुद्रा के धारी साधुजन विनय पूर्वक बत्तीस दोषों से रहित इनका प्रयोग करें।

योग्य काल, पूर्वाह्न काल, मध्याह्न काल, अपराह्न काल हैं, योग्य अनुकूल आसन जिन पर बैठकर वन्दना करे तथा प्रदेश प्रासुक वन भवन, चैत्यालय पर्वत की गुफा आदि में योग्य पद्मासन वीरासनादिसे वन्दना करे, इनका विशेष स्पष्टीकरण अनगार धर्मामृत से समझ लेना चाहिये। बन्दनायोग्य मुद्रा चार प्रकार की मानी गई हैं। जिनमुद्रा, योगमुद्रा, वन्दना मुद्रा, और मुक्ताशुक्ति मुद्रा। इन चारों मुद्राओं का लक्षण इस प्रकार है।

कायोत्सर्ग स्थिति रूप मुद्रा जिन मुद्रा है। दोनों पैरों में चार अंगुल प्रमाण अन्तर रखकर दोनों भुजाओं को सीधे लटका कर खड़े होने को जिन–मुद्रा कहते हैं।

पद्मासन, वीरासन, पर्यंकासन इन तीनों आसनों की गोद में नाभि के समीप दोनों हाथोंकी हथेलियों को चित रखने को योग–मुद्रा कहते हैं।

दोनों हाथों को मुकुलित कर और उनकी कुहनियों को उदर पर रखकर खड़े होने को वंदना मुद्रा कहते हैं तथा दोनों हाथों की अंगुलिओं को मिलाकर दोनों कुहनिओ को उदर पर रखकर खड़े होने को मुक्ताशुक्ति

मुद्रा कहते हैं।

किस मुद्राका कहां प्रयोग करना ?

स्वमुद्रा बन्दने, मुक्ताशुक्तिः सामायिकस्तवे
योगमुद्रास्थयास्थित्यां जिनमुद्रा तनूज्झने ॥

अनागार०

अर्थ—"जयति भगवान्" इत्यादि चैत्य वन्दना करते समय बन्दना मुद्रा का प्रयोग करे "णमो अरहन्ताणं" इत्यादि सामायिक दण्डकके समय और थोस्सामि······ इत्यादि चतुर्विंशति स्तव दण्डक के समय मुक्ताशुक्ति मुद्रा का प्रयोग करे। बैठकर कायोत्सर्ग करते समय यो मुद्रा का प्रयोग करे और खडे होकर कायोत्सर्ग करते समय जिन मुद्रा का प्रयोग करना चाहिये।

तीन तीन आवर्त के प्रति भक्तिपूर्वक शिर झुकाने को शिर कहते हैं। तथा चैत्य भक्त्यादि के करते समय हर एक प्रदक्षिणामें तीन तीन आवर्त व १-१ शिरोनति करना चाहिये।

दीयते चैत्य-निर्वाण-योगि-नन्दीश्वरेषु हि।
वन्दमानेष्वधीयानैस्तत्तद्भक्तिं प्रदक्षिणा ।९२।

अर्थ—चैत्यवन्दना करते समय चैत्यभक्ति का पाठ करते हुये उसी प्रकार निर्वाण वन्दना में निर्वाणभक्ति

का पाठ करते हुये, योगि बन्दना में योगिभक्ति का पाठ करते हुये व नंदीश्वर चैत्य बन्दना में नन्दीश्वर भक्ति का पाठ करते हुये साधुओं को तीन तीन प्रदक्षिणा करनी चाहिये ।

त्रिकाल सामायिक व त्रिकाल देव बन्दना क्या एक ही है इस पर प्रमाण———आचारसारे

स यः स्वार्थनिवृत्यात्मनेन्द्रियाणामयोऽयनम् ।
समयः सामायिकं नाम स एव समताह्वयम् ॥२०॥
समस्यारागरोषस्य सर्ववस्तुष्वयोऽयनम् ।
समायः स्यात्स एवोक्तं सामायिकमिति श्रुते ॥२१॥
समतोपेतचित्तो यः स तत्परिणताह्वयः ।
प्रकृतोऽत्रायमन्यासु क्रियास्वेवं निरूपयेत् ॥२२॥
सर्वव्यासंगनिर्मुक्तः संशुद्धकरणत्रयः ।
धौतहस्तपदद्वंद्वः परमानन्दमन्दिरं ॥२३॥
चैत्यचैत्यालयादीनां स्तवनादौ कृतोद्यमाः ।
भवेदनंतसंसारसंतानोच्छित्तये यतिः ॥२४॥
यथा निश्चेतनाश्चिंतामणिकल्पमहीरुहाः ।
कृतपुण्यानुसारेण तदभीष्टफलप्रदाः ॥२५॥
तथार्हदादयश्चास्तरागद्वेषप्रवृत्तयः ।
भक्तभक्त्यनुसारेण स्वर्गमोक्षफलप्रदाः ॥२६॥
······मत्वेति जिनगेहादिं त्रिः परीत्य कृतांजुलिः

प्रकुर्वंस्तच्चतुर्दिक्षु सत्र्यावर्ता शिरोनतिं ॥३०॥
घोरसंसारगम्भीरवारिराशौ निमज्जताम् ।
दत्तहस्तावलंबस्य जिनस्यार्चार्थमाविशेत् ॥३१॥
जिनेशतारकाधीशपादसंपादितोत्सवः ।
श्रीलीलामन्दिरस्वीयलोचनेंदीवरः पुनः ॥३२॥
ईर्यागः शुद्ध्यै व्युत्सर्गं कृत्वासीनोनुकंपया ।
आलोच्य समतां वग्य कुर्यादात्मेच्छयान्यदा ॥३३॥
लक्षणं समतादीनां पुरोक्तं किन्तु वर्ण्यते ।
व्युत्सर्गावसरोच्छ्वास–संख्या–नामादि सांप्रतं ॥३४॥
क्रियायामस्यां व्युत्सर्गं भक्तेरस्याः करोम्यहं ।
विज्ञाप्येति समुत्थाय गुरुस्तवनपूर्वकम् ॥३५॥
कृत्वा करसरोजातमुकुलालंकृतं निजं ।
भाललीलासरः कुर्यात् त्र्यावर्तां शिरसो नतिं ॥३६॥
आद्यस्य दण्डकस्यादौ मंगलादेरयं क्रमः ।
तदन्तोऽप्यंगव्युत्सर्गः कार्योतिस्तदनन्तरम् ॥३७॥
कुर्यात्तथैव "थोस्सामी" त्याद्यार्याद्यन्तयोरपि ।
इत्यस्मिन् द्वादशावर्ताः शिरोनतिचतुष्टयम् ॥३८॥
......देवता बन्दने भक्ती चैत्य पंचगुरूभयोः ।
चतुर्दश्यां तयोर्मध्ये श्रुतभक्तिर्विधीयते ॥

इन श्लोकों का अर्थ लिखने से पुस्तक बहुत मोटी

हो जायगी अतः सारांश इतना ही है कि छह कृति कर्म पूर्वक चैत्य पंचगुरु भक्ति करना ही सामायिक है।

तथा भाव संग्रह में तीसरी प्रतिमा का लक्षण करते हुए—

चतुस्त्र्यावर्तसंयुक्तश्चतुर्नमस्क्रिया सह।
द्विनिषिद्यो यथाजातो मनोवाक्कायशुद्धिमान् ॥ ५३२ ॥
चैत्यभक्त्यादिभिः स्तूयाज्जिनं संध्यात्रयेऽपि च।
कालातिक्रमणं मुक्त्वा स स्यात्सामायिकव्रती ॥५३३॥

चारित्रसारे च—

परायत्तस्य सतः क्रियां कुर्वाणस्य कर्मक्षयो न घटते। तस्मादात्माधीनः सन् चैत्यादीन् प्रति वंदनार्थं गत्वा धौतपादस्त्रिप्रदक्षिणीकृत्य ईर्यापथकायोत्सर्गं कृत्वा प्रथममुपविश्यालोच्य चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमीति विज्ञाप्य उत्थाय जिनचन्द्रदर्शनमात्रान्निजनयनचन्द्रकांतोपलविगलदानंदाश्रुजलधारापूरपरिप्लावितपक्ष्मपुटोऽनादिभवदुर्लभभगवदर्हत्परमेश्वरपरमभट्टारकप्रतिबिंब दर्शनजनित हर्षोत्कर्षपुलकिततनुभक्तिरतिभक्तिभरावनत—मस्तक——न्यस्तहस्तकुशेशयकुड्मलो दण्डकद्वयस्यादावंते च प्राक्तनक्रमेण प्रवृत्य चैत्यस्तवनेन त्रिः-परीत्य द्वितीयवारेऽप्युपविश्य आलोच्य पंचगुरुभक्ति-

कायोत्सर्गं करोमीति विज्ञाप्य उत्थाय पंचपरमेष्ठिनः स्तुत्वा तृतीयवारेऽप्युपविश्यालोचनीयः। एवमात्माधीनता, प्रदक्षिणीकरणं, त्रिवारं, निषण्णात्रयं, चतुःशिरो, द्वादशावर्तकमिति क्रिया कर्म षड्विधं भवति ॥

अनगार धर्मामृते—

श्रुतदृष्ट्यात्मनिस्तुत्यं पश्यन् गत्वा जिनालयं ।
कृतद्रव्यादिशुद्धिस्तं प्रविश्य निसही गिरा ॥१७॥
चैत्यालोकोद्यदानन्दगलद्बाष्पस्त्रिरानतः ।
परीत्य दर्शनस्तोत्रं वन्दनामुद्रया पठन् ॥१८॥
कृत्वेर्यापथसंशुद्धिमालोच्यानम्रकांघ्रिदोः ।
नत्वाश्रित्य गुरोः कृत्यं पर्यंकस्थोऽग्रमंगलं ॥१९॥
उक्तात्तसाम्यो विज्ञाप्य क्रियामुत्थाय विग्रहम् ।
प्रह्वीकृत्य त्रिभ्रमैक–शिरोवनतिपूर्वकम् ॥२०॥
मुक्ताशुक्त्यंकितकरः पठित्वा साम्यदण्डकं ।
कृत्वावर्तत्रय–शिरोनती भूयस्तनुं त्यजेत् ॥२१॥
······प्रोच्य प्राग्वत्ततः साम्यस्वामिनां स्तोत्रदंडकं।
वन्दनामुद्रया स्तुत्वा चैत्यानि त्रिःप्रदक्षिणं ॥२७॥
आलोच्य पूर्ववत् पंचगुरून् नत्वा स्थितस्तथा ।
समाधिभक्त्यास्तमलः स्वस्य ध्यायेद्यथाबलं ॥२८॥

तथा प्रतिष्ठापाठादि व संहिता शास्त्रोंमें भी नित्य संध्या क्रिया विधि में भी चैत्य पंचगुरु भक्ति का विधान

है। अतः इससे मालूम होता है कि श्रावकों की भी सामायिक देव पूजा पूर्वक ही होती है। यथा भावसंग्रहे "देवपूजां विना सर्वा दूरा सामायिकी क्रिया"।

जिनसंहितायां च—

कृतस्नानः सुधौतांघ्रिः प्रविश्य जिनमंदिरं।
त्रिःपरीत्याभिवंद्यातः प्रविश्य धौतवस्त्रयुक्॥
कृतेर्यापथशुद्ध्यादिर्विहितसकलीक्रियः।
......चैत्य भक्तिं ततः पंचगुरुभक्तिं ततस्ततः॥ इत्यादि

इसी प्रकार अकलंक प्रतिष्ठापाठ शास्त्रादि पूजासारादिमें भी चैत्य पंचगुरु भक्तिका विधान त्रैकालिक क्रिया पूजा विधिमें पाया जाता है।

अनगार धर्मामृत आदि शास्त्रोंके आधारसे पूर्वाह्न सामायिकका समय सूर्योदय पर होता है जिसकी विधि उपरोक्त चैत्य पंचगुरुभक्ति करके यथावकाश एक मूहूर्त तक ध्यान करना जाप करना आदि है। तथा—

क्लमं नियम्य क्षणयोगनिद्रया
लातं निशीथे घटिकाद्वयाधिके॥
स्वाध्यायमत्यस्य निशाद्विनाडिका।
शेषे प्रतिक्रम्य च योगमुत्सृजेन्॥ ७॥

भावार्थ—योगनिद्रासे कुछ शयन करके अनंतर त्रैरात्रिक स्वाध्यायको सूर्योदयके दो घडी अवशेष रहने

पर समाप्त करे पुनः प्रतिक्रमण करके योगि भक्ति द्वारा रात्रियोगका त्याग करे, इसमें दो घडी बीत जायेगी, अतः सूर्योदयसे लेकर दो घडी तक देव वन्दना करना चाहिये।

स्वाध्याय करने की विधि और काल

स्वाध्यायके लिये चार काल माने है जिस संबंधी १२ कायोत्सर्गकी गिनती आई है।

स्वाध्यायं श्रुतभक्त्यान्तं श्रुतसूर्योरहर्निशे।
पूर्वेऽपरेऽपि चाराध्य श्रुतस्यैव क्षमापयेत् ॥२॥

अर्थ—दिनके पूर्वाह्ण और अपराह्णमें तथा रात्रिके पूर्वरात्रि व अपर रात्रिमें लघुश्रुत भक्ति व आचार्य भक्ति पढकर स्वाध्याय प्रतिष्ठापन करे और स्वाध्याय करके लघुश्रुत भक्ति पढकर निष्ठापन करे।

ग्राह्यः प्रगे द्विघटिकादूर्ध्वं स प्राक्तश्च मध्याह्ने
क्षम्योऽपराह्ण पूर्वापररात्रेष्वपि दिग्मेषैव ।३।

अर्थ—प्रातः सूर्योदयके दो घडी पश्चात् "पौर्वाह्णिक" स्वाध्यायको प्रारंभ करके मध्याह्न कालकी दो घडी अवशिष्ट रहने पर स्वाध्यायका निष्ठापन करे तथा मध्याह्न की दो घडी बीत जाने पर "आपराह्णिक'

स्वाध्याय ग्रहण कर सूर्यास्तके दो घडी शेष रहने पर निष्ठापन कर देवे। तथैव सूर्यास्तसे दो घडी ऊपर होने पर "प्रादोषिक" स्वाध्यायको प्रारंभ कर अर्द्धरात्रिके दो घडी अवशिष्ट रहने पर निष्ठापन करे व अर्द्धरात्रिसे दो घडी ऊपर होने पर "वैरात्रिक" स्वाध्याय ग्रहण कर सूर्योदयके दो घडी पहले २ निष्ठापन कर देवे। इस प्रकार सामान्यतया यह स्वाध्यायका काल है। इन कालोंमे यथाशक्ति समयानुसार स्वाध्याय करना चाहिये एक वार के भी स्वाध्यायके न होने पर जो नित्य प्रति के २८ कायोत्सर्ग है उनकी त्रुटि हो जाती है।

पांच प्रकारके स्वाध्यायों में जो वाचना नाम का स्वाध्याय है उसके लिये द्रव्य क्षेत्र काल भाव ऐसी चार प्रकार की शुद्धि शास्त्रों में वतलाई है।

"द्रव्यादि शुद्धया हि अधीतं शास्त्रं कर्मक्षयाय
स्यादन्यथा कर्मवंधायेति भावः"

सुत्तं गणहरकहिदं तहेव पत्तेय बुद्ध कहिदं च।
सुद केवलिणा कहिदं अभिण्णदसपुव्व-कहिदं च ॥
तं पढिदुमसज्झाए ण य कप्पदि विरद-इत्थिवग्गस्स।
एत्तो अण्णो गंथो कप्पदि पढिदुं असज्झाए ॥
आराधण णिज्जुत्ती मरणविभत्ती असग्गह थुदीओ।

पच्चक्खाणावासयधम्मकहाओ य एरिसओ ॥

—मूलाचारे

अर्थ—गणधर कथित, प्रत्येक बुद्ध कथित, श्रुतकेवली प्रणीत तथा अभिन्न दस पूर्वी ऋषियों द्वारा प्रणीत शास्त्र सूत्र कहलाते हैं। इनको अस्वाध्याय कालमें द्रव्यादि शुद्धि रहित कालमें यतिजनों व आर्यिकाओंको नही पढ़ना चाहिये। तथा आराधना शास्त्र मरण समाधि के योग्य शास्त्र संग्रह शास्त्र व स्तुति प्रत्याख्यान आवश्यक क्रिया संबंधी शास्त्र व धर्म कथा आदि शास्त्रों को अस्वाध्याय कालमें भी पढ सकते हैं।

तथा—

दिण पडिमवीर चरिया तियाल जोगेसु णत्थि अहियारो
सिद्धांत रहस्साणवि अज्झयणं देस विरदाणं ॥३१२॥

—वसुनंदि श्रावकाचार

अर्थ—दिनमें प्रतिमायोग करना वीर चर्या आतापनादि त्रिकाल योग तथा सिद्धांत शास्त्र वा प्रायश्चित्त शास्त्रके पढ़नेका देशविरत ऐलक पर्यंतको अधिकार नहीं है आचारसार आदि शास्त्रों में द्रव्यादि शुद्धिका विशेप प्रकरण है वहींसे जान लेना चाहिये। यहां पर कुछ विशेप उद्धरण षट् खण्डागमके वेदना खण्ड का दिया जाता है। पृष्ठ २५४ से २५७ तक पुस्तक ४

अथ काल शुद्धि विधानं—तं जहा—

पच्छिम रत्तियसज्झायं खमाविय वहिं णिक्कलिय पासुए भूमिपदेसे काओसग्गेण पुव्वाहिमुहेण ठाइऊण णवगाहा परियट्टण कालेण पुव्वदिसं सोहिय पुणो पदाहिणेण पल्लट्टिय एदेणेव कालेण जम--वरुण--सोम दिसासु सोहिदासु छत्तीस गाहुच्चारेण कालेण [३६] अट्ठसदुस्सासकालेण वा काल सुद्धी समप्पदि [१०८]। अवरण्हे वि एवं चेव काल सुद्धी कादव्वा। णवरि एक्केक्कार दिसाए सत्त सत्त गाहा परियट्टणेण परिच्छिण्णा काला त्ति णायव्वा। एत्थ सव्व गाहापमाणमट्ठावीस २८ चउरादि उस्सासा ८४। पुणो अणत्थमिदे दिवायरे खेत्तसुद्धिं काऊण अत्थमिदे कालसुद्धिं पुव्वं व कुज्जा। णवरि एत्थ कालो वीसगाहुच्चारणमेत्तो २० सट्ठि-उस्सासमेत्तो वा ६०। अवरत्थे णत्थि वायणा

खेत्तसुद्धिकरणोवायाभावादो। ओहि मणप-ज्जवणाणीणं सयलंग सुत्तधराणं आगास-ट्ठिय चारणाणं मेरु--कुलसेलगब्भट्ठिय चार-णाणं च अवररत्तिय वायणा वि अत्थि। अवगय खेत्त सुद्धीदो।

अर्थ—पश्चिम रात्रिमें स्वाध्याय करके बाहर निकल कर शुद्ध प्रासुक भूमि प्रदेशमें कायोत्सर्गके द्वारा पूर्वाभि-मुख स्थित होकर नव वार णमोकार मंत्रको सत्ताईस उच्छ्-वास कालमें पढकर पूर्व दिशाकी शुद्धि करके, पुनः दक्षिण दिशा में भी नव वार मंत्रको २७ उच्छ्वास प्रमाण काल में पढ़कर इसी तरह नव २ वार मंत्र पूर्वक पश्चिम उत्तर दिशा की शुद्धि करे इस प्रकार ३६ मंत्रसे १०८ उच्छ्-वासोंके द्वारा पौर्वाह्णिक स्वाध्यायके लिये दिक् शुद्धि हुई।

विशेष—इस तरह दिक् शुद्धि कर प्रतिक्रमण व रात्रियोग निष्ठापन कर प्रातः सामायिक (देव वन्दना) होती है। अपराह्ण की शुद्धि इसी प्रकार है फर्क मात्र इतना है, कि एक एक दिशाओंमें सात २ मंत्रोंके उच्चारण से ८४ उच्छ्वास प्रमाण कालमें पौर्वाह्णिक स्वाध्यायके अनंतर अपराह्ण स्वाध्यायके हेतु दिक् शुद्धि होती है।

पुनः सूर्यके विद्यमान होते हुए अपराण्हिक स्वाध्याय निष्ठापन कर पूर्व रात्रिक स्वाध्यायके लिये दिक् शुद्धि करे जिसमें एक २ दिशाओंमें ५—५ मंत्र द्वारा ६० उच्छ्वासमें यह काल शुद्धि होती है। तथा अपर रात्रिमें सिद्धांत वाचना नही है क्यों कि क्षेत्र शुद्धि करने का उपाय का अभाव है। अवधिज्ञानी मनःपर्यय ज्ञानी सकल अंग और सूत्रको धारण करने वाले आकाशमें गमन करने वाले (ऋद्धिधारी) मेरु कुलाचलमें स्थित मुनियोंके अपर रात्रिक वाचना भी है क्यों कि क्षेत्र शुद्धि की इन्हें आवश्यकता नही है। इससे यह स्पष्ट है कि सिद्धांत शास्त्र षट्खण्डागमको छोडकर अन्य शास्त्रोंका स्वाध्याय पश्चिम रात्रिमें होता है।

कुछ उपयोगी श्लोक—वेदना खण्डे—

गमपटहरवश्रवणे रुधिरस्रावेऽगिनोऽतिचारे च।
दातृष्वशुद्धकायेषु भुक्तवति चापि नाध्येयम् ॥६२॥
तिलपृथुकलाजापूपादिस्निग्धसुरभिगंधेषु।
भुक्तेषु भोजनेषु च दावाग्निधूमे च नाध्येयम् ॥६३॥
योजनमण्डपमात्रे संन्यास विधौ महोपवासे च।
आवश्यकक्रियायां केशेषु च लुच्यमानेषु ॥६४॥
सप्तदिनान्यध्ययनं प्रतिषिद्धं स्वर्गगते सूरौ।
योजनमात्रे दिवसत्रितय त्वतिदूरतो दिवसं ॥६५

प्रमितिररत्निशतं स्यादुच्चारविमोक्षणाच्चितेराराात् ।
तनुसलिलमोचनेऽपि च पंचाशदरत्निरेवातः ॥६६॥
······पर्वसु नंदीश्वरवरमहिमादिवसेषु चोपरागेषु ।
सूर्याचन्द्रमसोरपि नाध्येयं जानता व्रतिना ॥१०६॥
अष्टम्यामध्ययनं गुरुशिष्यद्वयवियोगमावहति ;
कलहं तु पौर्णिमास्यां करोति विघ्नं चतुर्दश्यां ॥१०७॥
कृष्णचतुर्दश्यां यद्यधीयते साधवो ह्यमावस्यां ।
विद्योपवासविधयो विनाशवृत्तिं प्रयांत्यशेषं सर्वे ।१०८।
मध्याह्ने जिनरूपं नाशयति करोति संध्ययोर्व्याधिं ।
तुष्यंतोऽप्यप्रियतां मध्यमरात्रौ समुपयांति ॥१०६॥

इनका अर्थ नहीं दिया गया हैं। संस्कृतज्ञ तो समझ ही लेंगे हर एक सामान्यको सिद्धान्तोंके पढने पढानेका अधिकार भी नही है । फिर उनमें होने वाली शुद्धि अशुद्धि आदिका संबंध भी विद्वान साधु आर्यिकाओंसे ही रहता है । आचारसार में ज्ञानाचार के प्रकरण में भी स्वाध्यायके विषयमें बहुत ही स्पष्टीकरण है । सूत्र रूप सिद्धान्त शास्त्र आज कल षट्खण्डागम शास्त्र ही माने जाते हैं। अतः अन्य शास्त्रोंका स्वाध्याय अन्य चारों कालोंमें हर एक साधुओंको करने का अधिकार है ।

श्रावक-प्रतिक्रमण

जीवे प्रमादजनिताः प्रचुराः प्रदोषा,
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात्तदर्थममलं मुनिबोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोधनार्थम् ॥१॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु वेरं मज्झं ण केणवि ॥
रागबंधपदोसं च हरिसं दीणभावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे ॥
हा दुट्ठकयं हा दुट्ठचिंतियं भासियं च हा दुट्ठं ।
अन्तो अन्तो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो ॥
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराहसोहणयं ।
णिंदणगरहणजुत्तो मणवचकाएण पडिकमणं

एइन्दिय--बेइन्दिय--तेइन्दिय--चउरिंदिय--पंचेन्दिय
पुढविकाइय-आउकाइय-तेउकाइय--वाउकाइय--वणप्फदि-
काइय-तसकाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं

उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

दंसणवयसामाइयपोसहसचित्तरायभत्ते य ।
बंभारंभपरिग्गहअणुमणुमुद्दिट्ठ देसविरदेदे ।१।

एयासु जधाकहिदपडिमासु पमादाइकयाइचारसोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अरहन्तसिद्धआइरियउवज्झायसव्वसाहुसक्खियं सम्मत्तपुव्वगं सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु ।

देवसियपडिक्कमणाए सव्वाइचारविसोहिणिमित्तं पुव्वारियकमेण आलोयणसिद्धभत्तिकाउस्सग्गं करेमि ।

सामायिकदण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

चत्तारि मंगलं—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहु मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंत सरणं पव्वज्जामि सिद्धं सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारसकम्मभूमीसु जाव अरहन्ताणं भयवंताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं, सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं अन्तयडाणं पारयडाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंगचक्कवट्टीणं देवाहिदेवाणं, णाणाणं दंसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते! सामाइयं सव्वं सावज्जजोगं पच्चक्खामि, जावजीवं तिविहेण मणसा वचिया काएण ण करेमि ण कारेमि अण्णं करंतं पि ण समणुमणामि । तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहन्ताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

णमोकार ६ गुणिया । कायोत्सर्ग उच्छ्वास २७ ।

चतुर्विंशतिस्तव.—

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवलीअणंतजिणे ।
णरपवरलोयमहिए विहुयरयमले महापण्णे ॥१॥
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहन्ते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥२॥
उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चन्दप्पहं वन्दे ॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयंस वासुपुज्जं च

विमलमणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥४॥
कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं
वंदामि रिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ॥५॥
एवं मए अभित्थुआ विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया एए लोगोत्तमा जिणा सिद्धा
आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥७॥
चन्देहिं णिम्मलयरा आइच्चेहिं अहिय पयासंता ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥८॥
श्रीमते वर्धमानाय नमो नमितविद्विषे ।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥९॥

सिद्ध भक्ति

तवसिद्धे णयसिद्धे संयमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।२।
इच्छामि भंते ! सिद्धभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सा
लोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठवि
हकम्ममुक्काणं अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमत्थयम्मि पइ-
ट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं चरित्तसिद्धाण सम्म-
णाण–सम्मदंसण–सम्मचरित्तसिद्धाणं अदीदाणागद -
वट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि
पूजेमि वन्दामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-

लाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

आलोचना

इच्छामि भंते ! देवसियं आलोचेउं। तत्थ—
पंचु बरसहियाइं सत्त वि वसणाइं जो विवज्जेइ।
सम्मत्तविसुद्धमई सो दंसणसावओ भणिओ ॥१॥
पंच य अणुव्वयाइं गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि।
सिक्खावयाइं चत्तारि जाण विदियम्मि ठाणम्मि
जिणवयणधम्मचेइयपरमेट्ठिजिणयालयाण णिच्चं पि।
जं वंदणं तियालं कीरइ सामाइयं तं खु ।३।
उत्तममज्झजहण्णं तिविहं पोसहविहाणमुद्दिट्ठं।
सगसत्तीए मासम्मि चउसु पव्वेसु कायव्वं ॥
जं वज्जिजदि हरिदं तयपत्तपवालकंदफलबीयं।
अप्पासुगं च सलिलं सचित्तणिव्वत्तिमं ठाणं ॥
मणवयणकायकदकारिदाणुमोदेहिं मेहुणं णवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि गुणम्मि सो सावओ छट्ठो
पुव्वुत्तणवविहाणं णि मेहुणं सव्वदा विवज्जंतो।
इत्थिकहादिणिवित्ती सत्तमगुणबंभचारी सो ॥७।
जं किंपि गिहारंभं बहु थोवं वा सया विवज्जेदि।
आरंभणिवित्तमदी सो अट्ठमसावओ भणिओ ॥८॥
मोत्तूण वत्थमित्तं परिग्गहं जो विवज्जदे सेसं।
तत्थ वि मुच्छं ण करदि वियाण सो सावओ णवमो

पुट्ठो वा पुट्ठो वा णियगेहिं परेहिं सग्गिहकज्जे ।
अणुमणणं जो ण कुणदि वियाण सो सावओ दसमो १०
णवकोडीसु विसुद्धं भिक्खायरणेण भुंजदे भुजं ।
जायणरहियं जोग्गं एयारस सावओ सो दु ॥ ११ ।
एयारसम्मि ठाणे उक्किट्ठो सावओ हवे दुविहो ।
वत्थेयधरो पढमो कोवीणपरिग्गहो विदिओ ॥१२॥
तववयणियमावासयलोच कारेदि पिच्छ गिण्हेदि ।
अणुवहाधम्मज्झाणं करपत्ते एयठाणम्मि ॥ १३ ॥

इत्थ मे जो कोई देवसिओ अइचारो अणाचारो तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कम्मंतस्स मे सम्मत्तमरणं समाहिमरणं पंडियमरणं वीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

दंसणवयसामाइयपोसहसच्चित्तरायभत्ते य ।
बंभारंभपरिग्गह अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदेदे ॥ १ ॥

एयासु यथाकहिदपडिमासु पमादाइकयाइचारसोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

प्रतिक्रमण भक्तिः—

श्रीपडिक्कमणभत्ति—काउस्सग्गं करेमि—

णमो अरहंताणमित्यादि—थोस्सामीत्यादि ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ३॥

णमो जिणाणं ३, णमो णिस्सहीए ३, णमोत्थु दे ३, अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सममण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव ! सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताणं ! णिब्भय ! णिराय ! णिद्दोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग ! णिस्सल्ल ! माणमायमोसमूरण ! तवप्पहावण ! गुणरयण ! सीलसायर ! अणंत अप्पमेय ! महदिमहावीरवड्ढमाण ! बुद्धिरिसिणो चेदि णमोत्थु वे णमोत्थु वे णमोत्थु वे ।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केवलिणो ओहिणाणिणो मणपज्जयणाणिणो चउदसपुव्वंगामिणो सुदसमिदिसमिद्धा य, तवो य वारसविहो तवसी, गुणा य गुणवंतो य महारिसी तित्थं तित्थकरा य, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणीदा य, बंभचेरवासो बंभचारी य, गुत्तीओ चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ चेव मुत्तिमंतो य समिदीओ चेव समिदिमंतो य, ससमयपरसमयविदू खंति खवगा य, खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहियबुद्धा य बुद्धिमन्तो चेईयरूक्खाय चेईयाणि ।

उड्ढमहतिरियलोए सिद्धायदणाणि णमंसामि सिद्धिणिसीहियाओ अट्ठावपव्वे सम्मेदे उज्जंते चंपाए पावाए मज्झिमाए हत्थिवालियसहाए जाओ अण्णाओ का वि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि ईसिपब्भारतलगयाणं सिद्धाणं

वुद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरुआइ-रियउवज्झायाणं पव्व त्तित्थेर कुलयराणं चाउवण्णाय मम णसघा य भरतहेरावएसु दससु पंचसु महाविदेहेसु जे लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदे हं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्मि पडिलेहिय अट्ठकत्तरिओ तिविहं तियरणसुद्धो।

पडिक्कमामि भंते! दंसणपडिमाए संकाए कंखाए विदिगिंछाए परपासंडाण पसंसाए पसंथुए जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

पडिक्कमामि भंते! वदपडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदे वहेण वा बंधेण वा छेएण वा अइभारारो-हणेण वा अण्णपाणणिरोहणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२-१॥

पडिक्कमामि भंते! वदपडिमाए विदिए थूलयडे असच्चविरदिवदे मिच्छोवदेसेण वा रहोअब्भक्खाणेण वा कूडलेहणकरणेण वा णासापहारेण वा सायारमंत्रभेएण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-२ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिए थूलयडं थेणविरदिवदे थेणपओगेण वा थेणहरियादाणेण वा विरुद्ध रज्जाइक्कमणेण वा हीणाहियमाणुम्माणेण वा पडिरूवयववहारेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-३ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिवदे परविवाहकरणेण वा इत्तरियागमणेण वा परिग्गहिदापरिग्गहिदागमणेण वा अणंगकीडणेण वा कामतिव्वाभिणिवेसेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-४ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे खेत्तवत्थूणं परिमाणाइक्कमणेण वा धणधाणाणं परिमाणाइक्कमणेण वा दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण वा हिरण्णसुवण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा कुप्पभांडपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-५ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए पढमे गुणव्वदे उड्ढवइक्कमणेण वा अहोदिइक्कमणेण वा तिरियवइक्कम-

मणेण वा खेत्तउड्ढीएण वा समदिअंतराधाणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं २-६१

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए विदिए गुणव्वदे आणयणेण वा विणिजोगेण वा सद्दाणुवाएण वा रूवाणुवाएण वा पुग्गलखेवेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-७-२ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिए गुणव्वदे कंदप्पेण वा कुकुवेएण वा मोक्खरिएण व असमक्खियाहिकरणेण वा भोगोपभोगाणत्थकेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।२-८-३

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए पढमे सिक्खावदे फासिंदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा रसणिंदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा घाणिंदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा चक्खुदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा सवणिंदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-९-१ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए विदिए सिक्खावदे फासिंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा रसणिंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा घाणिंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा चक्खुंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा सवणिंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं २-१०-२ ।

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिए सिक्खावदे सचित्तणिक्खेवेण वा सचित्तापिहाणेण वा परउवएसेण वा कालाइक्कमणेण वा मच्छिरिएण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-११-३ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए चउत्थे सिक्खावदे जीविदासंसणेण वा मरणासंसणेण वा मित्ताणुराएण वा सुहाणुबंधेण वा णिदाणेण वा जो मए देवसियो अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-१२-४

पडिक्कमामि भंते ! सामाइयपडिमाए म [illegible]- णेण वा वायदुप्पणिधाणेण वा कायदुप्पणि[illegible] वा अणादरेण वा सदिअणुवट्ठावणेण वा जो मए [illegible]

अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमसेण्णादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।३।

पडिक्कमामि भंते ! पोसहपडिमाए अप्पडिवेक्खिया पमज्जियोस्सग्गेण वा अप्पडिवेक्खियापमज्जियादाणेण वा अप्पडिवेक्खियापमज्जियासथारोवक्कमणेण वा आवस्सयाणादरेण वा सदिअणुवट्ठावणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं । ४ ।

पडिक्कमामि भंते ! सचित्तविरदिपडिमाए पुढविकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया वीया अंकुरा छिण्णा भिण्णा एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।५।

पडिक्कमामि भंते ! राइभत्तपडिमाए णवविहबमचरियस्स दिवा जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।। ६ ।।

पडिक्कमासि भंते ! बंभपडिमाए इत्थिकहायत्तणेण वा इत्थिमणोहरांगणिरक्खणेण वा पुव्वरयाणुस्सरणेण

वा कामकोवणरसासेवणेण वा सरीरमडणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं । ७ ।

पडिक्कमामि भंते ! आरभविरदिपडिमाए कसायवसंगएण जो मए देवसिओ आरम्भो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं । ८ ।

पडिक्कमामि भंते ! परिग्गहविरदिपडिमाए वत्थमेत्तपरिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापरिणामे जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

पडिक्कमामि भंते ! अणुमणविरदिपडिमाए जं किंपि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदं वा कारिदं वा कीरंतं वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ १० ॥

पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठ विरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोसबहुलं अहोरदियं आहारयं आहारावियं आहारिज्जंतं वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं । ११ ॥

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं णेगाइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं सेढिमग्गं खंतिमग्गं मोत्तिमग्गं

पमोत्तिमग्गं मोक्खमग्गं णिज्जाणमग्गं णिव्वाणमग्गं सव्वदुक्खपरिहाणि मग्गं सुचरियपरिणिव्वाणमग्ग अवि-तहमविसंतिपव्वयणमुत्तम तं सद्दहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदो उत्तरं अण्णं णत्थि भूदं ण भयं णं भविस्सदि णाणेण वा दंसणेण वा चरित्तेण वा सुत्तेण वा इदो जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणं यंति सव्व दुक्खाणमंतं करंति परिवियाणंति समणोमि संजदोमि उवरदोमि उवसंतोमि उवधिणियडियमाणमाया मोसमूरण मिच्छणा मिच्छदंसणमिच्छचरित्तं च पडि-विरदोमि सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्णत्तो इत्थ मे जो कोई देवसिओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इच्छामि भंते! वीरभत्तिकाउस्सग्गं करेमि जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो काइओ वाइओ माणसिओ दुच्चरिओ दुब्भासिओ दुप्परि णामिओ णाणे दंसणे चरित्ते सुत्ते सामाइए एयारसण्हं पडिमाणं विराहणाए अट्ठविहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए अण्णहा उस्सासिदेण णिस्सासिदेण वा उम्मस्सिदेण णिम्मिस्सिदेण खासिदेण वा छिंकिदेण वा जंभाइदेण वा सुहुमेहिं अंगचलाचलेहिं दिट्ठिचलाचलेहिं एदेहिं सव्वेहिं असमाहिं पत्तेहिं आयारेहिं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जु-

वामं करेमि ताव कायं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

दंसणवयसामाइयपोसहसच्चित्तराइभत्ते य ।
बंभारंभपरिग्गहअणुमणुमुद्दिट्ठदेसविरदेदे ॥ १ ॥

वीरभक्तिकाउस्सग्गं करेमि—
(णमो अरहंताणमित्यादि, थोस्सामीत्यादि जाप्य ३६)

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्
पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ॥१॥

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिताः
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो,
वीरे श्रीद्युतिकांतिकीर्तिधृतयो हे वीर ? भद्रं त्वयि २

ये वीरमादौ प्रणमंति नित्यं ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः
ते वीतशोका हि भवन्ति लोके संसारदुर्गं विषमं तरन्ति ३

व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धो,
यमनियमपयोभिर्वर्धितः शीलशाखः ।
समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो
गुणकुसुमसुगन्धिः सत्तपश्चित्रपत्रः ॥ ४ ॥

शिवसुखफलदायी यो दयाछायगोधः
शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः ।

दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तभावं
स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥ ५ ॥
चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्चभेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥ ६ ॥
धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म मां पालय ॥७॥
धम्मो मंगलमुद्दिट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मो सया मणो ॥८॥
इच्छामि भंते ! पडिकमणाइचारमालोचेउं तत्थ देसासिओ आसणासिओ ठाणासिआ कालासिआ मुद्दासिआ काओस्सग्गासिआ पणामासिआ आवत्तासिआ पडिक्कमासिआ छसु आवासएसु परिहीणदा जो मए अच्चासणा मणसा वच्चिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।
दंसण-वय-सामाइय-पोसह सचित्त रायभत्ते य
बंभारंभ-परिग्गह-अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदो य ॥१॥
चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गं करेमि—
(णमो अरहंताणमित्यादि, थोस्सामीत्यादि)
चउवीसं तित्थयरे उसहाइ वीरपच्छिमे वंदे ।
सव्वेसिं गुणगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ १ ॥

ये लोकेष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः।
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिता—
स्तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहं

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं,
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगणवृषभं नन्दनं देवदेवं।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं,
क्षान्तं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चन्द्रनामानमीडे
विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं,
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यं।
मुक्तं दांतेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनींद्रं,
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यं
कुंथुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम्।
देवेन्द्राचर्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवांतं,
पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या

अंचलिका

इच्छामि भंते! चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहिदाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहिदाणं बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-

मुणिजइअणगारोवगूढाणं धुइसहस्सणिलयाणं उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिनगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-रायभत्ते य ।
बंभारभ-परिग्गह-अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदो य ॥१॥

श्री सिद्धभक्ति-श्रीप्रतिक्रमणभक्ति-श्रीवीरभक्ति-श्री चतुर्विंशतिभक्तिः कृत्वातद्धीनाधिकत्वादिदोषविशुद्ध्यर्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्—

(णमोकार ९ गुणिवा)

अथेष्टप्रार्थना-प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ २ ॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ३

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्तिहोउ मज्झं ।

इति श्रीश्रावकप्रतिक्रमणं समाप्तम् ।

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान् देशावधीन् सर्वपरावधींश्च
सत्कोष्ठबीजादिपदानुसारीन्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
संभिन्नश्रोत्रान्वितसन्मुनीन्द्रान्, प्रत्येकसम्बोधितबुद्धधर्मान्
स्वयंप्रबुद्धांश्च विमुक्तमार्गान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
द्विधा मनःपर्ययचित्प्रयुक्तान्, द्विपंचसप्तद्वयपूर्वसक्तान् ।
अष्टाङ्गनैमित्तिकशास्त्रदक्षान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
विकुर्वणाख्यर्द्धिमहाप्रभावान्, विद्याधरांश्चारणऋद्धि प्राप्तान्
प्रज्ञाश्रितान्नित्यखगामिनश्च स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
आशीर्विषान् दृष्टिविषान्मुनीन्द्रानुग्रातिदीप्तोत्तमतप्ततप्तान्
महातिघोरप्रतपःप्रसक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ५
वन्द्यान् सुरैर्घोरगुणांश्च लोके पूज्यान् बुधैर्घोरपराक्रमांश्च
घोरादिसंसद्गुणब्रह्मयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
आमर्द्धिखेलर्द्धिप्रजल्लविट्प्र–सर्वर्द्धिप्राप्तांश्च व्यथादिहंतॄन्
मनोवचःकायबलोपयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
सत्क्षीरसर्पिर्मधुरामृतर्द्धीन् यतीन् वराक्षीणमहानसांश्च ।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्प्रपूज्यान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान् श्रीवर्द्धमानर्द्धि विबुद्धिदक्षान्
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरानृषीन्द्रान् स्तुवेगणेशानपि तद्गुणाप्त्यै
नृसुरखचरसेव्या विश्वश्रेष्ठर्द्धिभूषा,
[illegible] [illegible] [illegible] ।नङ्गसिंहाः ।
भवजलनिधि [illegible]
मुनिग[illegible] श्रीसिद्धिदाः सदृषीन्द्रान् ॥१०॥

भूल सुधार

पृष्ट ७५ मे समाधि भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहं इसके आगे समाधिभक्ति के श्लोक आगे पीछे है सुधार कर पढ़ना चाहिये। समाधि भक्ति प्रतिज्ञा के नंतर सामायिक दण्डक कायोत्सर्ग स्तव करके इस तरह समाधि भक्ति पढे।

समाधिभक्ति

अथेष्ट प्रार्थना–प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।
शास्त्राभ्यासो जिनपति नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्‌वृत्तानां गुणगण कथा दोप वादे च मौनं
सर्वस्यापि प्रियहित वचो भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यंतां मम भवभवे यावदेते ऽपवर्गः ॥ १ ॥
जैन-मार्ग-रुचिरन्यमार्ग निर्वेगता जिनगुण स्तुतौ मतिः।
निष्कलंक विमलोक्ति भावना संभवंतु मम जन्म जन्मनि
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं
तिष्ठतु जिनेंद्र तावद् यावन्निर्वाण संप्राप्तिः।

३१ पृष्ठ पर सिद्धिं प्रयंच्छतु नः। से आगे अथपौर्वा''' आदि दण्डक पठेत् तक ४ लाइन पाठ अधिक है उसे छोड़ देवें।

पृष्ठ ११७ में नमोस्तु आचार्य वंदनायां से आगे प्रातः नमोऽस्तु इतना पाठ अधिक है उसे निकाल कर पढ़ें। पृष्ठ ४२ में—

रात्रिक प्रति क्रमण के नंतर योग भक्ति के बाद नमोऽस्तु आचार्य वंदनाया आचाय भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं बोलकर कायोत्सर्ग करके लघु आचार्य भक्ति पढ़ें।

पृ० ८८ पर १—नवमाभक्ति के पश्चात'''के नीचे अथ प्रत्याख्यानं''' का पाठ होना चाहिये।

दूसरा भाग यतिक्रिया मंजरी का
अशुद्धि शुद्धिपत्र

शुद्ध	शुद्ध	पृ०सं०
,र्घ	अथ	१६
ादौ	पादौ	३६
ारित्रि	चारित्र	३७
ेयाणवर्गीता	ज्ञेयार्णवातगीता	३८
नमावि	समाधि	४९
मवन्नि	भवाग्नि	४६
सास्र	सास्रव	५१
नि: त्रकर्णां	नि: स्रवर्णां	५१
निकेतं न	स्तवसमेतं	५३
ममो मिव वणासत	ममोघ मघप्रणाश	६२
यैता	यतौ	१०३
तस्त्र:	तिस्र:	१०३
गभर्दीणां	गथहीणां	१०४
नेरसविहो पदो	तरस विहो परिदाविदो	१०५
तईंदिथा	वेइंदिया	१०६
तइंदिया	तेईंदिया	१०६
चउरिंदिया	चउरिंदिया	१०६
पइट्टान्ते तृण पाण,	पइट्ठावंतेण पाण	११०
रेवकहाए	वेर कहाए	११०
दोया कुला:	होत्रा कुला:	११८
चार वर्णांव चम्भीरा,	चारित्रार्णवगभीरा	१२८
पइट्ठा वंतेतृण पाण	पइट्टावंतेग पाण	१२१

अशुद्ध	शुद्ध	पृ०सं०
धम्मयहं गियच्छे तस्यं-	धम्मपहं गियच्छे तस्सं-	
त्तिय वेणायियं यडजे	त्तियं वेणइयं पडंजे	११४
सभा डग पदाणि सत्तर	सभाडग पदाणि	
सदाप्पिम्भं धम्भं	सउत्त र पदाणि सम्मं धम्मा	१४४
चडरासीदि	चउरासीदि	१५२
चउम्मासिय	चउमासिय	१५०
जायणं	जपाण	१५५
पडमं तावं	पढमं ताव	१६३
पपोक्त	यथोक्त	१६६
चर्यान् भया	चर्यान भया	१७३
रयण राक्तयपुरुष	रयणत्तय रूरूप	१८३
परमज्झाणं	परमप्पज्झाण	१८३
आचार्यादि भी	आचार्यादि मिलकर	१८६
म्त्रिदशान्तं	स्त्रिदशानां	११०
उत्तरव्रती	उत्तर गुणधारीव्रती	२१४
म्फुरायमान	स्फुरायमान	२१५
एहे	हे	३६
सर्वद्यं	सर्वज्ञं	३६
महिणं	माहियाणं-	३६
(स्वप्ना यातीचार)	(स्वप्नातीचार)	८३
अंतर नवल	अन्तर केवल	८६
निःश्रेणिभूत	निःश्रेणिभूताः	१८

और भी दृष्टि जो अशुद्धियां रह गई हों विद्वज्जन सुधार कर पढे ।